## अध्ययन मण्डल

अध्यक्ष
कुलपति
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
1.प्रो0 अरविंद के जोशी, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
2.प्रो0 बी.मोहन कुमार, जी.बी.पंत कृषि व प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखण्ड

संयोजक
निदेशक समाज विज्ञान विद्याशाखा

## पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 दीपक पालीवाल, सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

| इकाई लेखन | इकाई संख्या |
|---|---|
| डॉ0 रेणू प्रकाश, समाजशास्त्र विभाग, एस0एस0जी परिसर कुमांऊ विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा | 1,3,5,7 |
| रजनी, समाजशास्त्र विभाग, पंजाब | 8,9 |
| तीर्थजनी पाण्डा, दिल्ली | 2,4,6,10 |
| **Translation of Units: Punit Chaturvedi** | **2,4,6,8,9,10** |

## संपादन

डॉ0 दीपक पालीवाल, सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

**कापीराइट** @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

**प्रकाशन वर्ष- 2020**

**प्रकाशन-** उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी- 263139

सर्वाधिक सुरक्षित। इस प्रकाशन का कोई भी अंश उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी

**MASO-601**

# नगरीय समाजशास्त्र।-
# Urban Sociology-I


| | | |
|---|---|---|
| **Block I** | **Urban Sociology and Cities** | |
| Unit 1: | Urban Sociology- Origin, Nature, Subject matter, Scope and Importance<br>नगरीय समाजशास्त्रः उत्पत्ति, प्रकृति, विषय वस्तु, क्षेत्र और महत्व | पृष्ठ–1–12 |
| Unit 2: | Methods and Tools of Urban Sociology<br>नगरीय समाजशास्त्र के माध्यम एवं साधन | पृष्ठ–13–26 |
| Unit 3: | Process of Urbanization in India<br>भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया | पृष्ठ–27–43 |
| **Block II** | **Basic Concepts of Urban Sociology** | |
| Unit 4: | The City, Functional Classification of Cities<br>नगर, नगरों का कार्याधारित वर्गीकरण | पृष्ठ–44–59 |
| Unit 5: | Urbanization, Urbanism, Urbanity<br>नगरीकरण, नगरीयता एवं नगरवाद | पृष्ठ–60–82 |
| Unit 6: | Suburb, Metropolitan, Corporation and Neighborhood<br>उपनगर, महानगर, निगम और प्रतिवेश | पृष्ठ–83–96 |
| **Block III** | **Cities & Urbanization in Historical Perspectives** | |
| Unit 7: | Urbanization in Developed and Developing Countries<br>विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण | पृष्ठ–97–114 |
| Unit 8: | Pre-industrial, Industrial and Post-Industrial and Colonial City<br>पूर्व औद्योगिक, औद्योगिक, उत्तर औद्योगिक एवं औपनिवेशिक नगर | पृष्ठ–115–129 |
| Unit 9: | Internal Structures of Cities: Star Theory, Sector theory and Multiple-Nuclei theory<br>नगरों का आंतरिक ढांचाः केंद्रीय क्षेत्र सिद्धांत, वर्गीकृत क्षेत्र, बहुल केंद्र सिद्धांत, स्टार सिद्धांत | पृष्ठ–130–140 |
| Unit 10: | Location of Cities: Central Place Theory, Specialized Functions, Urban primary and Rank- Size Rule<br>शहरों की अवस्थिति : केन्द्रीय स्थान सिद्धांत, विशिष्ट कार्य, नगरीय प्राथमिकता एवं श्रेणी–आकार नियम | पृष्ठ–141–158 |

## इकाई– 1

# नगरीय समाजशास्त्रः उत्पत्ति, प्रकृति, विषय वस्तु, क्षेत्र और महत्व
# (Urban Sociology: Origin, Nature, Subject Matter, Scope & Importance)

**इकाई की रूपरेखा**

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 नगरीय समाजशास्त्र का अर्थ एवं परिभाषाएं

1.4 नगरीय समाजशास्त्र की उत्पत्ति एवं विकास

1.5 नगरीय समाजशास्त्र की प्रकृति

1.6 नगरीय समाजशास्त्र की विषय वस्तु

1.7 नगरीय समाजशास्त्र का क्षेत्र

1.8 नगरीय समाजशास्त्र का महत्व

1.9 सारांश

1.10 अभ्यास/बोध प्रश्नों के उत्तर

1.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.12 निबंधात्मक प्रश्न

## 1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समझ सकेंगे।
1– नगरीय समाजशास्त्र का अर्थ, अवधारणा का स्पष्टीकरण वं परिभाषायें।
2– नगरीय समाजशास्त्र की उत्पत्ति वं विकास।
3– प्रकृति वं विषयवस्तु का स्पष्टीकरण।
4– नगरीय समाजशास्त्र का महत्व।

## 1.1 प्रस्तावना

जैसा कि हम सब जानते हैं नगरीय समाजशास्त्र एक नवीन विषय है, जो अनेक नगर तथा नगरीय समुदाय से सम्बन्धित है। नगरीय समुदाय की जीवन पद्धति, नगरीय जीवन, पारिवारिक व्यवस्था तथा सामाजिक सम्बन्धों का सविस्तार विश्लेषण करता है। यद्यपि नगरीय अध्ययन प्राचीन समय से ही एक प्रमुख विषय के रूप में प्रचलित रहा है, किन्तु 16वीं शताब्दी में इटली के विचारक गियोवानी बोटरो ने नगरों के अध्ययन को प्रारम्भ किया था। इसके पश्चात् पार्क तथा बर्गेस ने नगरीय समाजशास्त्र को आगे बढ़ाने में विशेष सहयोग प्रदान किया। पार्क की पुस्तक ''दि सिटी'' (1925)

तथा बर्गेस की ''दि अर्बन कम्युनिटी'' (1925) के प्रकाशन ने नगरीय समाजशास्त्र को स्थापित करने में अपनी प्रमुख भूमिका का निर्वह्न किया।

## 1.2 नगरीय समाजशास्त्र का अर्थ एवं परिभाषायें

प्रत्येक मानव समूह जिस समुदाय तथा जिस समाज में रहता है। उसका उसके व्यक्तित्व व्यवहार तथा जीवन स्तर पर विशेष प्रभाव पड़ता है। चूंकि मानव समाज का एक अभिन्न अंग माना जाता है। अतः उसके विभिन्न सामाजिक समूहों का उस पर विशेष प्रभाव पड़ता है। विभिन्न सामाजिक समूहों के अन्तर्गत ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्र तथा नगरीय तथा ग्रामीण पर्यावरण व संस्कृति का विशेष स्थान होता है। जिसका मानव के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक जीवन पर भी एक महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

नगरीय समाजशास्त्र वर्तमान समय में समाज शास्त्र की एक महत्वपूर्ण उपशाखा है। जिसके अन्तर्गत नगरीय जीवन, जीवन स्तर, विभिन्न सामाजिक घटनायें, सामाजिक समस्याओं तथा नगरीय सामाजिक क्रियाओं, सामाजिक सम्बन्धों, सामाजिक संरचनाओं का सम्पूर्ण वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है। नगरीय समाजशास्त्र को दो शब्दों 'नगरीय' तथा 'समाजशास्त्र' से समझ सकते हैं। 'नगरीय' शब्द का अर्थ नगरीय समुदाय जिसमें व्यक्ति, परिवार व सामाजिक सम्बंधों जो ग्रामीण समुदाय से विपरीत जीवन पद्धति वाला हो। समाजशास्त्र से तात्पर्य समाज विभिन्न सामाजिक संस्थायें तथा मानवीय सामाजिक सम्बनधों के अध्ययन से होता है। इस प्रकार नगरीय समाजशास्त्र से तात्पर्य नगरीय समाज में जीवन–यापन करने वाले लोगों के सामाजिक सम्बन्ध एवं उनके जीवन से सम्बन्धित अध्ययन से सम्बंधित है।

### नगरीय समाजशास्त्र की परिभाषाएँ–

1– एण्डरसन के अनुसार – ''नगरीय समाजशास्त्र कस्बों एवं नगरों में समाज और जीवन के ढंग से संबंधित है।''[1]

2– एल0 डब्ल्यू0 ब्राइस एवं बैंजामिन खान के अनुसार – ''नगरों का अध्ययन व उससे सम्बन्धित तमाम समस्याओं का अध्ययन समाजशास्त्र की एक नवीन एवं महत्वपूर्ण शाखा नगरीय समाजशास्त्र में किया जाता है। ये नगरीय समस्याएँ मानवीय समस्याएँ हैं और इनका हल मनुष्य के द्वारा मानवीय ढंग से ही होना चाहिए।''[2]

3–बर्गल के कथनानुसार, ''नगरीय सामाजिक क्रियाओं, सामाजिक सम्बंधों, सामाजिक संस्थाओं पर नगरीय जीवन के प्रभाव एवं नगरीय जीवन के ढंग पर आधारित और इससे विकसित सभ्यताओं के प्रकारों से सम्बंधित है।''[3]

4–इरिवसन –''एक सामाजिक वैज्ञानिक के रूप में नगरीय समाजशास्त्री उस सम्पूर्ण जटिल परिस्थिति एवं उन सभी अर्न्तसम्बंधों में रूचि रखता है, जो कि नगरीय सामाजिक जीवन का निर्माण करते हैं। यह नगरीय समग्र के किसी एक अंग में नहीं, अपितु सम्पूर्ण नगरीय समग्र का अध्ययन करता है।''[4]

5– हॉब हाउस–''नगरीय समाजशास्त्र नगर के जीवन और समस्याओं का विशिष्ट अध्ययन है।''[5]

6– लुइस वर्थ के अनुसार– ''नगरवाद एक विशेष प्रकार की जीवन पद्धति को कहते हैं।''

7– लॉरी नेल्सन के अनुसार– ''नगरीय समाजशास्त्र, नगरीय पर्यावरण में मनुष्यों और नगरीय समूहों के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन है।''[6]

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है कि अनेक समाजशास्त्रियों एवं विद्वानों ने नगरीय समाजशास्त्र को नगरीय जीवन एवं इससे सम्बन्धित विभिन्न सामाजिक समूहों के अध्ययन विषय के रूप में परिभाषित करने का प्रयास किया है।

वास्तव में नगरीय समाजशास्त्र मुख्य रूप से नगरीय समाज की अनेकों सामाजिक क्रियाओं, व्यक्तियों के मध्य सामाजिक सम्बन्धों, विभिन्न सामाजिक संस्थाओं नगरीय सामाजिक संरचनाओं एवं संस्कृति पर सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभावों के अध्ययन विषय से सम्बन्धित एक विषय है।

## 1.3 नगरीय समाजशास्त्र की उत्पत्ति एवं विकास

नगरीय समाजशास्त्र की उत्पत्ति एवं विकास की व्याख्या से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि वास्तव में नगर की स्थापना कब हुई? नगर की स्थापना के संदर्भ में कहा जाता है कि प्रौद्योगिक विकास, औद्योगिकीकरण तथा नगरीकरण के कारण नगरों का विकास हुआ। जनसंख्या वृद्वि तथा अधिक अन्न उत्पादन प्रणाली ने धीरे–धीरे ग्रामीण जीवन को खत्म करना प्रारम्भ कर दिया। साथ ही प्रौद्योगिक विकास व मशीनीकरण ने कार्य करने के दूसरों अवसरों को भी जन्म दिया। इसी प्रकार यातायात के बढ़ते अवसरों ने भी नगरों को विकसित करने में अपनी प्रमुख भूमिका का निर्वह्न किया है। राबर्ट मैक एडम्स ने अपने 'नगर के विकास निबंध' में इस तथ्य पर अत्यधिक बल देते है कि ''नगर विकास में सांस्कृतिक और सामाजिक परिवर्तन की निर्णायक भूमिका रही है, जिसका पर्यावरण में परिवर्तन से सीधा संबंध जोड़ना उचित नहीं है, बल्कि नई संस्थाओं का अभ्युदय और विविध सामाजिक इकाईयों की जटिलता नगरों के विकास में सहायक रही है।''[7]

इसी प्रकार राबर्ट एडम का कहना है कि, नगर और गाँव को आर्थिक–आधार पर अलग नहीं करना चाहिए, बल्कि आज किसी सीमा तक दोनों में साँस्कृतिक और पर्यावरणीण घनिष्ट सम्बन्ध है। इस आधार पर हम यह कह सकते हैं कि नगर और गाँव के मध्य अन्तर की कोई स्पष्ट रेखा खींचना आज दुरुह कार्य है। फिर भी इतना तो कहा जा सकता है कि गाँव की अपेक्षा नगरीय समाज में प्रकार्यात्मक रूप में दूसरों पर अधिक निर्भर रहता है।'[8]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि समाज में हो रहे निरन्तर परिवर्तन, प्रौद्योगिक विकास, औद्योगीकरण तथा आवागमन के सुलभ साधनों की नगरों के विकास में एक प्रमुख भूमिका है।

नगरीय समाजशास्त्र की उत्पत्ति तथा विकास के सन्दर्भ में यदि बात की जाये तो प्रसिद्व अमेरिकन समाजशास्त्री राबर्ट पार्क को नगरीय समाजशास्त्र का जनक कहा जाता है। सन् 1925 में राबर्ट पार्क की पुस्तक 'द सिटी' का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष बर्गेस की 'दि अर्बन कम्युनिटी' नामक पुस्तक का भी प्रकाशन हुआ, जिसने नगरीय समाजशास्त्र को विकसित करने का प्रयास किया।

नगरीय समाजशास्त्र के प्रारम्भिक अवस्था में यह विषय परिस्थितिशास्त्रीय अध्ययन से सम्बन्धित है, जिसमें प्रमुख रूप से नगरों की विभिन्न समस्याओं एवं समाज के प्रमुख स्वरूपों को अध्ययन किया जाता था। चूँकि 1925 ई0 से 1950 ई0 के मध्य अनेक समाजशास्त्रियों द्वारा नगरों से सम्बन्धित अनेक अध्ययन किये गये। अतः इस समय या काल को नगरीय समाजशास्त्र का विकास काल कहा गया। 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अमेरिका के शिकागो विश्द्यवविद्यालय में नगरीय समाजशास्त्र में

उल्लेखनीय कार्य हुए। जिसने नगरीय समाजशास्त्र को एक नयी दिशा देने का कार्य किया, जिसमें 1927–Redford, reading in Urban sociology, 1928 Anderson and lindman, Urban Sociology, 1929. Sorokin and zimmerman, Rural Urban Sociology, 1929, Lynd and Lynd, The Middle Town आदि पुस्तकों के प्रकाशन ने नगरीय समाजशास्त्र को आगे बढ़ाने में विशेष सहयोग प्रदान किया। इसके अतिरिक्त 1915–Graham R.Taylor, satellite cities, a study of industrial suburbs, 1925-mildred l. hart sough, The Twin cities as a matropolition Market 1933, R.d.Mackenzie The Metropolition community. 1937, Coluin F.Schmid, social Sage of the cities. पुस्तकों को प्रकाशन ने जो कि राजधानियों से सम्बंधित है, ने भी नगरीय समाजशास्त्र को समृद्ध करने में अपना विशेष सहयोग प्रदान किया। अन्य देशों की तुलना में भारत में नगरीय समाजशास्त्र का विकास धीमी गति से हुआ, किन्तु डॉ0 बी0 के0 आर0 वी0 राव के द्वारा विभिन्न नगरीय क्षेत्रों के अध्ययन ने इसे एक गति देने का प्रयास किया, जिसमें दिल्ली के फरीदाबाद, नीलीखीरी तथा राजपूरा क्षेत्र के अध्ययनों की विशेष भूमिका है। डॉ0 राव के अतिरिक्त भारत में नगरीय समाजशास्त्र को एक नयी दिशा देने डॉ0 टी0 आर0 गाडगिल, डॉ0 आई0 पी0 देसाई तथा डॉ0 जे0 एस0 घुरिये का नाम महत्वपूर्ण है।

अतः कहा जा सकता है कि नगरीय समाजशास्त्र एक विशेष विज्ञान के रूप में स्थापित हो रहा है तथा मानव के नगरीय जीवन से सम्बंधित प्रत्येक परिप्रेक्ष्य का इस अध्ययन में गहन अध्ययन किया जा रहा है।

## 1.4 नगरीय समाजशास्त्र की प्रकृति

नगरीय समाशास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक मानी जाती है, क्योंकि इसका अध्ययन वैज्ञानिक तरीके से क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित तरीके से किया जाता है। समाजशास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक क्यों है? इसे निम्नांकित आधार पर समझा जा सकता है।

**1) वैज्ञानिक पद्वति का प्रयोग–** नगरीय समाजशास्त्र के अध्ययन वैज्ञानिक पद्धतियों के आधार पर किये जाते हैं। तथ्यों का संकलन एवं स्पष्टीकरण तथा विभिन्न नियमों का अध्ययन वैज्ञानिक पद्धतियों जैसे–अवलोकन पद्धति, व्यक्तिगत जीवन अध्ययन पद्धति, सर्वेक्षण पद्धति, समाजमिति एवं प्रयोगात्मक पद्धति तथा वर्गीकरण एवं सारणीयन पद्धति द्वारा किया जाता है। जिससे अध्ययन में यथार्थ निष्कर्ष प्राप्त किया जा सके।

**2) सार्वभौमिक–**नगरीय समाजशास्त्र में सार्वभौमिकता का गुण पाया जाता है, क्योंकि इसके नियम सभी जगह व्याप्त है तथा सभी स्थानों में समान रूप से लागू किये जाते हैं। जैसे औद्योगीकरण तथा नगरीकरण से नगरों का विकास एवं विस्तार होता है तथा इससे आवास की समस्या एवं मलिन बस्तियों का निर्माण होता है।

**3) सिद्वान्तों का पुनः परीक्षण सम्भव–** नगरीय समाजशास्त्र में जिन सिद्धान्तों एवं तथ्यों का निर्माण किया जाता है। उनकी पुर्नपरीक्षा भी की जा सकती है, क्योंकि किसी भी सिद्वान्त या तथ्यों के निर्माण के पश्चात वैज्ञानिक पद्धतियों का उपयोग कर उन सिद्धान्तों की प्रमाणिकता को जानने के लिए उनकी पुनः सत्यता की परीक्षा करना सम्भव होता है।

**4) भविष्यवाणी–** नगरीय समाजशास्त्र के तथ्यों एवं सिद्धान्तों का निर्माण चूंकि वैज्ञानिक पद्धतियों का उपयोग करके किया जाता है, किन्तु इस समाजशास्त्र में भी भविष्य में होने वाले परिवर्तनों, विकास

की गति एवं प्रगति की भविष्यवाणी वर्तमान परिस्थितियों के आधार पर पर की जा सकती है। जैसे अत्यधिक तेजी से बढ़ते हुए मलीन बस्तियों के दुष्परिणामों एवं दुष्प्रभावों का नगरों पर पडने वाले प्रभाव की भविष्यवाणी की जा सकती है।

**5) यथार्थ निष्कर्ष पर आधारित–** नगरीय समाजशास्त्र में समाजिक तथ्यों को उनके मौलिक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। साथ ही प्राप्त तथ्यों के आधार पर सिद्धान्तों एवं नियमों का निर्माण किया जाता है।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि भौतिक विज्ञानों की तरह नगरीय समाजशास्त्र की प्रकृति पूर्णरूप से विज्ञान नहीं है, तथापि दिन–प्रतिदिन वैज्ञानिक पद्धतियों के प्रयोग से इसकी प्रकृति को अधिक से अधिक वैज्ञानिक बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

## 1.5 नगरीय समाजशास्त्र की विषय वस्तु

नगरीय समाजशास्त्र चूंकि एक नवीन विज्ञान है। अतः इसकी विषय वस्तु पर सविस्तार चर्चा करना आवश्यक हो जाता है। चूंकि नगरीय समाजशास्त्र नगरों एवं नगरीय जीवन के विभिन्न पक्षों की व्याख्या करता है। अतः नगरीय समाजशास्त्र की विषय वस्तु को निम्नांकित तीन आधारों पर स्पष्ट किया जा सकता है।

**1– परिचयात्मक विषय वस्तु–** परिचयात्मक विषय वस्तु के अन्तर्गत तीन प्रमुख भागों को सम्मिलित किया गया है।

**2– नगरीय परिस्थिति शास्त्र–** नगरीय परिस्थितिशास्त्र के अन्तर्गत नगरीय समुदाय के स्वरूप, समुदाय की संरचना, सामाजिक व्यवस्था एवं सांस्कृतिक व्यवस्था को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है।

**3– विश्लेषणातमक विषय वस्तु–** विश्लेषणात्मक विषयवस्तु के अन्तर्गत नगरीय समुदाय के विभिन्न पक्षों के अध्ययन को अध्ययन विषय में सम्मिलित किया है, जैसे– नगर की अवधारणा। उत्पत्ति, प्रकार पर्यावरण, संस्कृति, व्यवसाय, नगरीय जनसंख्या तथा नगरीय समुदाय, विशेषतायें तथा समुदाय की विवेचना एवं विश्लेषण, इसके साथ ही नगरीकरण, नगरीकरण की प्रक्रिया, प्रभाव, नगरवाद एवं नगरीय जीवन पद्धति आदि।

**4– सुधारात्मक विषय वस्तु–** सुधारात्मक विषयवस्तु के अन्तर्गत नगरीय व्याधिकी अर्थात् नगरीय समस्याओं के विश्लेषण एवं उपचार से सम्बंधित अध्ययन तथा नगरीय नियोजन के अन्तर्गत नगरों के पुनर्निर्माण एवं नियोजन में होने वाले सामाजिक परिवर्तन से संबंधित अध्ययन से सम्बंधित है। नगरीय समाजशास्त्र की विषय वस्तु को पार्क एवं बर्गेस ने तीन भागों में विभाजित किया है–

- **नगरीय परिस्थितिशास्त्र–** इसके अन्तर्गत मानव जीवन पर नगरीय भौगोलिक स्थिति, नगरीय पर्यावरण तथा संरचना के पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।
- **नगरीय सामाजिक संगठन–** नगरीय सामाजिक संगठन में नगरीय समुदाय, परिवार, पड़ोस, जातियाँ, विभिन्न प्रकार की संस्थायें जैसे– सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं मनोरंजनात्मक संगठन के स्वरूपों एवं उनके मध्य पाये जाने वाले सामाजिक संबंधों को अध्ययन विषय में सम्मिलित किया गया है।

- **नगरीय सामाजिक विघटन–** नगरीय समुदाय की विभिन्न समस्याओं जो नगरीय समाज को विघटित करता है जैसे–अपराध, वैश्यावृत्ति, बेराजगारी, भिक्षावृत्ति, मद्यपान, बाल अपराध, नशाखोरी, जुआ, पारिवारिक तनाव, संघर्ष तथा विवाह–विच्छेद आदि को नगरीय समाजशास्त्र की विषय वस्तु के रूप में अध्ययन किया जाता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नगरीय समाजशास्त्र में नगरीय जीवन के प्रत्येक परिप्रेक्ष्य जैसे नगरीय सामाजिक संरचना, सामाजिक नियंत्रण, सामाजिक परिवर्तन, नगरीकरण, औद्योगीकरण, पश्चिमीकरण, लौकिकीकरण, आधुनिकीकरण, नगरीय सामाजिक पुर्ननिर्माण एवं नियोजन तथा नगरीय समस्याओं को नगरीय समाजशास्त्र की अध्ययन विषयवस्तु में सम्मिलित किया गया है।

## 1.6 नगरीय समाजशास्त्र का क्षेत्र

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि नगरीय समाजशास्त्र एक आधुनिक सामाजिक विज्ञान है, जो नगरीय जीवन के विभिन्न परिप्रेक्ष्यों का अध्ययन करता है, जिसमें नगरीकरण, नगरवाद तथा नगरीय परिस्थितिशास्त्र प्रमुख है। वास्तव में नगरीय समाजशास्त्र मानवीय समाज के अतीत एवं भविष्य व भविष्य में होने वाले अनेकों परिवर्तनों का अध्ययन भी करता है। अतः आधुनिकीकरण की तरफ बढ़ते नगरीय जीवन को समझने के लिए यह विज्ञान अत्यंत महत्वपूर्ण है।

पार्क तथा बर्गेस ने नगरीय समाजशास्त्र के क्षेत्र को तीन तथ्यों के आधार पर स्पष्ट किया है–

**1– परिस्थितिशास्त्र–** नगरों में पायी जाने वाली भौगोलिक एवं प्राकृतिक परिस्थितियों का अध्ययन इसमें किया जाता है। पार्क और बर्गेस ने इसे दो भागों में बाँटा है–मानव परिस्थितिशास्त्र तथा सामाजिक परिस्थितिशास्त्र। आज दोनों समाजशास्त्रियों का मानना है कि परिस्थितियाँ प्रत्येक स्थान में एक समान नहीं होती हैं तथा परिस्थितियाँ प्रत्येक स्थान में एक समान नहीं होती हैं तथा परिस्थितियाँ मानव व्यवहार, जीवनशैली तथा सामाजिक सम्बन्धों को सर्वाधिक प्रभावित करती है।

**2– सामाजिक संगठन–** नगरीय समाजशास्त्र में सामाजिक संगठन एक महत्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र है। पार्क तथा बैंतस का मानना है कि नगरीय सामाजिक संगठन, ग्रामीण सामाजिक संगठन से पूर्णतया भिन्न है। अतः उनके बारे में जानना अत्यंत आवश्यक है। सामाजिक संगठन के अंतर्गत प्राथमिक तथा द्वितीयक समूह जो सामाजिक संगठन को व्यवस्थित रखने में अपना सहयोग देते हैं, को अध्ययन क्षेत्र में सम्मिलित किया गया है। इसके अलावा इसके अन्तर्गत विभिन्न वर्ग, परिवार, जाति, सामाजिक संस्थाएं, आर्थिक तथा मनोरंजनात्मक व राजनैतिक संस्थाओं का विस्तृत अध्ययन किया जाता है।

**3–सामाजिक विघटन–** नगरीय जीवन वृहद होने के कारण अनेक विघटन शक्तियों को बढ़ाने का कार्य करता है। अतः नगरीय समाजशास्त्र में विघटनकारी शक्तियों का अध्ययन किया जाता है। प्रमुख विघटनकारी शक्तियों मे जैसे–अपराध, मलिन बस्तियाँ, नशाखोरी, वैश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति, भ्रष्टाचार, पारिवारिक तनाव एवं संघर्ष व विवाह–विच्छेद आदि का अध्ययन नगरीय समाजशास्त्र के अंतर्गत किया जाता है।

पार्क तथा बर्गेस के अतिरिक्त अनेक समाजशास्त्रियों ने नगरीय समाजशास्त्र के अध्ययन क्षेत्र को अनेक भागों में विभक्त किया है–

**1– सामुदायिक जीवन का अध्ययन–** नगरीय समाजशास्त्र में नगर की सरंचना तथा नगरीय जीवन के सामाजिक संबंधों एवं कार्यात्मक विभाजन का अध्ययन किया जाता है

**2– संगठनात्मक पक्षों का अध्ययन–** नगरीय समाजशास्त्र के अन्तर्गत प्राथमिक तथा द्वितीयक सामाजिक संगठनों का सविस्तार अध्ययन किया जाता है।

**3– जीवन पद्धति का विश्लेषण–** नगरीय जीवन शैली नगरीकरण का परिणाम मानी जाती है जो पूर्णतया ग्रामीण जीवन शैली से विपरीत है। नगरीय जीवनशैली, वेशभूषा, व्यवहार करने का तरीका, भाषा शैली इत्यादि का अध्ययन नगरीय समाजशास्त्र के अंतर्गत किया जाता है।

**4– आर्थिक एवं राजनीतिक जीवन का अध्ययन–** नगरीय समाज में आर्थिक अर्थ व्यवस्था को सर्वोच्च स्थान दिया जाता है। जिसमें अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार उद्योग–धंधे होते हैं जिसके परिणामस्वरूप नगरीय गतिशीलता को बढ़ावा मिला है। इसी प्रकार नगर राजनीतिक केन्द्र होने के कारण नगरीय समाज के प्रत्येक परिप्रेक्ष्य को भी प्रभावित करता है। अतः नगरीय समाजशास्त्र में नगरीय आर्थिक तथा राजनीतिक जीवन का अध्ययन किया जाता है।

**5–नगरीय समस्याओं का अध्ययन–** नगर तथा नगरीकरण से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं का अध्ययन भी नगरीय समाजशास्त्र के अंतर्गत किया जाता है।

**6– सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन–** सामाजिक प्रक्रियायें, सामाजिक संगठन एवं समाज को व्यवस्थित रखने में अपनी प्रमुख भूमिका का निर्वहन करते हैं। नगरीय सामाजिक प्रक्रियाओं में सहयोगी, असहयोगी, विभेदीकरण तथा प्रतिस्पर्धा आदि प्रमुख हैं। जिन्हें नगरीय समाजशास्त्र के अध्ययन क्षेत्र में सम्मिलित किया गया है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नगरीय समाजशास्त्र का अध्ययन क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। जैसे–जैसे नगर, नगरों के आकार, सामाजिक संरचना, विभिन्न परिप्रेक्ष्य सामाजिक समस्याओं का क्षेत्र विस्तृत होगा, वैसे–वैसे नगरीय समाजशास्त्र का क्षेत्र भी विस्तृत होता जायेगा।

## 1.7 नगरीय समाजशास्त्र का महत्व

आधुनिक समाज विकास एवं प्रौद्योगिक विकास का द्योतक है और जैसे–जैसे नगरीकरण एवं औद्योगीकरण की प्रक्रिया में तीव्रता आती है वैसे–वैसे नगरीय समाजशास्त्र की उपयोगिता भी बढ़ती जाती है। ऐसा माना जाता है कि जैसे ही विकास की प्रक्रिया में तीव्रता आती है। वैसे ही समाज में अनेकों कई समस्यायें भी उत्पन्न होती हैं। अतः इन समस्याओं को समझने व निराकरण करने के लिए नगरीय समाजशास्त्र एक महत्वपूर्ण विज्ञान के रूप में उभर कर सामने आ रहा है।

नगरीय समाजशास्त्र के महत्व को निम्नांकित तथ्यों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है–

**1–विशिष्ट शाखा–**नगरीय समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की एक विशिष्ट शाखा है। जिसके अंतर्गत नगरीय तथा नगरीय परिस्थितियों में व्यक्ति तथा समाज के विभिन्न परिप्रेक्ष्यों का अध्ययन किया जाता है। जिनका अध्ययन किसी भी अन्य सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत नहीं किया जाता है।

**2–वैज्ञानिक अध्ययन–** नगरीय समाजशास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक है। अतः इसमें वैज्ञानिक अध्ययन पद्धतियों की सहायता से नगरीय सामाजिक समूह, संस्थायें, संगठन तथा संरचना का व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है।

**3–विभिन्न समस्याओं का अध्ययन–** नगरीय समाज एक जटिल समाज माना जाता है। जटिल समाज होने के कारण यहां अनेकों प्रकार की समस्यायें भी उत्पन्न होती रहती हैं। अतः नगरीय समाजशास्त्र के अंतर्गत इन समस्याओं का गहन अध्ययन किया जाता है। जिससे भविष्य में इन समस्याओं को सुलझाने में मदद मिल सके।

**4–नगर नियोजन में सहायक–** नगरों के विकास में नगर नियोजन का महत्वपूर्ण स्थान होता है। अतः नगरीय समाजशास्त्र इस दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है कि इसने नगरों की संरचना तथा उसे व्यवस्थित रूप प्रदान करके विकास की दिशा में अनेक नगर नियोजन की नीतियों की अध्ययन विषय में सम्मिलित किया गया है।

**5–प्रगति एवं विकास में सहायक–** नगरीय समाजशास्त्र के अंतर्गत नगरीय संरचना तथा नगरीय समाज के विभिप्न परिप्रेक्ष्यों का अध्ययन किया जाता है। जिससे उसमें परिवर्तन, विकास तथा प्रगति का भी समय–समय आंकलन किया जा सकता है।

**6–नगरीय परिवर्तन–** नगरीय समाजशास्त्र में नगरों में होने वाले विभिन्न परिवर्तनों का भी अध्ययन किया जाता है, जिससे नगरीय समाज में होने वाले परिवर्तनों को भी देखा जा सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि नगरीय समाजशास्त्र का अपना एक विशेष महत्व है, क्योंकि औद्योगिक विकास ने जहां एक ओर नगरों को विकसित करने में अपना विशेष योगदान दिया है। वहीं दूसरी ओर अनेक नगरीय समस्याओं को भी उत्पन्न किया है। अतः एक पृथक विज्ञान के रूप में नगरीय समाजशास्त्र इन सबका विस्तृत अध्ययन कर उन कारणों की भी व्याख्या करता है। जिससे भविष्य में होने वाले दुष्परिणामों से बचा जा सके।

## 1.8 सारांश

इस प्रकार सम्पूर्ण विवेचन से स्पष्ट होता है कि नगरीय समाजशास्त्र नगरों की संरचना, नगरीय समाज एवं जीवन स्तर के अध्ययन से संबंधित समाजशास्त्र की एक विशिष्ट शाखा है। नगरीय समाजशास्त्र की उत्पत्ति के विषय में यदि चर्चा की जाए तो यह विज्ञान अति प्राचीन विज्ञान नहीं है, बल्कि कई समाजशास्त्रियों ने तो इसे आधुनिक समय के अध्ययन के रूप में भी परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। नगरीय समाजशास्त्र के अध्ययन के महत्व को इस बात से भी समझा जा सकता है कि यह अध्ययन जहाँ एक ओर नगरीय समाज, संगठन, संस्थाएँ तथा समूहों का विस्तृत अध्ययन करता है। वहीं दूसरी ओर नगरीय जीवन से उत्पन्न होने वाले अनेकों समस्याओं को भी स्पष्ट करने का प्रयास करता है। जिससे प्रगति एवं विकास में होने वाली बाधाओं एवं दुष्परिणामों को भी भविष्य में दूर किया जा सके।

**बोध प्रश्न–01**

**रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–**

1–नगरीय समाजशास्त्र दो शब्दों..... तथा .....से मिलकर बना है।
2–समाजशास्त्र से तात्पर्य.....के अध्ययन से होता है।
3–नगरीय समाजशास्त्र.....में समाज और जीवन के ढंग से संबंधित है।
4–नगरवाद एक विशेष प्रकार की .....को कहते हैं।

**बोध प्रश्न–02**

**सत्य–असत्य**

1–प्रौद्योगिक विकास, औद्योगीकरण तथा आवगमन के सुलभ साधनों की नगरों के विकास में प्रमुख भूमिका है। सत्य/असत्य

2–21वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में अमेरिका के शिकागो विश्वविद्यालय में नगरीय समाजशास्त्र के सम्बन्ध में कार्य हुए। सत्य/असत्य

3–अन्य देशों की तुलना में भारत में नगरीय समाजशास्त्र का विकास धीमी गति से हुआ। सत्य/असत्य

4–नगरीय समाजशास्त्र की प्रकृति अवैज्ञानिक है। सत्य/असत्य

**बोध प्रश्न–03**

निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिये?

1–नगरीय समाजशास्त्र की विषयवस्तु के तीन आधारों को स्पष्ट करिये?

2–पार्क तथा बर्गेस की विषयवस्तु को स्पष्ट करे।

3–सामाजिक संगठन को स्पष्ट करिये?

## 1.9 अभ्यास एवं बोध प्रश्नों के उत्तर

**उत्तर बोध प्रश्न– 01**

1. नगरीय तथा समाजशास्त्र
2. समाजिक संस्थायें तथा मानवीय सामाजिक संबंधों
3. कस्बों एवं नगरों
4. जीवन पद्धति

**बोध प्रश्न– 02**

1. सत्य
2. असत्य
3. सत्य
4. असत्य

## 1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Nels Anderson, The Urban Community, P- 21
2. श्रीमती एल0डब्ल्यू ब्राइस एवं बेंजामिन खान, 'नगरीय समाजशास्त्र की प्रस्तावना', पृ0सं0 7
3. E.E.Bergal, urban sociology, p 3
4. E.G.Erickson, Urban Sociology, p-464
5. House, The Development of Sociology, p-338

6. Nels Anderson, The Urban Community, p -21

7. डॉ0 वी0 एन0 सिंह तथा जनमेजय सिंह, नगरीय समाजशास्त्र, पे0 नं0 09

8. उपरोक्त पे0 न.0 10।

## 1.11 निबंधात्मक प्रश्न

1–नगरीय समाजशास्त्र क्या है? परिभाषित कीजिए?

2–नगरीय समाजशास्त्र के विकास के बारे में आप क्या सोचते हैं?

3–नगरीय समाजशास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक है? स्पष्ट करिये।

4–नगरीय समाजशास्त्र के क्षेत्र तथा महत्व को स्पष्ट करिये।

इकाई– 2

# नगरीय समाजशास्त्र के माध्यम एवं साधन
# (Methods and Tools of Urban Sociology)

इकाई की रुपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 परिचय

2.2 शोध की कार्यनीति

2.3 नगरीय शोध के लिये विश्लेषण के स्तर और कार्य

2.4 आंकड़ों का संग्रहण एवं विश्लेषण

2.5 नगरीय विश्लेषण के अवधारणात्मक साधन

2.6 आंकड़ों के स्रोत और संसाधन

2.7 नगरीय शोध के लिये उपलब्ध संसाधन

2.8 शोध के अनिवार्य तत्व

2.9 शोध की उपयोगिता

2.10 निष्कर्ष

2.11 अभ्यास प्रश्न

2.12 सहायक अध्ययन

## 2.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद हम जान सकेंगेः

1. शोध के लिये जरूरी कदम और साधन कौन से हैं?
2. शोध कार्य के लिये आंकड़े जुटाने के तरीके और इसके लिये साधनों का उपयोग।
3. शोधकार्य के उपयोगी पहलू एवं समाज को लेकर इनकी प्रासंगिकता।

## 2.1 परिचय (Introduction)

बीते कुछ वर्षों में नगरीय शोधकार्य का महत्व न सिर्फ बढ़ा है, बल्कि इसे वैश्विक पहचान भी मिली है। 20वीं सदी के अंत में शहरों और उनके पर्यावरण के बीच अंतर्संबंध के बढ़ते महत्व के चलते नगरीय घटनाओं–कारकों को समझना बेहद महत्वपूर्ण हो गया (Henderson & Castells, 1987; King, 1990; Smith & Feagin, 1987). नगरीय प्रक्रिया स्थानिक और क्षेत्रीय से लेकर वैश्विक व्यवस्था तक किसी शहर को आकार देने और उसकी पुनर्स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। परिवर्तन की प्रक्रिया पर ही यह निर्भर होता है कि नगरीय क्षेत्र कैसा आकार पाता है और नगरीय कारकों–घटनाओं को लेकर हम क्या सोचते–समझते हैं। शोधकर्ताओं ने नगरीय क्षेत्रों (विशेषकर औद्योगिक देशों के) में तकनीक और सुरक्षा व्यवस्था की विश्वसनीयता, इनके क्रियान्वयन,

स्थानिक प्रतिबद्धता, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के प्रभाव, इन सभी बिंदुओं के अंतर्सम्बंध और इनसे मिलने वाले परिणामों के अध्ययन का प्रयास किया है। (Harvey, 1989; Sorokin, 1992). इन अंतर्सम्बंधों के स्पष्ट होने से हमें इन सवालों के जवाब आसानी से मिल जाते हैं:

1. शहरीकरण के विकासपरक पैटर्न क्या हैं?
2. नगरीय क्षेत्रों एवं वैश्विक अर्थव्यवस्था का संबंध।
3. शहरीकरण और लोगों के बीच बदलते संबंधों का पैटर्न।

इन सवालों के उत्तर तलाशने की कोशिश में शोधकर्ता निरंतर प्रयासरत रहे हैं और इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप विभिन्न शोध माध्यम (Research Methods) विकसित हुए जो डाटा विश्लेषण, सर्वेक्षण, नृवंशविज्ञान (Ethnography) पर आधारित हैं। इनके जरिये नगरीय घटनाक्रम का पूरा वर्णन आसानी से हासिल किया जा सकता है। (e.g., Gottdiener & Pickvance, 1991).

## 2.2 शोध की कार्यनीति (Strategy of Research)

रणनीतिक विचार का महत्व यह है कि इसके जरिये शोधवस्तु की संपूर्णता को समझना और इसके बाद व्यवस्थित दृष्टिकोण को अपनाते हुए कदम दर कदम आवश्यक जानकारियां जुटाकर शोध को पूर्ण किया जा सकता है। इस प्रक्रिया को पीछे की ओर सोचना कहा जाता है, यानी पहले संपूर्णता को जानना और फिर इस संपूर्णता को हासिल करने के लिये आवश्यक कदम बढ़ाना। इस प्रक्रिया में निम्नवत सूचनाओं, जानकारियों को जुटाना आवश्यक होता है:

1. शोध की प्रासंगिकता को परिभाषित करना
2. परिवर्तनशीलता की पहचान
3. विश्लेषण के विभिन्न स्तरों को समझना एवं इनके अंतर्संबंध
4. आंकड़ों के स्रोतों की पहचान
5. संग्रहीत आंकड़ों का मूल्यांकन
6. ऐसे स्रोतों की खोज, जिनके जरिये संसाधनों तक पहुंचा जा सके
7. ऐसे ठोस और आदर्श शोध प्रारूप की पहचान, जिनसे सशक्त निष्कर्षों तक पहुंचा जा सके
8. शोध से लाभान्वित होने वाले वर्ग की पहचान और वह तरीका, जिससे शोधकर्ता अपने निष्कर्षों को उनके समक्ष प्रस्तुत करने वाला है

## 2.3 नगरीय शोध के लिये विश्लेषण के स्तर और कार्य (Level of Analysis and Its Function in Urban research)

विश्लेषण के स्तर (Levels of Analysis) शोधकर्ता को नगरीय क्षेत्रों के स्थानिक अंतर्संबंध को स्थापित कर पाने में मदद करते हैं। नगरीय व्यवस्था में स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं वैश्विक स्तर पर सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक गतिविधियां अलग–अलग स्तरों पर संचालित होती रहती हैं। ऐसे में शोधकर्ता विश्लेषण के विभिन्न स्तरों को पदानुक्रम (Hierarchy) के हिसाब से तय कर समस्या का समाधान तलाश कर सकता है, जिसमें सरकार अथवा गैर सरकारी संगठन माध्यम हो सकते हैं। इस तरह हर स्तर समस्याओं को बेहतर ढंग से समझने और उनके निस्तारण के तरीकों को जान पाने में मददगार होता है। यह जरूरी है कि शोधकर्ता संपूर्ण शोधकार्य में हर स्तर के योगदान को भली–भांति जानता हो और उसे यह मालूम हो कि नगरीय घटनाक्रमों के विश्लेषण में कौन सा स्तर कितना उपयोगी होने वाला है तथा अलग–अलग स्तरों के बीच किस तरह जुड़ाव हो सकता

है। शोध का प्रारूप, आंकड़ों का संग्रहीकरण एवं विश्लेषण इस पर निर्भर करता है कि किसी विशेष शोध कार्य की कल्पना किस तरह की गयी है।

विश्लेषण के स्तर शोध प्रारूप, आंकड़ों के संग्रहीकरण एवं आंकड़ों के अध्ययन को केन्द्रित करने के साथ तीक्ष्ण भी बनाते हैं (Andranovich And Riposha, 2011). इससे विश्लेषण के विभिन्न स्तरों से चयन का भी अवसर मिलता है। यह प्रक्रिया शोधकर्ता को किसी समस्या अथवा मुद्दे को गहराई से समझने और विश्लेषण करने में मदद करती है। यह नगरीय घटनाक्रमों, मसलों, विषयों, मुद्दों के अध्ययन का महत्वपूर्ण साधन है, क्योंकि नगरीय घटनाएं विभिन्न कारकों (व्यक्ति, सरकारी संस्थान, छोटे–बड़े निजी हितधारक) की स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और वैश्विक क्रियाओं–प्रतिक्रियाओं का परिणाम होती हैं।

सामान्यतः जब लोग नगरीय (Urban) शब्द के बारे में विचार करते हैं तो मन में किसी शहर की तस्वीर उभरती है। ऐसे में जब हम घटनाओं को नगरीय घटनाओं की तरह देखते हुए इसके बहुआयामों को विशेष दिशा में सीमित करके देखते हैं तो यह सवाल उठता है कि क्या हम वास्तव में शहर को किसी नगर (City) के एक आयाम के तौर पर देख सकते हैं? निश्चित रूप से नगर ऐतिहासिक रूप से वह केन्द्रबिन्दु रहे हैं, जो नगरीय क्षेत्र को बांधकर रखते हैं। लेकिन, नगरीय विश्लेषण में नगरों पर ध्यान केन्द्रित करना वस्तुतः ठोस, परिपूर्ण और जानकारियों से समृद्ध अवधारणा के महत्वपूर्ण परिदृश्य को अनावश्यक रूप से प्रभावित करेगा। इसीलिये शोधकर्ता को यह सुझाव दिया जाता है कि वह नगरीय क्षेत्र को किसी नगर, प्रदेश, राष्ट्रीय नगरीकृत व्यवस्था और वैश्विक व्यवस्था के एक अंग के रूप में देखे।

## 2.4 आंकड़ों का संग्रहीकरण एवं विश्लेषण (Data Collection and Data Analysis)

विश्लेषण के स्तर का सीधा प्रभाव आंकड़ों के संग्रहीकरण एवं इनके विश्लेषण पर दिखता है। नगर स्तर पर संग्रहीत परिवहन, ढुलाई का आंकड़ा छोटे उद्यमियों के हित में परिवर्तन कर सकने में मददगार हो सकता है। अगर शोधकर्ता क्षेत्रीय (Regional) स्तर पर परिवहन संबंधी आंकड़े जुटा रहा है तो उसे लघु उद्योगों और इनकी वित्तीय स्थिति के साथ इनके पर्यावरणीय असर को भी देखना होगा। ऐसी स्थिति में आंकड़े क्षेत्रीय मानकों के अनुरूप, दूसरे क्षेत्रों से यातायात एवं इस सबकी वजह से वायु में पर्यावरणीय नुकसान के तौर पर होने वाले प्रभाव के आधार पर संग्रहीत किये जायेंगे। आंकड़ों का संग्रहीकरण एवं इनका विश्लेषण अलग–अलग हो सकता है।

इस लिहाज से दो बिंदु अमल में लाये जाने चाहिये। 1. कोई नगरीय मुद्दा विभिन्न स्थानिक स्तरों पर सामने आ सकता है, 2. अलग–अलग स्थानिक स्तर किसी विशेष नगरीय मुद्दे को समझने–जानने के लिये अलग–अलग अवसर प्रदान करते हैं, जो परस्पर संबंधित तो होते हैं, लेकिन उनके आयाम अलग हो सकते हैं। अब यहां दो विरोध भी सामने आते हैं। नगरीय शोध प्रक्रिया का आधार अकसर स्थानविहीन होता है, यह स्थानिक (Spatial) एवं अस्थायी (Temporal) रूप से समझाया जाता है। हालांकि, इसके जरिये विभिन्न विश्लेषणात्मक जरूरतों को समझ पाना भी संभव होता है। चूंकि अधिकतर नगरीय शोध समस्याओं पर आधारित होते हैं, ऐसे में विभिन्न स्तरों पर जाने और घटनाओं के विभिन्न आयामों को समझने के लिये अनुभव के आधार पर मान्यता देने में सावधानी रखना आवश्यक होता है। जब हम किसी विशेष मानक का विभिन्न स्तरों पर परीक्षण करते हैं और स्थानिक पैमाने पर पदानुक्रम के हिसाब से इसे स्थानिक से वैश्विक स्तर तक ले जाते हैं तो संबंधित मुद्दे–विषय की विविधता, प्रभाव, सघनता बदलते जाते हैं। ऐसे में शोधकर्ता के लिये यह

आवश्यक होता है कि वह शक्तियों (कारक, प्रक्रिया और पर्यावरण) की अवधारणा इस तरह बनाये रखे कि स्थानिक व्यवस्थाओं में विभिन्न पैमानों पर भी इनकी स्थिरता (Consistency) बनी रहे।

किसी विशेष शोध कार्य के दौरान अस्थायी रूप से विश्लेषण के विभिन्न स्तरों पर नगरीय घटनाक्रम बदलते हुए प्रतीत नहीं होते हैं। ये निरंतर प्रवाहमान और लंबे समय तक अपरिवर्तनीय महसूस होते हैं। अधिकतर आंकड़े देशांतर (Longitude) के बजाय किसी क्षेत्र में व्यापक प्रतिनिधित्व (Cross-Section) पर आधारित होते हैं, जो भविष्य में समस्या पैदा कर सकता है। इसकी निम्न वजहें हैं:

1. जब आंकड़ों का देशांतरीय विश्लेषण किया जाता है, लेकिन जिन आंकड़ों का इस्तेमाल किया गया है, वे उन सूचनाओं–जानकारियों पर आधारित हैं जो किसी समय पर एक ही स्थान से ली गयी थीं
2. जब शोधकर्ता नगरीय घटनाओं अथवा गतिविधियों की तस्वीरों को संग्रहीत कर लेता है, क्योंकि तात्कालिक घटना या गतिविधि की वीडियो उपलब्ध नहीं थी
3. यद्यपि इन तकनीकों का इस्तेमाल कई बार होता है, लेकिन देशांतरीय आंकड़ों की अनुपस्थिति के कारण आंकड़ों को दोबारा अर्जित कर पाना संभव नहीं होता

## 2.5 नगरीय विश्लेषण के अवधारणात्मक साधन (Conceptual Tools for Urban Analysis)

चूंकि शहर के जटिल सवालों को समझ पाना बेहद मुश्किल कार्य है, ऐसे में दो अन्य साधनों को गतिविधियों की पहचान और विश्लेषण के स्तरों पर सहायता के लिये इस्तेमाल किया जा सकता है: प्रावधान की अवधारणा एवं उत्पादन की अवधारणा। इनके जरिये शोधकर्ता जटिल से जटिल घटनाक्रमों को समझ सकते हैं, फ्रेमवर्क तैयार कर परिणाम प्राप्त कर सकते हैं।

1. **प्रावधान (Provisions):** लॉसवेल (Lasswell, 1938) की 'Manifold of Events' में ऐसी राजनीतिक प्रक्रियाओं का जिक्र है, जो समाज अथवा सरकार की संगठन और निर्णय–निर्धारण क्षमता को प्रभावित करते हैं और जिनका परिणाम जनमूल्यों की गिरावट के तौर पर सामने आता है। ऐसे में प्रावधान न सिर्फ सरकारी कार्रवाई को लागू करते हैं, बल्कि औपचारिक एवं अनौपचारिक पहुंच के स्रोतों, प्रतियोगिता एवं सहयोग के ढांचे के निर्माण, संगठन और संचार को स्थापित करते हैं। इससे शोधकर्ता को नगरीय शासन, विशेष केन्द्रों, गलियों में होने वाले अपराधों, गिरोहों के परीक्षण का अवसर मिलता है, ताकि वह स्थानिक, क्षेत्रीय स्तर पर इनके प्रभाव को समझ सके।

2. **उत्पादन (Productions):** इसका अर्थ निजी क्षेत्र के संगठनों और व्यापार संबंधी मामलों के निस्तारण के लिये इनके द्वारा अपनाये जाने वाले तरीकों से है। आज के दौर में उत्पादन का अर्थ सिर्फ निर्माण एवं सेवाओं से नहीं रह गया है, बल्कि इसका तात्पर्य उच्च विशेषीकृत सेवाओं, जैसे– वित्तीय सेवाएं, कानूनी सेवाएं, रियल एस्टेट, निर्माण संबंधी सेवाएं, विज्ञापन, बीमा आदि, के विकास और इसके लिये संचार–नियंत्रण जैसी उच्चस्तरीय सुविधाओं की उपलब्धता से है। सासेन (Sassen, 1991, pp. 325-326) बताती हैं कि उत्पादन नगरीय शोधकार्य का महत्वपूर्ण केन्द्र है, क्योंकि यह उत्पादन क्षेत्रों को उभारता है और नगरीय अनुक्रम में नगरों के अंतर्सम्बंधों को स्पष्ट करता है। इस आधार पर शोधकर्ता उत्पादन एवं उपभोग (Production and Consumption) की व्यवस्था का परीक्षण कर सकता है, इनके प्रभावों को समझ सकता है और नगरीय पदानुक्रम में इनकी स्थिति को स्पष्ट कर सकता है। अब हम यह जानेंगे कि ये अवधारणाएं विश्लेषण के अलग–अलग स्तर पर कैसे काम करती हैं:

**प्रतिवेश स्तर (Neighbourhood Level)**

स्थानिक पदानुक्रम के एक ओर के अंतिम छोर पर प्रतिवेशी स्तर प्रारंभ होता है। सामान्य स्तर पर देखें तो प्रतिवेश अथवा पड़ोस का अर्थ किसी व्यक्ति के अपने घर के आसपास रहने वाले अन्य लोगों का समूह है। (Herson & Bolland, 1990, p. 158). आम तौर पर परंपराओं, बाजार, सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों, घरों के प्रकार आदि के लिहाज से अड़ोस–पड़ोस में एकरूपता नजर आती है। लेकिन, जैसे ही यह मानक या आयाम बदलता है, हमें प्रतिवेशी समुदायों (Neighbourhood Communities) में अंतर दिखने लगता है। (Zehner & Chapin, 1974). इसके साथ ही हम गुणवत्तापरक जीवनस्तर के अस्तित्व को लेकर सावधान हो जाते हैं, जो पड़ोस के स्तर पर प्रावधानों को प्रभावित करता है।

किसी नगर पर पड़ने वाले दबाव के लिये उस नगर के पड़ोस की परिस्थितियां और क्षेत्र जिम्मेदार होते हैं (Yates, 1980, p. 178). किसी नगर का पड़ोस, दरअसल आर्थिक विकास के संघर्ष का स्थल होता है (Kantor & David, 1988, p. 244), काश्तकारों के संगठनों के बिन्दु और पड़ोसी गुट (Lawson, 1986) और नगरीय दंगे भी कई बार इनके परिणाम होते हैं। और स्पष्ट कहें तो प्रतिवेश यानी पड़ोस वह स्थान है, जहां सामुदायिक मूल्य किसी शहर पर स्थानीय शासन की ओर से लागू असंख्य नीतियों को प्रभावित करते हैं। हर दृष्टिकोण सलाह देता है कि प्रतिवेशी स्तर किसी नगरीय शशोध के लिये नगरीय सामाजिक एवं राजनीतिक प्रक्रियाओं को समझने के लिहाज से महत्वपूर्ण है। (Blakely, 1979; Green, 1985).

डाउन्स (Downs, 1981) इस बात पर जोर देते हैं कि प्रतिवेश स्तर पर अध्ययन के इच्छुक नगरीय अध्येताओं के लिये शोध की समृद्ध संभावनाएं उपलब्ध हैं। वह बताते हैं कि विश्लेषण के इस स्तर पर होने वाले उलझाव प्रावधानों को विश्लेषणात्मक अवधारणा की स्थापना के लिये महत्वपूर्ण बनाते हैं। डाउन्स के अनुसार प्रतिवेशी स्तर (Neighbourhood Level) तीन लक्षणों को उभारता है, 1. इसका समान स्थान या विस्तार (Common Space) अंतर्वैयक्तिक संवाद का केन्द्रबिन्दु है 2. यह नजदीकी संस्थानों (उदाहरणार्थ चर्च) के बीच संबंधों को बढ़ाता है, 3. इसमें समान पहचान (Common Identity) या समान सदस्यता (Common Membership) के गुण मिलते हैं। ये तीनों लक्षण हितों (Interests) की बुनियाद निर्मित करते हैं जो स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने की क्षमता का महत्वपूर्ण हिस्सा बन जाती है। प्रतिवेशी स्तर के भीतर और विभिन्न प्रतिवेशों के मध्य इन हितों का उतार–चढ़ाव (Ebb and Flow) प्रतिवेशों के संयोजन को प्रभावित करता है, जिसका अंतिम रूप से असर प्रतिवेशों के राजनीतिक, सामाजिक–सांस्कृतिक ढांचे पर पड़ता है (उदाहरण के लिये नगर स्तर पर).

कई प्रतिवेश (Neighbourhood) बीते कुछ दशकों में निरंतर और बेहद तेजी से होने वाले परिवर्तनों से गुजरे होते हैं। कुछ मामलों में प्रतिवेश में अब सिर्फ गरीब लोग ही बाकी रह जाते हैं तो कुछ में निर्माणकर्ता (Deveopers) पिछड़े इलाकों में जाकर वहां पहले से रहने वाले लोगों को हटाकर उच्च वर्ग को बसा देते हैं (Barry & Derevlany, 1987; Smith, 1979). छोनों ही

मामलों में सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक रूप से प्रतिवेश के गुण प्रभावित होते हैं। प्रतिवेश के लोग स्वयं को आपराधिक गतिविधियों से घिरा पाते हैं, उनके लिये गुणवत्तापरक जीवनस्तर महंगा और पहुंच से बाहर होता जाता है और स्थानीय शासन के स्तर पर भी उपेक्षित महसूस करते हैं। प्रतिवेशी जीवन में इस तरह के कारक सामाजिक संवाद की संभावनाओं को कम कर देते हैं (Herson & Bolland, 1990, p. 159). ऐसे में प्रतिवेश राजनीतिक संगठनों के लिहाज से बेहतर स्थान बन जाते हैं (Henig, 1982; Hiss, 1990; Williams, 1971).

प्रावधान प्रकिया में एक अन्य प्रतिकिया भी सामने आती है, जिसके तहत प्रतिवेशी स्तर के तंत्र में सुरक्षात्मक व्यवस्था, बहिष्कार जैसी बातों को बढ़ावा मिलता है। चहारदीवारी युक्त स्थानों पर निवासरत समुदायों से लेकर मुख्य सड़कों पर आधिपत्य, प्रतिवेशों से समन्वय, गलियों में अपराध आदि के उदाहरणों से इसे समझा जा सकता है (Herson & Bolland, 1990; Williams, 1971). हालांकि, हर तंत्र (Mechanism) एक–दूसरे से अलग होता है, फिर भी हर तंत्र अपने सदस्यों की एकजुटता (Cohesion) एवं प्रभावोत्पादकता (Efficacy) को बढ़ाने, सुरक्षित रखने के लिये व्यवस्थित होता है। अंततः नगरीय क्षेत्र में इस तरह के सांगठनिक ढांचे अपने–अपने संघर्ष को राजनीतिक स्वरूप प्रदान कर विकास कार्यों पर नियंत्रण का प्रयास करते हैं। उदाहरण के लिये 125 प्रतिवेशों के सामूहिक संगठन Neighborhood Open Space Coalition ने अटलांटिक महासागर से न्यूयॉक के लांग द्वीप तक 40 मील लंबा बाइक एवं पैदलपथ सफलतापूर्वक तैयार किया, जिसे ब्रुकलिन क्वीन्स ग्रीनवे (Hiss, 1990) कहा जाता है। नीतियों को लेकर ऐसा समन्वय (जिसकी जरूरत अमेरिका के इस सबसे सघन नगरीय क्षेत्र में थी) नगरीय अधिकारियों और निर्माणकर्ताओं के बीच लंबे संघर्ष के बाद सामने आया, क्योंकि निर्माणकर्ताओं के मन में इस भूक्षेत्र के लिये कुछ अन्य योजनाएं थीं।

प्रतिवेशों को हम किसी नगर में विविधता वाला क्षेत्र मान सकते हैं। विभिन्न प्रतिवेश बड़े नगरीय स्वरूप के छोटे हिस्से का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो इनमें रहने वाले लोगों के अलग–अलग मुद्दों, जरूरतों को प्रदर्शित करते हैं। प्रतिवेशों के मुख्य मुद्दों को आसानी से पहचाना जा सकता है। इनमें नशे की समस्या, सार्वजनिक शिक्षा की गुणवत्ता और स्तर, युवाओं के लिये अवसर, पुलिस–समुदाय के संबंध, स्थानीय व्यवसायों में निवेश, दूसरे प्रतिवेश से स्पर्धा (कुलीन वर्ग के विकास या आवासीय सुविधाओं के बेहतर विकास एवं उपलब्धता के लिहाज से), स्वास्थ्य सुविधाओं और सेवाओं की उपलब्धता और नागरिकों तक इनकी आसान पहुंच, यातायात–परिवहन सुविधाएं एवं आवासीय सुविधाओं का अभाव आदि प्रमुख हैं। निम्न सूचक (Indicators) वे उदाहरण हैं, जिनके जरिये इन समस्याओं और मसलों को मात्रात्मक रूप से हल किया जा सकता हैः

1. जनसांख्यिकीय सूचक
2. निवासियों की आय एवं संपत्ति का मूल्य
3. आवासीय भंडार (स्वामित्व वाले मकानों की संख्या, किरायेदारी वाले भवन एवं ऐसे भवनों की संख्या, जो खाली हों अथवा जर्जर–खंडहर हो चुके हों)
4. हाईस्कूल तक शिक्षा दर
5. आपराधिक आंकड़े
6. नागरिक संबंधों की संख्या एवं प्रकार
7. नगरीय परिषदों की बैठकें और निर्णय

जनसंख्या के आंकड़े से इतर संघीय शासन के ढांचे से निम्न बिंदुओं से आंकड़े लेने में सहायता मिलती हैः

1. नगर निकायों की बैठकों के कार्यवृत्त (Minutes)
2. नगरीय निकायों के कार्यालयों के दस्तावेज (Records)
3. प्रतिवेशी संगठनों की वार्षिक रिपोर्ट
4. लोकपाल (Ombudsman) कार्यालय के ज्ञापन या स्मृतिपत्र (Memorandum)
5. समाचार, मीडिया (बड़े समाचार पत्रों के साथ स्थानीय स्वामित्व वाले अखबार और अन्य समाचार साधन)
6. नगर नियोजन विभाग के क्षेत्रवार नक्शे
7. प्रतिवेशों में निवेश के दस्तावेज और इनके लक्ष्य
8. मतदान के आंकड़े

**नगर (The City)**

नगर वह नगरीय स्थान हैं, जो नगरीय विश्लेषण प्रक्रिया में सबसे अधिक ध्यानाकर्षित करते हैं। इसकी वजह है कि वे ही शासन और प्रशासन के केन्द्र होते हैं। यहां परीक्षण के मुख्य मुद्दे स्वास्थ्य सुविधा, शिक्षा, पुलिस एवं अग्निशमन सेवाएं, आवास, अपराध, नशा, रोजगार और कर आधारित होते हैं। ऐसे में यह प्रश्न उठता है कि नगरीय स्तर पर नगरीय प्रक्रिया को किस तरह विश्लेषित किया जाये? आज के जीवन में नगर इतने आम हो गये हैं कि इनसे होने वाला मेल–जोल इनकी जटिलताओं को छिपा लेता है। इसका एक कारण बहुकेन्द्रित नगरीय स्थानों का विकास भी है, जिससे नगर विभिन्न विशेष स्थानिक नगरीय केन्द्र वाला बन जाता है (e.g., Knox, 1991).

नगर को विश्लेषण के स्तर पर उपयोग करने से पहले इसको परिभाषित करना आवश्यक होता है, जिसके बाद ही अवधारणात्मक साधनों को इसके विभिन्न आयामों, कार्यशैली और नगरीय स्थानिक पदानुक्रम में इसकी भूमिका के विश्लेषण में लगाया जा सकता है। इससे शोधकर्ता के लिये नगर के जटिल सामाजिक संगठन को कम कर छोटे व्यवस्थित हिस्सों में बांटकर देखना संभव हो पाता है, ताकि वह अपेक्षित परिणाम हासिल कर सके। नगर को परिभाषित कर पाने में एक बड़ी समस्या यह है कि यह किसी एक विशेष वर्गीकरण में ही नहीं देखा जा सकता, बल्कि यह सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक प्रतीकों का एक जाल जैसा है (Herson & Bolland, 1990). इस तरह नगर सांस्कृतिक गतिविधियों, आर्थिक उद्यमों, सामाजिक ताने–बाने के केन्द्र हैं। यह सब नगर को उस विशेष गुण की ओर ले जाता है, जो इसे अन्य नगरीय क्षेत्रों से अलग करता है और वो यह है कि– नगर शासन और प्रशासन का केन्द्रबिन्दु हैं।

नगर आर्थिक उत्पादन एवं सामाजिक–आर्थिक ढांचे में उपभोग के भी महत्वपूर्ण बिन्दु हैं (Tabb & Sawers, 1984). पूंजी के उपनगरों, अन्य क्षेत्रों की ओर जाने को लेकर भले ही बहस का विषय बना रहता हो, लेकिन नगर उत्पादक सेवा केन्द्रों (वित्तीय एवं कानूनी सेवाएं), भारी एवं हल्के निर्माण उद्यमों, गोदामों और वितरण केन्द्रों के लिये पहली पसंद बने रहते हैं। नगरों और देश के बीच उत्पादन का यह संबंध नया नहीं है, अमेरिकी आर्थिक विकास में नगर औपनिवेशिक दौर से ही केन्द्र रहे हैं (Benjamin, 1984), और वैश्विक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का विकास भी आधुनिक महानगरों से ही हुआ है (Gordon, 1984). अब भी स्थानिक प्रारूपों में बदलाव और पूंजीवादी

अर्थव्यवस्था के संबंधों, परिवर्तन से उत्पादन की सहूलियत मिलती है (for richer discussions of this transition, see Gordon, 1984; Riposa & Dersch, 1992; Smith & Feagin, 1987; Tabb & Sawers, 1984). अर्थव्यवस्था में इन बदलावों और नगरों पर इनके प्रभावों को समझने के बाद शोधकर्ता श्रम विभाजन के स्थानिक तरीकों (Patterns) का परीक्षण कर सकता है। तुलनात्मक अध्ययन के लिये नगरों को वर्गीकृत किया जा सकता है (Riposa & Andranovich, 1988), और नगरों के प्रतिवेश, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक परिस्थितियों में योगदान को लेकर निष्कर्ष हासिल किये जा सकते हैं। उत्पादन के आयाम पर नगर स्तर में किये जाने वाले विश्लेषण में निम्न अवधारणात्मक प्रश्न सामने आते हैं:

1. अर्थव्यवस्था में किसी शहर की भूमिका क्या है (उत्पादक अथवा उपभोगकर्ता)?
2. नगर का स्थानिक स्वरूप अर्थव्यवस्था में इसकी भूमिका के आधार पर कैसे बदलता है (उदाहरण के लिये सेवा प्रदाता, उत्पादन–निर्माणकर्ता, कानूनी सेवा प्रदाता या प्रशासनिक केन्द्र)
3. नगरों के मध्य आर्थिक जुड़ाव कौन–कौन से हैं?
4. नगरों में रहने वाले लोगों (रोजगार, आवास एवं आय) और समुदाय (स्कूल एवं अन्य सेवाएं) पर क्या प्रभाव होते हैं?

फिर भी, उत्पादन की अवधारणा को अधिक बल देना शोधकर्ता को परिणामों–निष्कर्षों के तकनीकी अथवा आर्थिक निर्धारण की ओर ले जा सकता है, क्योंकि नगरीय परिवर्तनों को मुख्यतः इन्हीं स्वरूपों में वर्णित किया जाता है। व्यापक विश्लेषण के लिये जरूरी है कि नगरीय परिवर्तनों को प्राकृतिक समझने के बजाय इनका सामाजिक संघर्ष के परिणाम के तौर पर विश्लेषण किया जाये (Gottdiener, 1986; Tabb & Sawers, 1984). नगरीय विश्लेषण में एकीकृत दृष्टिकोण का अभाव शोधकर्ता को ऐसे परिणाम की ओर ले जा सकता है, जहां यह सामने आये कि राजनीति नगरीय नीति निर्माण में महत्व नहीं रखती है, पीटरसन के नगरीय आर्थिक विकास नीति के विश्लेषण में सामने आया ऐसा निष्कर्ष बहस का विषय रहा है (Peterson, 1981; Stone & Sanders, 1987).

उत्पादन के प्रावधान संबंधी आयामों और इनके संबंधों को समझने के लिये नगर के आर्थिक हितों और समूहों का परीक्षण आवश्यक होता है। इसमें न सिर्फ औपचारिक प्रभावी समूहों को शामिल किया जाना चाहिये, बल्कि उन प्रशासनिक संस्थाओं को भी शामिल करना चाहिये, जो स्थानीय नीतियों को तैयार और लागू करती हैं।

## 2.6 आंकड़ों के स्रोत एवं संसाधन (Data Sources and Resources)

आंकड़ों का संग्रहीकरण कई बार सरल होता है, लेकिन कई बार इसके लिये किसी छोटी सी जानकारी से ही रहस्यों को सुलझाकर विस्तृत तथ्य हासिल करने होते हैं (the knack of Sherlock Holmes for unraveling a mystery from the smallest clue-Andranovich And Riposha, ibid). इसके अलावा नगरीय आंकड़ों के स्रोतों की जानकारी, तथ्य निकालने के लिये उत्सुकता, रचनात्मकता भी शोधकर्ता में होना आवश्यक है। हालांकि, शोधकर्ता जिस भी सिद्धांत से जुड़ा हो या जिसके अनुरूप शोध कर रहा हो, उसके अनुसार ही

आंकड़े संग्रहीत करने की प्रक्रिया अपना सकता है। यहां यह ध्यान रखना जरूरी है कि अलग–अलग तरीके भी सही तरीकों से लागू किये जायें तो समान रूप से परिणामदायक होते हैं।

यद्यपि शोधकर्ता के लिये तब आंकड़ों के संग्रहीकरण के सभी स्रोतों को सूचीबद्ध करना अथवा आंकड़ों से संबंधित संसाधनों को तलाश कर पाना बेहद मुश्किल हो जाता है, जब वह समयबद्ध शोध पर काम कर रहा हो। शोधकर्ता को उन पुस्तकों की जानकारी होनी चाहिये, जो सरकारी आंकड़ों का कोष होती हैं और अपने क्षेत्र के उन संसाधनों की भी जानकारी उसे होनी चाहिये जो नगरीय आंकड़े उपलब्ध कराते हैं (उदाहरण के लिये भारत में वीवी गिरी की लेबर इंस्टीट्यूट आंकड़ों के लिहाज से बेहतरीन है). यहां यह जानना भी जरूरी है कि इन संसाधनों और स्रोतों से कई संकेत शब्द (Key words) भी मिलते हैं, जो शोध को आगे बढ़ाने में मदद करते हैं। हालांकि, शोध के दौरान वैकल्पिक रणनीति रखना भी उपयोगी होता है, ताकि स्रोतों के संबंध में त्वरित संदर्भ मिल सकें, जिनसे शोध के दौरान सामने आने वाले सवालों के जल्द जवाब मिलें और वे आंकड़ों के संग्रहीकरण में सहयोगी हो सकें। पहला कदम विश्वविद्यालयी अथवा सार्वजनिक पुस्तकालय से जुड़ना होता है, इसके बाद लाइब्रेरियन की मदद से सन्दर्भ सूची पाकर सामान्य नगरीय सूचनाएं–जानकारियां, संसाधन और स्रोत तलाशे जा सकते हैं।

## 2.7 नगरीय शोध के लिये उपलब्ध संसाधन (Resources Available for Urban Research)

आंकड़ों के स्रोत और संसाधनों की स्थानीय स्तर पर प्रचुर उपलब्धता शोधकार्य को निरंतर आगे बढ़ाने के लिये बहुत जरूरी है। शोध के स्थानीय सामान्य उद्देश्य (नगर और देश), महानगरीय (नगर निकाय, प्रशासन एवं विशेष केन्द्र) और विशिष्ट उद्देश्य जैसे स्कूल, पानी, सीवर व्यवस्था हो सकते हैं। सरकारी स्रोत आंकड़ों के सबसे बड़े और विश्वसनीय स्रोत माने जाते हैं। हालांकि, आधिकारिक तौर पर उपयोग किये जाने वाले अधिकतर आंकड़े संघीय सरकार (Federal Government) द्वारा एकत्र किये जाते हैं, लेकिन कई बार स्थानीय स्तर पर तैयार की जाने वाली विशेष रिपोर्ट भी खास मुद्दों के संबंध में बेहतर जानकारी देती हैं, जिनमें स्थानीय लोगों से जुड़े सर्वे, फोकस ग्रुप आदि शामिल होते हैं, लेकिन ये जानकारियां आसानी से कहीं भी उपलब्ध नहीं होतीं। इसी तरह सूचनाओं के अहम स्रोत सरकारी नाम–सूची एवं टेलीफोन नंबर निर्देशिकाओं (Directories) को हर कोई व्यक्ति नहीं देख सकता है। शोधकर्ता के लिये टेलीफोन भी जानकारियां हासिल करने का अहम स्रोत हो सकता है। इसके अलावा जब सरकारी कार्यालय से आंकड़े हासिल करने हों तो सूचना का अधिकार अधिनियम (RTI) भी अच्छा विकल्प है। इनके अलावा स्थानीय निकाय, स्वयंसेवी संस्थाएं (NGO), सरकार द्वारा सहायतित, गैर सहायतित संस्थाएं भी आंकड़ों के मुख्य स्रोत होते हैं। कई सामाजिक–सामुदायिक संस्थाएं शरणार्थियों, सामुदायिक समस्याओं, आवासीय सुविधाओं आदि को लेकर सर्वे करती हैं और आंकड़े जुटाती हैं।

लेकिन, जब प्रतिवेशी क्षेत्रों में अपराध, पुलिस सुरक्षा, शिक्षा, आर्थिक अवसर, जीवनस्तर की गुणवत्ता जैसे विशिष्ट मुद्दों पर आंकड़े जुटाने हों तो शोधकर्ता के लिये स्थानीय, प्रतिवेशी, राष्ट्रीय स्तर पर संसाधनों की तलाश करना जरूरी होता है। पेशेवर संस्थाएं (Proffessional Associations) भी आंकड़े जुटाने का महत्वपूर्ण स्रोत हैं। ऐसी संस्थाएं भी टेलीफोन डायरेक्टरी जैसे साधन तैयार करती हैं जो सरकारी डायरेक्टरी के समान ही उपयोगी होती हैं। कई बार शोधकर्ता को शोध के उद्देश्य की पूर्ति के लिये व्यावसायिक एवं वाणिज्यिक आंकड़ों को जुटाना जरूरी हो जाता है, जिसके लिये स्थानीय चैंबर ऑफ कॉमर्स जैसे संस्थान उपयोगी हो सकते हैं। इनके vykok स्थानीय समाचार

पत्र भी आंकड़ों को जुटाने में मददगार हो सकते हैं। निष्पक्ष आंकड़े जुटाने के लिये शोधकर्ता को समाचार पत्रों के जरिये स्थानीय स्तर पर सामने आने वाले विवादों, खुलासों को छोड़कर सिर्फ आंकड़ों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिये। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि आंकड़ों के ये स्रोत शोधकर्ता को बेहतर जानकारियां जुटाने के लिये कई अन्य संसाधनों की पहचान करने में भी मदद करते हैं।

## संघीय स्रोत (Federal Sorces)

संघीय सांख्यिकीय व्यवस्था में नगरीय नियोजन विभाग, जनगणना ब्यूरो, संक्रामक रोग नियंत्रण विभाग, श्रम विभाग, अर्थ एवं संख्या विभाग, नेशनल सेंटर फॉर हेल्थ स्टेटिस्टिक्स, सेंटर फॉर स्टेटिस्टिक्स, ब्यूरो ऑफ जस्टिस स्टेटिस्टिक्स आदि संस्थानों की ओर से आंकड़ों की जानकारी प्रकाशित की जाती है, जो शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, रोजगार, व्यापार जैसे मसलों पर नगरीय आंकड़ों का बड़ा स्रोत हैं।

## राज्य एवं स्थानीय निकाय स्रोत (State and Local Government Sources)

अधिकतर राज्यों में स्थानीय शासन समिति विभिन्न संस्थानों की शाखाओं के जरिये सरकारी मुद्दों की निगरानी और क्रियान्वयन करती हैं। ऐसे में शोधकर्ता के लिये इन समितियों तक पहुंच उपयोगी हो सकती है। टेलीफोन डायरेक्टरी से इन तक पहुंचने का रास्ता मिल सकता है। इन संस्थानों से जुड़े कर्मचारी, अधिकारी आंकड़े जुटाने में मदद कर सकते हैं, यहां शोधकर्ता के लिये जरूरी होता है कि वह संबंधित कार्यालयों से मिलने वाली रिपोर्ट, नियम, प्रावधान, निर्देशों संबंधी दस्तावेजों के पहचान क्रमांक (Identification Number) अनिवार्य रूप से पूछ ले। ये दस्तावेज अन्य स्रोतों की पहचान और उन तक पहुंचने में सहायक हो सकते हैं। यदि शोधकर्ता को यह स्पष्ट नहीं है कि कौन सा कार्यक्रम कौन से संस्थान के तहत संचालित होता है तो इसके लिये राज्य संस्थानों संबंधी डायरेक्टरी से जानकारी ली जा सकती है।

सार्वजनिक बैठकें (Public Meetings) भी आंकड़े जुटाने का अहम स्रोत हैं, क्योंकि यहां निर्णय और निर्धारण किये जाते हैं। यह न सिर्फ निर्बाध आंकड़े उपलब्ध कराती हैं, बल्कि महत्वपूर्ण दस्तावेज, बैठकों के मिनट्स यानी कार्यवृत्त, कार्यसूची (Agenda) भी यहां मिलते हैं। कई महानगरीय इलाकों में नागरिक सुझाव समितियों के जरिये सार्वजनिक बैठकों में जरूरी निर्णय लिये जाते हैं। स्थानीय निकायों से इन नागरिक समितियों की भी जानकारी मिल सकती है। इस तरह विभिन्न स्रोतों से मिलने वाले आंकड़े शोध को सटीक निष्कर्ष तक पहुंचाने में सहयोग करते हैं।

शासन के क्षेत्रीय परिषद (Regional Councils of Government) भी नगरीय मुद्दों से जुड़े आंकड़ों के स्रोत हैं, विशेषकर शिक्षा, जीवनस्तर, पर्यावरण, आवासहीनता, आर्थिक विकास से जुड़े मसले इनमें शामिल होते हैं। अधिकतर क्षेत्रीय परिषदों की अपनी शोधशाखाएं होती हैं, जो योजनाओं और नीतियों के निर्माण का लक्ष्य पूरा करने के लिये नियमित रूप से विभिन्न विभागों से समन्वय कर शोध करते हैं। ये शोधशाखाएं नियमित बुलेटिन, कार्यसूची, रिपोर्ट आदि जारी करते हैं, जिनसे शोधकर्ता को बड़ी मदद मिल सकती है। इनकी रिपोर्ट में भौगोलिक परिस्थितियों से जुड़ी जानकारियां भी स्पष्ट होती हैं, उदाहरण के लिये सुविधा संबंधी योजनाओं पर दी जाने वाली रिपोर्ट

में स्थान विशेष की अवस्थिति (Location) संबंधी विस्तृत जानकारी मिलती है, इसी तरह व्यापार–आर्थिक रिपोर्ट में बाजार के विश्लेषण होते हैं। इन रिपोर्ट में शोधकर्ता के लिये बहुत उपयोगी नक्शे भी न्यून अथवा नगण्य मूल्य पर उपलब्ध हो जाते हैं।

भारत में योजना आयोग और अमेरिका में अमेरिकन सोसायटी फॉर पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन जैसे संस्थान क्षेत्रीय स्तर पर भी अपनी शाखाएं संचालित करती हैं। इस तरह की संस्थाएं भी शोधकर्ताओं को अहम आंकड़े मुहैया करा सकते हैं। उदाहरण के लिये भारत में केंद्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय वार्षिक 'ईयर बुक' का प्रकाशन करता है, इसमें सन्दर्भ सूची के तौर पर आपातकालीन प्रबंधन, सार्वजनिक निवेश और कई अन्य बिंदुओं से जुड़े स्रोत आसानी से मिल जाते हैं। अमेरिका में सर्वे करने वाले सदस्यों की आंकड़ों पर आधारित संक्षिप्त टिप्पणियां किसी नगरीय मुद्दे पर दृष्टिकोण को विकसित करने में मदद करती हैं। इसी तरह अन्य देशों में भी शोध संस्थानों की गाइड प्रकाशित होती हैं। उदाहरण के लिये लंदन में Directory of Professional Associations का प्रकाशन गेल डायरेक्टरी करती है, जो सर्वसुलभ होती है।

**अन्य गैर लाभधारी संस्थाएं (Nonprofit Organizations)**

इस तरह की संस्थाएं भी नगरीय शोध के बड़े संसाधन हैं। फोर्ड फाउंडेशन, डब्ल्यूके कैलॉग, जॉन डी एवं कैथरीन टी मॅकआर्थर फाउंडेशन, मॅकनाइट फाउंडेशन, सोशियल साइंस रिसर्च काउंसिल जैसे कई संस्थान क्षेत्र, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि मुद्दों पर जानकारियां संग्रहीत करते हैं। इन संस्थानों द्वारा जुटाये जाने वाले आंकड़े और रिपोर्ट किसी नगर और प्रतिवेश से जुड़े अहम विषयों पर जानकारियों के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। उदाहरण के लिये लीग ऑफ वुमैन वोटर्स हर साल 'अर्बन ब्रीफ्स' नाम से रिपोर्ट प्रकाशित करता है, जिसमें सरकारी आंकड़ों और रिपोर्ट का भी समावेश होता है।

**वाणिज्यिक स्रोत (Commercial Sources)**

नगरीय क्षेत्रों में वाणिज्यिक–व्यापारिक आंकड़ों और सूचना स्रोतों का भी बड़ा महत्व है (see Stewart, 1984). इस स्तर पर आंकड़े जुटाने के दो मुख्य स्रोत चैंबर ऑफ कॉमर्स और दैनिक समाचार पत्र हैं। चैंबर ऑफ कॉमर्स किसी नगर या क्षेत्र के व्यापारिक समुदाय की धड़कन मानी जा सकती है, लिहाजा इसे प्राथमिक सूचना स्रोत के तौर पर ही देखना चाहिये।

चैंबर्स अकसर आंकड़ों संबंधी पुस्तकों, रिपोर्ट का प्रकाशन करते हैं, जिनसे शोधकर्ता को अवस्थापना ढांचे, रोजगार, शिक्षा, व्यापारिक गतिविधियों, श्रम संबंधी आवश्यक जानकारियां मिल सकती हैं। चैंबर्स के कार्य –जो आम लोगों के लिये खुले नहीं होते– वे 'बिजनेस लीडर्स' को जानने का अवसर प्रदान करते हैं। इसके अलावा रियल एस्टेट बोर्ड, व्यापारिक संगठनों, सार्वजनिक–निजी उपक्रमों की सीमित रिपोर्ट से भी आंकड़े जुटाने में मदद मिल सकती है। अन्य सामान्य व्यापारिक आंकड़े आम लोगों के लिये सीमित रूप से समाचार पत्र, रियल एस्टेट बोर्ड, सार्वजनिक–निजी उपक्रमों समेत विभिन्न माध्यमों से उपलब्ध हो जाते हैं। अधिकतर पुस्तकालयों में प्रतिष्ठित दैनिक समाचार पत्रों को संग्रहीत रखा जाता है। इसी तरह अखबार और अन्य मीडिया माध्यम भी प्रमुख खबरों को दस्तावेजी स्वरूप में संजोकर रखते हैं। पत्रकारों से संपर्क कर शोधकर्ता अखबारों के कार्यालयों से जानकारियां ले सकते हैं।

**शैक्षिक स्रोत (Academic Sources)**

शैक्षिक शोधों के बेहतरीन संसाधन आसानी से उपलब्ध होते हैं। *Social Science Index* (SSI) एवं *Public Affairs Index Service* (PAIS) विभिन्न आलेखों, किताबों, सरकारी दस्तावेजों, शोधकार्यों की सूची उपलब्ध कराते हैं (see Stewart, 1984). विभिन्न शैक्षिक प्रकाशन नगरीय मुद्दों के संबंध में निबंधों–शोधकार्यों की शृंखला प्रकाशित करते हैं (e.g., the University of Kansas Press and the State University of New York Press). कुछ विश्वविद्यालय नगरीय मुद्दों को लेकर विशेष कार्यक्रम चलाते हैं, जिनके लिये शोध इकाइयां भी बनायी जाती हैं। ये इकाइयां विभिन्न स्तरों पर शोध, विश्लेषण करती हैं जो शोधकर्ता के लिये विशेष उपयोगी हो सकते हैं। आंकड़े जुटाने का एक हालिया प्रयास Fiscal Austerity and Urban Innovation (FAUI) परियोजना है, जिसका मकसद दुनियाभर से तुलनात्मक रूप से पुष्ट आंकड़े जुटाना है। वर्ष 1982 में आरंभ हुई इस परियोजना में अब तक 36 देशों के आंकड़े शामिल किये जा चुके हैं। अमेरिका के ऐन आर्बर, मिशीगन में इसके आंकड़े Inter-University Consortium for Social and Political Research (see I- UCSPR, 1988) के जरिये उपलब्ध हैं। (see Clark, 1990; Clarke, 1990).

## 2.8 शोध के आवश्यक तत्व (Some Essentials Of Research)

यहां हम ऐसी कुछ अनिवार्य शर्तों के बारे में जानेंगे, जो बेहतर शोधकार्य के लिये आवश्यक हैं:

### नमूने लेना (Sampling)

शोधकार्य का सबसे महत्वपूर्ण तत्व यानी आंकड़ों का संग्रहीकरण दरअसल नमूनों यानी सैंपल के ढांचे पर निर्भर करता है (see Fowler, 1988). कुछ मामलों में शोध करवाने वाला ही शोधकर्ता को लक्षित जनसंख्या की सूची देता है, जिससे सैंपलिंग आसान हो जाती है, लेकिनऐसा नहीं होता है तो शोधकर्ता सैंपलिंग के लिये मतदाता सूची, पेशेवर संगठनों की डायरेक्टरी, सामुदायिक–सामाजिक संगठनों की सदस्यता, उपस्थिति पंजिकाओं, जनसुविधाओं के आंकड़े आदि से इसके लिये मदद ले सकता है। अगर ऐसी कोई संभावना भी नहीं मिल पाती तो शोधकर्ता को स्वयं के तरीकों से सैंपल का ढांचा तैयार करना होता है। इसके लिये वह लक्षित जनसंख्या का अनियमित–अक्रमबद्ध चयन (Random Selection) कर सकता है।

### साधन/दस्तावेज (Instrumentation)

किसी सर्वेक्षण को पूरा करने के लिये साधनों की बहुत आवश्यकता होती है। शोधकार्य में सर्वे करने से पहले उन प्रश्नों को सूचीबद्ध करना जरूरी होता है, जो लक्ष्य को पूरा करने के लिये जरूरी मानकों का उत्तर दे सकें। इसके साथ ही ऐसे दस्तावेज भी उपलब्ध कराने चाहिये जो शोधकार्य को पेशेवर प्रदर्शित करने में सक्षम हों और लक्षित समुदाय, जनसंख्या का भी ध्यानाकर्षित कर सकें। प्रश्न इस तरह के होने चाहिये जो अस्पष्ट या भटकाव वाले न हों। ऐसी परिस्थिति में साधन और दस्तावेज लक्षित समूह को ध्यान केन्द्रित कर पाने में मदद करते हैं।

### सर्वेक्षण मूल्य (Survey Costs)

आंकड़े जुटाने के लिये किया जाने वाला सर्वेक्षण खासा महंगा हो सकता है। बजट का अधिकतर हिस्सा डाक, प्रश्नसूची के प्रकाशन, टेलीफोन, डाटा एंट्री, साधन जुटाने, आंकड़ों के विश्लेषण के लिये जरूरी उपकरण जुटाने और कई बार यात्रा करने में भी व्यय होता है। ऐसे में शोधकार्य के लिये सुनियोजित व्यय नियंत्रण रखना जरूरी है।

### समयबद्धता (Scheduling)

शोधकर्ता के लिये सर्वेक्षण कार्य और आंकड़ों के संग्रहीकरण में होने वाली देरी का पूर्वानुमान लगाना आवश्यक है। यदि शोधकर्ता के सहकर्मियों को थोड़ा बहुत अनुभव है तो भी यह मानकर चलना चाहिये कि आंकड़े जुटाने में निर्धारित समय से 125 से 150 फीसदी तक अधिक समय लग सकता है (Warwick & Lininger, 1975, p. 35). छुट्टियां, सामाजिक और नगरीय कार्यक्रम भी सर्वेक्षण कार्य पर असर डालते हैं। ऐसे में काल्पनिक समयसीमा तनाव और मानसिक परेशानियां बढ़ा सकती हैं, जिसके चलते शोध करवाने वाले और शोधकर्ता के बीच भी इसलिये स्थिति बिगड़ सकती है कि निर्धारित आंकड़ों का संग्रहीकरण तय समयसीमा में नहीं हो पा रहा है या नहीं हो सका (Hedrick et al., 1992). सर्वे रिसर्च से विस्तृत एवं समग्र परीक्षण के लिये व्यवस्थित आंकड़े उपलब्ध हो सकते हैं। फिर भी, इस माध्यम में कुछ मजबूती हैं तो कुछ कमजोरियां भी। यदि शोधकर्ता बहुत बड़ी आबादी में किसी नगरीय गुण विशेष का विश्लेषण करना चाहता है तो यह तरीका कारगर हो सकता है। इसके जरिये प्रतिक्रियाओं की विस्तृत श्रृंखला को सामने लाने, सैंपलिंग की बेहतर क्षमता के माध्यम से फील्ड रिसर्च में किसी एक पक्ष की ओर आने वाले झुकाव को भी कम किया जा सकता है। मुख्य पहलू यह है कि यदि आप पूरे लक्षित समूह का साक्षात्कार नहीं करना चाहते हैं तो लक्षित समूह का सामान्यीकरण कर इसकी सैंपलिंग कर सकते हैं। इसके आगे डाक और टेलीफोन शोधकर्ता को गुप्त रहकर अपेक्षित पहुंच पाने में मदद करते हैं।

यहां यह उल्लेखनीय है कि सभी सर्वेक्षण पर बहुत अधिक समय और धन लगता है। यदि शोधकर्ता त्वरित सर्वे करने का प्रयास करता है तो भले ही खर्चा कुछ कम हो जाये, लेकिन इसके कारण उपलब्ध होने वाले आंकड़ों के मूल्य (Value) पर असर हो सकता है। इसके अलावा सर्वे से मिलने वाले आंकड़ों से परिवर्तन, विकास का पूरी तरह मूल्यांकन कठिन हो जाता है, जबकि ये नगरीय घटनाक्रमों के प्रवाह के विश्लेषण के लिये आवश्यक तत्व हैं। कुछ अन्य सीमाओं का उल्लेख फॉलर (Fowler) ने किया है (1988, pp. 71-72).

## 2.9 शोध की उपयोगिता (Utilization of Research)

वेस (Weiss, 1984) ने शोधकार्य को और अधिक उपयोगी बनाने के लिये निम्न कदम उठाने का सुझाव दिया है:

1. शोध करवाने वाले के साथ शोध पर योजना बनायें
2. उन घटनाओं, मुद्दों, बिंदुओं पर ध्यान केन्द्रित करें, जिनका परीक्षण किया जाना है
3. उन परिस्थितियों को हमेशा ध्यान में रखें, जिनके विकल्प की तलाश करनी पड़ सकती है
4. अपनी रिपोर्ट को स्पष्ट, बेहतर तरीके से लिखित रूप में तैयार करें और समयबद्ध तरीके से रिपोर्ट को प्रकाशित भी करें, ताकि उसका आवश्यक प्रसार हो सके
5. अपने विश्लेषण को बड़े परिदृश्य में समाहित करें

6. शोधकार्य में गुणवत्ता का हमेशा ध्यान रखें

## 2.10 निष्कर्ष (Conclusion)

नगरीय क्षेत्रों में निरंतर बढ़ती सघनता और कई शहरों में रोजगार के अवसरों के बदलते आधार ने बड़ी सामाजिक समस्याओं को जन्म दिया है। भारत समेत कई देशों में वैश्विक अर्थव्यवस्थाओं के चलते सीमाओं का महत्व सवालों के दायरे में है। इसके चलते शहरों में अमीरों और गरीबों के बीच असमानता की स्थिति स्पष्ट नजर आती है, जबकि मध्यम वर्ग की परिस्थितियां उतनी स्पष्ट नहीं हो पाती हैं। जितनी अधिक संख्या में लोग रोजगार–आवास की तलाश में शहरों की ओर बढ़ते हैं, उतनी ही मात्रा में गरीबी, वर्ग विभेद, कमजोर स्वास्थ्य सेवाओं, अशिक्षा जैसे मसले सामने आते हैं। ऐसे में सार्वजनिक शिक्षा, श्रम–रोजगार की उपलब्धता, कौशल विकास, सामाजिक गतिशीलता आदि के ढांचे को पुनर्गठित करने की आवश्यकता महसूस होती है। इन नगरीय मुद्दों के लिये जरूरी संसाधनों की मांग बहुत अधिक होती है, लेकिन प्रभावित लोगों को बेहतर सुविधाएं और अवसर प्रदान करने से नगरीय प्राधिकरण काफी हद तक समस्या का निस्तारण कर सकते हैं।

गुणवत्तापरक जीवनस्तर महत्वपूर्ण पहलू है और इसे सार्वजनिक सोच–समझ से कभी अलग नहीं किया जा सकता। नगरीय मुद्दों के रूप में इसे भी दोबारा ढाले जाने के प्रयास शुरू हुए हैं। सामुदायिक स्वपास्थ्य, एड्स नीति जैसे कार्यक्रम शहरों में स्वास्थ्य सेवाओं की बेहतरी के लिये संचालित होते हैं (see Slack, 1991). ये मुद्दे संसद से लेकर कारपोरेट जगत में भी जोर–शोर से उठते रहे हैं। भारत के अधिकतर बड़े शहरों में आवासहीनता बड़ी समस्या है। ये सभी वो मसले हैं, जिनसे शहरों में रहने वाला हर व्यक्ति प्रभावित होता है। ऐसे में जीवनस्तर की गुणवत्ता के विश्लेषण के लिये सरकारी कार्यक्रमों और नीतियों के जीवन पर होने वाले असर का विश्लेषण आवश्यक होता है। ऐसे में नगरीय शोधकार्य का विभिन्न स्तरों पर खोजी प्रतिक्रियाओं और परिणामों को सामने रखना आवश्यक बन जाता है। इसके तहत अलग–अलग स्तर पर प्रभावी कार्यक्रमों की पहचान, उनके प्रभावी होने के कारणों का मूल्यांकन और अन्य जरूरतमंद लोगों तक इन कार्यक्रमों की पहुंच बढ़ाने के तरीकों की जानकारी जुटाना जरूरी है। यहां तक कि सामाजिक मसलों से जुड़े नक्शे भी नगरीय निकायों को मजबूत निर्णय ले पाने में मदद कर सकते हैं। शैनन, पायेल और बैशर का 1990 में एड्स पर किया गया शोधकार्य इन्हीं तरीकों से बेहतर परिणाम देने वाला शोधकार्य बना।

## 2.11 अभ्यास प्रश्न (Mode Questions)

1. शोधकार्य के लिये जरूरी कदमों की जानकारी दें और शोध में इनके महत्व को भी समझाये।
2. नगरीय शोध कार्य में साधनों और माध्यमों के बारे में विस्तार से बतायें।
3. नगरीय शोध के लिये अनिवार्य शर्तों की जानकारी दें।
4. नगरीय शोध के स्रोतों का वर्णन करें। भारत में शोध के लिये उपलब्ध स्रोतों को सूचीबद्ध करें।

## 2.12 सहायक अध्ययन (Suggested Readings)

1.Anderson,J.E(1984), "public policy making (3rd.edt.),New York,Halt,Reinhart and Wilston

2. Gregory D. Andranovich & Gerry Riposa(2011),"Doing Urban Research", Sage publication, Thousand Yorks.

ईकाई– 3

# भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया
# Process of Urbanization in India

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 नगरीकरण की अवधारणा
3.3 भारत में नगरीकरण
3.4 भारत में नगरीकरण के कारण
3.5 नगरीकरण के प्रभाव
3.6 नगरीकरण से उत्पन्न समस्याएं
3.7 सारांश
3.8 बोध प्रश्न/बोध प्रश्नो के उत्तर
3.9 लघु प्रश्न
3.10 निबंधात्मक प्रश्न
3.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

## 3.0 उद्देश्य

इस ईकाई के मुख्य उद्देश्य हैं–

1. नगरीकरण तथा भारत में नगरीकरण की अवधारणा एवं प्रक्रिया को स्पष्ट करना।
2. भारत में नगरीकरण के कारण तथा प्रभाव को स्पष्ट करना।
3. भारत में नगरीकरण से उत्पन्न समस्याओं की व्याख्या।

## 3.1 प्रस्तावना

जैसा कि हम सब जानते हैं कि नगरीकरण की प्रक्रिया नगरों के निर्माण तथा नगरों की वृद्धि से संबंधित है। वास्तव में ग्रामीण जनसंख्या का नगरों में जाना ही नगरीकरण कहलाता है। भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया को यदि देखा जाए तो प्राचीन समय से ही नगरीकरण की प्रक्रिया दिखाई देती है, किंतु यह भी वास्तविक है कि परिस्थितियाँ, देशकाल तथा स्वरूप के आधार पर इसमें निरंतर परिवर्तन आते रहते हैं। प्राचीन समय से ही जब मनुष्य की आवश्यकताएं बढ़ने लगी तब अनेक व्यवसायिक केन्द्रों का उद्‌भव हुआ जो शनैः–शनैः नगर का रूप धारण करने लगा। प्राचीन समय में पाटलिपुत्र, उज्जैन तथा तक्षशिला आदि ऐसे ही व्यवसायिकृत नगर हैं। भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया भी रही है। राजनैतिक नगरों में हस्तिनापुर, मथुरा, कन्नौज, इन्द्रप्रस्थ तथा अयोध्या नगर प्रमुख हैं। जहाँ मुख्य रूप से राजनैतिक संस्थाओं तथा शासन प्रणाली का उद्‌भव हुआ। इसी प्रकार धार्मिक रूप से कई नगरों का विकास हुआ, जिसमें हरिद्वार, काशी, प्रयाग तथा गया ऐसे धार्मिक स्थल हैं, जो बाद में धार्मिक नगरों के रूप में विख्यात हुए, ब्रिटिश काल में तो नगरों के निर्माण तथा वृद्धि में सर्वाधिक तीव्रता आई कच्चे तथा उत्पादित माल के आयात–निर्यात के लिए प्रायः समुद्र के किनारे बड़े–बड़े नगरों का निर्माण तथा विकास होने लगा, जिसमें मुम्बई, चेन्नई तथा कलकत्ता जैसे महानगरों का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया के विभिन्न कारणों का उल्लेख करे तो यहाँ पर एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि आवश्यकताएं, व्यापारिकरण, औद्योगिकरण विकास, सामाजिक, गतिशीलता, भौगोलिक परिस्थितियाँ तथा नए–नए आविष्कार एक ऐसे कारण हैं, जिन्होंने भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया को तीव्र करने में अपनी प्रमुख भूमिका का निर्वहन किया है।

## 3.2 नगरीकरण की अवधारणा

नगरीकण के संदर्भ में हम पहले भी चर्चा कर चूके हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों की जनसंख्या का नगरीय क्षेत्रों में जाना नगरीकरण की प्रक्रिया कहलाता है। इस संबंध में प्रमुख विद्वान एन्डरर्सन का मानना है कि नगरीकरण एक तरफा प्रक्रिया न होकर दुतरफा प्रक्रिया है। इसमें केवल गाँवों से शहरों में जाना नहीं होता परंतु इसमें प्रवासी के दृष्टिकोणें, विश्वासों, मूल्यों और व्यवहार के संरूपों में भी परिवर्तन होता है। एन्डर्सन ने नगरीकरण की पाँच विशेषताओं का उल्लेख किया है।

1. मुद्रा अर्थव्यवस्था
2. सरकारी प्रशासन
3. सांस्कृतिक परिवर्तन
4. लिखित अभिलेख
5. अभिनव परिवर्तन[1]

थामसन ने नगरीकरण को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''प्रमुखतः अथवा एकमात्र कृषि से संबंद्ध समुदायों की ओर से साधारणतया विशालतर समुदायों की ओर जिनकी क्रियाएँ प्रचीन रूप से सरकार व्यापार, विनिमय अथवा आश्रित विषयों की होती हैं लोगों के गति के रूप से की है।''[2]
इसी प्रकार नेल्सन एडरसन ने भी नगरीकरण के विषय में लिखा है कि जीवन के मार्ग के रूप में शहरीपन केवल शहरों एवं कस्बों तक ही सीमित नहीं है यद्यपि दूसरा विकास विशाल नगर केंद्रों में भी होता है। यह व्यवहार का ढंग है, जिसका अर्थ है कि कोई भी अपने विचारों तथा आचरण से शहर बन सकता है। भले ही निवास एक गाँ में करता हो। दूसरी ओर एक अत्यंत अशहरीकृत व्यक्ति शहर के एक अति नगरीकृत क्षेत्र में निवास कर सकता है।[3]

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि वास्तव में नगरीकरण के कारण नगरीय प्रभावों को प्रसार है, जो प्रमुखतः उद्योगों पर आधारित होता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें ग्रामीण संरचना में धीरे–धीरे परिवर्तन होता है तथा नगरीयता की स्थिति में भी परिवर्तन एवं वृद्धि होने लगती है। प्रमुख समाजशास्त्री बर्गेल का भी मानना है कि ग्रामीण क्षेत्रों के नगरीय क्षेत्रों में परिवर्तन होने की प्रक्रिया का नाम ही वास्वत में नगरीकरण है। इसी प्रकार वारेन थामसन का भी मानना है कि नगरीकरण एक प्रक्रिया है जिसमें कृषि से संबंधित समुदाय के लोग धीरे–धीरे ऐसे बड़े समूहों के रूप में परिवर्तित होने लगते हैं, जिनकी क्रियाएँ उद्योग, व्यापार, वाणिज्य तथा सरकारी कार्यालयों से संबंद्ध होती हैं।

नगरीय जीवन की मुख्य विशेषता औद्योगिक कार्य, प्रस्थिति एवं व्यवसाय में उच्च गतिशीलता, मानव निर्मित पर्यावरण **Time and Tempo compulsion the transiency** आदि हैं। नगरीकण एक प्रक्रिया है जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्र के लोग नगरीय जीवन ढ़ग को ग्रहण करते हैं। जब ग्रामीण क्षेत्र के लोग नगरीय जीवन ढंग को ग्रहण करते हैं। तब उनका संपूर्ण जीवन परिवर्तित होने लगता है। अवैयक्तिक सामाजिक संबंध के विकास के कारण संयुक्त परिवार एकाकी परिवार में परिवर्तित होने लगता है। के कारण मानव संबंध एवं अंतःक्रियाएं परिवर्तित होने लगती हैं, नगरीकण की प्रक्रिया लोगों का ध्यान गैर–कृषि कार्यों की ओर आकृष्ट करता है, जिसके लिए विशेषीकरण की आवश्यकता होती है। इस प्रकार नगरीकरण के कारण विशेषीकरण की मात्रा में वृद्धि होती है। इस विशेषीकरण के कारण व्यक्तिवाद विकसित होता है तथा व्यक्ति के गुण एवं क्षमता का महत्व बढ़ जाता है।[4]

## 3.3 भारत में नगरीकण

नगरीकरण की प्रक्रिया भारत वर्ष में प्राचीन काल से चली आ रही एक प्रक्रिया है। जो देशकाल एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। भारत में जैसे–जैसे कृषि को विकास हुआ

उत्पादन क्षमता विकसित हुई वैसे–वैसे निर्यात के लिए बाजारों की आवश्यकता होने लगी। अतः उत्पादन को खपाने तथा आयात–निर्यात को बढ़ावा देने के लिए तथा आर्थिक वृद्धि हेतु मंडियों की उत्पत्ति हुई। ऐसा माना जाता है कि यही मंडियाँ धीरे–धीरे नगर में परिवर्तित हो गई। विनिमय के विकास के कारण सामाजिक गतिशीलता बढ़ी, जिससे यातायात एवं आवगमन के साधनों का विकास होने लगा। एक प्रकार से कई स्थान व्यावसायिक केंद्रों में परिवर्तित हो गए जिनमें तक्षशिला, उज्जैन तथा पाटलिपुत्र प्रमुख हैं। इसी प्रकार विभिन्न शासकों द्वारा कई राजनैतिक एवं शासन संबंधों नगरों की भी स्थापना की गई, जिसमें प्रमुख रूप से हस्तिनापुर, मथुरा, कन्नौज तथा अयोध्या आदि नगर प्रमुख हैं। मुगलों तथा मुस्लिम शासकों ने अपने कार्यकाल में आगरा, दिल्ली तथा फतेहपुर सिकरी जैसे वास्तुकला में विख्यात नगरों की स्थापना की जो आज भी विश्व–विख्यात नगरों की स्थापना की जो आज भी विश्व विख्यात हैं और वास्तुकला में पूरे विश्व में आज भी बेजोड़ माने–जाते हैं।

अंग्रेजों के शासनकाल या ब्रिटिश युग में तो नगरीकरण या नगरों के निर्माण व वृद्धि में तीव्रता आने लगे। जिसके परिणाम स्वरूप व्यवस्थित एवं साधन संपन्न बड़े–बड़े औद्योगिक नगरों का विकास हुआ। ब्रिटिश काल में अधिकांश नगर समुद्रों के किनारे बनाए गए। समुद्र किनारे नगरों के निर्माण तथा वृद्धि का एक प्रमुख कारण आवगमन की सुविधा को माना जा सकता है क्योंकि भारत में कच्चे माल तथा आयात–निर्यात अथवा अंग्रेजों को इंग्लैण्ड से कच्चा माल तथा भारत में उत्पादित वस्तुओं को समुद्र तटीय मार्गों या समुद्री जहाजों से ले जाने में सर्वाधिक सुविधा प्राप्त होती थी। उस समय मुंबई, कलकत्ता तथा चेन्नई आदि नगर समुद्रों के किनारे बसे हुए महानगर माने जाते थे।

इस प्रकार भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया के संदर्भ में कहा जा सकता है कि यहाँ नगरीकरण की प्रक्रिया ईसा से 3,000 वर्ष पूर्व ही प्रारंभ हो गई थी। इस संबंध में प्रमुख सामाजशास्त्री गणेश पाण्डेय तथा अरुणा पाण्डेय आदि का मानना है कि आज से 2,000 वर्ष पूर्व ही भारत में मगध, नालंदा, तक्षशिला, उज्जैन, पाटलिपुत्र, कन्नौज, धारा, काशी एवं मालवा आदि जैसे बड़े–बड़े नगर थे। 18 वीं सदी के पहले तक भारत एवं संसार के अन्य देशों में जिन बड़े नगरों की स्थापना हुइ थी। उनका कारण एक विशेष स्थान पर केन्द्रित राजनीतिक शक्ति, व्यापार एवं शिखा की सुविधाएं थीं, लेकिन इन नगरों में जनसंख्या का घनत्व अधिक नहीं था। 20 वीं शताब्दी में जिन नगरों की स्थापना हुई उनकी जनसंख्या में आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि हुई।[5]

नगरीकरण की वृद्धि औद्योगीकरण या संपूर्ण आर्थिक विकास के साथ घनिष्ठ रूप से संबंध हैं। नगरीकरण की प्रक्रिया एक प्रतिरूप दिखलाती है, जिसमें परिवर्तन की गति प्रारंभ में मंद रहती है। फिर औद्योगीकरण की प्रारंभिक अवस्था में पहुंचने पर सीधी ऊँचे उठती है और धीरे–धीरे संकुचित होती जाती है। जब औसत शहरी परिपूर्णता–बिंदु पर पहुँचने लगता है।[6]

भारत में नगरीकरण पर एक विचार गोष्ठी सन् 1960 में हुई जिसने यह निष्कर्ष निकाला कि :–

1. नगरीय जीवन दशाएं बहुत ही असहनीय हैं ओर उनमें सुधार किया जाना चाहिए।
2. आने वाले तीस वर्षों में शहरी जनसंख्या कम–से–कम दो गुनी अवश्य हो जाएगी।
3. आज के क्रांतिक काल में शहरी सामाजिक विषयों पर व्यय यथा संभव कम किए जाने चाहिए यदि उत्पादकताक का पर्याप्त रूप से बढ़ाना हमारा लक्ष्य है।[7]

इसी प्रकार नियोजन आयोग ने भी तृतीय पंचवर्षीय योजना तैयार करते समय इस मत का समर्थन किया था कि ''नगरीकरण आर्थिक तथा सामाजिक विकास की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण अंग है और गाँवों से कस्बों की ओर स्थानान्तरण; ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में रहन–सहन के स्तर। विभिन्न आकार के कस्बों में आर्थिक तथा सामाजिक सेवाएं प्रदान करने के लिए सापेक्ष व्यय जनसंख्या के विभिन्न अंगों के लिए आवास की व्यवस्था, जलपूर्ति, सफाई; परिवहन एवं शक्ति जैसी सेवाओं का प्राविधान। आर्थिक विकास का स्वरूप, उद्योगों का स्थान–निर्धारण एवं विकिरण; नागरिक प्रशासन। वित्तीय नीतियों और भूमि उपयोग के नियोजन जैसी अनेक समस्याओं के साथ घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। इन अंगों का महत्व उन शहरी क्षेत्रों में जो बड़ी तेजी से विकसित हो रहे हैं विशेष हो जाता है।[8]

**विकास संबंधी नीति के अवयव–**

1. जहाँ तक संभव हो नए उद्योगों को विशाल तथा जनबहुल क्षेत्रों से दूर स्थापित किया जाए।
2. भारी उद्योगों के नियोजन में प्रदेश की संकल्पना concept of region को अपनाया जाना चाहिए। प्रत्येक विषय में निकटस्थ नगर–उपान्त से लेकर इस विशाल क्षेत्र तक का नियोजन किया जाना चाहिए। जिसके विकास के लिए निकट–स्थित उद्योग तो उसे केंद्र बिंदु मानकर कार्य करेगा।
3. सामुदायिक विकास परियोजनाओं अथवा प्रान्त के अंदर अन्य क्षेत्रों में विकास के ग्रामीण तथा नगरीय संघटक एवं संयुक्त योजना में ही गुँथे होने चाहिए। यह योजना प्रत्येक दशा में कस्बों तथा अन्य उपान्त क्षेत्रों के बीच आर्थिक अन्योन्याश्रिता को सुदृढ़ करने वाले कार्यक्रमों पर आधारित होनी चाहिए।
4. प्रत्येक ग्रामीण क्षेत्र में कृषि पर आधुनिक अत्यधिक निर्भरता के स्थान पर विविध व्यावसायिक प्रतिरुप लाने का प्रयास किया जाना चाहिए।[9]

## 3.4 भारत में नगरीकरण के कारण

भारत में नगरीकरण के कारणों को निम्नांकित आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है–

1. **कृषि व्यवसाय में वृद्धि–** भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया के लिए कृषि व्यवसाय में वृद्धि को भी उत्तरदायी माना जा सकता है। कृषि व्यवसाय में जब उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए नए–नए उन्नतिशील बीजों का प्रयोग किया जाने लगा साथ ही अच्छी और विविधापूर्ण

फसलों को उत्पन्न करने के लिए सिंचाई की सुविधाएं तथा नए यंत्रों एवं मशीनों का प्रयोग किया जाने लगा। तब उत्पादित फसल एवं अनाज को खपाने के लिए विभिन्न बाजारों की आवश्यकता महसूस होने लगी तब इस कृषि क्रांति ने अनेक व्यवसायिक नगरों का निर्माण एवं उसे विकसित किया।

2. **यातायात के साधनों का विकास–** यातायात या आवागमन के साधनों ने नगरीकरण की प्रक्रिया को बढ़ाने में प्रमुख भूमिका का निर्वहन किया है। व्यापारीकरण, आयात–निर्यात तथा बाजारीकरण बिना यातायात के साधनों के विकास के संभव नहीं था। नगरों के विकास तथा नगरीकरण के लिए रेल, वायुयान, पानी के जहाज, ट्रक आदि प्रमुख हैं। जो कच्चे माल तथा उत्पादित वस्तुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाते हैं।
3. **उपजाऊ भूमि एवं उपर्युक्त जलवायु–** नगरों के विकास में उपजाऊ भूमि एवं उपयुक्त जलवायु का भी विशेष योगदान है। भारत की जलवायु कृषि के लिए उपर्युक्त है साथ ही नदियों की बहुलता तथा खनिज लवण युक्त मिट्टी उत्पादन क्षमता को विकसित करती है।
4. **व्यापारिक केंद्र स्थल–** रोजगार के अवसर तथा उच्च जीवन स्तर के लिए अधिक से अधिक लोग व्यवसायिक जीवन को प्राथमिकता देते हैं। नगर मुख्यतः व्यवसायिक तथा व्यापारिक केद्र स्थल माने जाते हैं। अतः व्यवसायिक एवं व्यापारिक केंद्र स्थल होने के कारण भी नगरों का विकास या नगरीकरण होता है।
5. **औद्योगिकरण तथा तकनीकीकरण–** नगरीकरण के विकास तथा प्रगति के लिए उद्योग धंधों तथा नवीन मशीनों का विशेष योगदान है। नए–नए अविष्कारों तथ नई–नई तकनीक वाली मशीने उत्पादन क्षमता को बढ़ाकर विकास में तीव्रता लाती हैं। भारत भी इससे अछूता नहीं है। वास्तव में नगरीकरण औद्योगीकरण का ही परिणाम है।
6. **रोजगार एवं जीविकोपार्जन के केंद्र–** ग्रामीण समाज कृषि प्रधान समाज हो के कारण अधिकांश लोग कृषि पर आधारित होते हैं। किंतु कृषि में पूरे साल भर रोजगार नहीं मिल पाता। अतः इस मौसमी बेरोजगारी से बचने के लिए अधिकांश लोग नगरों में जाकर रोजगार करना ज्यादा पसंद करते हैं। यही कारण है कि आज नगरों की संख्या तीव्र गति से बढ़ रही है तथा छोटे–छोटे नगर महानगरों में परिवर्तित हो रहे हैं।
7. **नगरीय सुविधाएं–** नगरीय जीवन सुविधाओं का केंद्र माना जाता है। स्वास्थ्य, शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, स्वच्छता, उच्च जीवन स्तर, संस्थाएं, संघ तथा अनेक समितियाँ आदि सुविधाएं प्रत्येक व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित करती हैं। व्यक्ति एक अच्छे जीवन निर्वहन के लिए नगरों की ओर पलायन कर रहा है।

## 3.5 भारत में नगरीकरण के प्रभाव

भारत में नगरीकरण के आरंभ के विषय में यदि बात की जाए तो यहाँ नगरीकरण की प्रक्रिया शताब्दियों पूर्व हो गई थी, निम्नांकित कारणों के आधार पर भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया के आरंभ होने के कारणों तथा उससे उत्पन्न प्रभावों को स्पष्ट किया जा सकता है।

### 1. सामाजिक प्रभाव (Social Effect)

सामाजिक रूप से भारत में नगरीकरण के प्रभाव को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है–

1. **संयुक्त परिवार का विघटन–** भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया के लिए सबसे प्रमुख प्रथम सामाजिक प्रभाव संयुक्त परिवार के विघटन को कहा जा सकता है। जनसंख्या वृद्धि तथा रोजगार के सीमित अवसरों ने पलायन की प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया है, जिससे ग्रामीण जनसंख्या बड़ी संख्या में नगरों में रोजगार के लिए जाती है तथा वही पर जीवन पर्यन्त रहते हैं, जिससे संयुक्त परिवार धीरे–धीरे विघटित हो रहे हैं।
2. **सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन–** वैचारिक स्वतंत्रता तथा विभिन्न धर्म एवं जाति के संपर्क में आने के पश्चात् व्यक्तियों में पुरानी मान्यताएं तथा रुढ़िवादी विचारधारा का अंत होने लगा है, जिससे परंपरागत सामाजिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है या उसमें परिवर्तन होने लगा है।
3. **स्वतंत्र व्यक्तित्व–** नगरीकरण की प्रक्रिया ने भारतीय व्यक्तियों के मध्य ''हम'' की जगह ''मैं'' की भावना का विकास कर दिया है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति में सामूहिकता की जगह वैयक्तिकता की भावना का विकास होने लगा है, जिससे प्रत्येक व्यक्ति केवल अपने स्वार्थों तथा अपने ही विषय में सोचता है।
4. **रूढ़िवादिता का ह्रास–** नगरीकरण के कारण विभिन्न धर्म एवं जाति के लोग मिलजुल कर काम करते हैं। साथ–साथ खाना खाते हैं तथा एक ही मुहल्ले एवं कस्बे में मिलजुल कर जीवन निर्वाह करते हैं। जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति में धार्मिक कट्टरता की भावना में कमी आई है तथा रूढ़िवादी परंपराओं का ह्रास हो रहा है। इस संबंध में प्रो0 श्री निवास ने तीन विशेषताओं की व्याख्या की है जो निम्न हैं–
    1. जिस कार्य व व्यवहार को पहले धार्मिक माना जाता ाि। उसे अब वैसा नहीं माना जाता है।
    2. परंपरागत विश्वासों के स्थान पर तर्क एवं बुद्धिवाद का महत्व बढ़ने लगता है।
    3. धार्मिक व्यवहारों का विश्लेषण सामाजिक मूल्यों तथा मानववादी मूल्यों को ध्यान में रखते हुए किया जाने लगा है।
5. **सामाजिक संबंधों में परिवर्तन–** नगरीकरण की प्रक्रिया ने सामाजिक संबंधों में एक बड़ा परिवर्तन ला दिया है। ग्रामीण समाज में जहाँ प्रत्येक व्यक्तियों के मध्य प्राथमिक एवं

घनिष्ट संबंध पाए जाते थे तथा प्रत्येक सदस्य सदैव एक–दूसरे की सहायता को सदैव तत्पर रहता था। वही नगरीय समाज में प्राथमिक संबंधों का स्थान औपचारिक संबंधों ने ले लिया है। व्यक्तियों की महत्वकांक्षाओं ने उसे स्वार्थी बना दिया है। व्यक्ति का प्रत्येक दूसरे व्यक्ति के साथ संबंध केवल स्वार्थ सिद्धि के लिए ही बनाया जाता है। कई बार तो पड़ोसी पास रह रहे पड़ोसी तक को नहीं पहचानता है। इस प्रकार भारत में नगरीकरण का एक सामाजिक प्रभाव सामाजिक संबंधों में परिवर्तन है।

6. **महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन–** शिक्षा के बढ़ते सुअवसर, वैचारिक स्वतंत्रता एवं परंपरागत नियमों एवं परंपराओं में परिवर्तन आने के कारण महिलाओं की स्थिति में एक क्रांतिकारी परिवर्तन आ गया है। यह भारत में नगरीकरण का ही प्रभाव है कि आज महिलाओं ने प्रत्येक क्षेत्र में अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज करवाई है। नगरीकरण के प्रभाव से महिलाओं में तार्किक दृष्टिकोण का उदय हुआ है, जिससे वह अपने सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों के प्रति जागरूक हुई हैं। नगरीकरण की प्रक्रिया ने जहाँ एक ओर महिलाओं में वैचारिक स्वतंत्रता को बढ़ावा दिया है। वही दूसरी ओर पुरूषों को भी महिलाओं को समानता एवं प्रत्येक क्षेत्र में स्वतंत्रता के अधिकारों को देने की भी प्रेरणा प्रदान की है।

**2. आर्थिक प्रभाव (Economic Effects)–**

भारत में नगरीकरण ने आर्थिक जीवन में भी कई परिवर्तन ला दिया है, जिससे परिणामस्वरूप व्यक्ति के जीवन स्तर में कई क्रांतिकारी परिवर्तन आ गए हैं। जिसे निम्नांकित आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है–

1. **व्यवसायिक केंद्र स्थल–** भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने विभिन्न व्यवसायों एवं उद्योग–धंधों को प्रोत्साहित किया है। सरल शब्दों में यदि कहा जाए तो नगरों को प्रायः व्यवसायों एवं उद्योग–धंधों का केद्र स्थल कहा जा सकता है। नगरीय जीवन में प्रत्येक व्यक्ति अपने आर्थिक जीवन को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से प्रवेश करता है। यहाँ जीविकोपार्जन के अनेक साधन व्यवसाय एववं नौकरी के रूप में उपलब्ध होते हैं, जिन्हें अपना कर व्यक्ति अपने आर्थिक जीवन को उन्नतिशील बना सकता है।
2. **बाजार एवं मंडियों में वृद्धि–** व्यवयासीकृत केंद्र होने के कारण अधिकांशतः नगरों में बाजार एवं मंडियों की तीव्र गति से बढ़ोत्तरी होती है। व्यवसाय करने वाले प्रत्येक व्यक्ति का अंतिम लक्ष्य अधिक–से–अधिक मुनाफा कमाना होता है। अतः नगरों में बाजारों एवं मंडियों का विस्तार एवं विकास इस तरह किया जाता है कि अधिकांश वस्तुओ की खपत की जा सके। अतः यह कहा जा सकता है कि नगरीकरण की प्रक्रिया

ने बाजारों का विस्तारीकरण करके आर्थिक जीवन को सुदृढ़ करने में विशेष भूमिका का निवर्हन किया है।

3. **असमानता की स्थिति–** भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने व्यक्तियों के मध्य एक असमानता की स्थिति को ला दिया है। जिससे उच्च तथा निम्न स्तरीकरण वाले समाज को बढ़ावा मिला है। कहने का तात्पर्य यह है कि नगरीय जीवन में प्रत्येक व्यक्ति की आर्थिक स्थिति समान न होने के कारण उनका जीवन तथा सामाजिक स्तर समान नहीं होता है। जैसे उच्च आर्थिक स्थिति वाले व्यक्ति बड़ी–बड़ी कोठियों या बंग्लों में वातानुकूलित आवास में जीवन यापन करते हैं। जबकि वही दूसरी ओर कई व्यक्ति मलिन बस्तियों में रहने को मजबूर होते हैं। जहाँ मौलिक सुख–सुविधाओं का भी अभाव पाया जाता है। अतः नगरीकरण का आर्थिक जगत में एक प्रमुख प्रभाव आर्थिक क्षेत्र में असमानता को भी माना जा सकता है।
4. **धन की महत्वता–** भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने मानव को स्वार्थी बना दिया है। नगरों में निवास करने वाले प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक दूसरे व्यक्ति से अपने स्वार्थ संबंधों के आधार पर जुड़ा रहता है। जिसका एकमात्र और अंतिम उद्देश्य सर्वाधिक धन कमाना या धन की प्राप्ति करना होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने व्यक्ति को धन का पुजारी बना दिया है। जो किसी भी तरह से केवल आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने में लगा रहता है। जिससे उसके सामाजिक संबंध धीरे–धीरे क्षीण या नष्ट होने लगते हैं।

**3. पारिवारिक व्यवस्था में परिवर्तन (Impact on Family system)–**

भारत में नगरीकरण के कारण पारिवारिक व्यवस्था भी प्रभावित हुई है। स्वतंत्रता के पश्चात् नगरीय प्रवृत्ति ने व्यक्ति में समानता, स्वतंत्रता एवं तार्किकता का विकास किया है। इसी तरह नगरीय उद्योगों ने व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से आजीविका अर्जित करने का अवसर भी प्रदान किया है न केवल पुरुष बल्कि शिक्षित महिलाएं भी अर्थोपार्जन करके आत्मनिर्भर बनने का प्रयत्न करने लगी हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि आज स्त्रियां संयुक्त परिवार में रहना पसंद नहीं करती हैं। इससे नगरों में संयुक्त परिवार विघटित होकर एकाकी परिवारों में परिणत हो गया है। नगरीकरण के कारण आज परिवार का आकार छोटा होने के साथ–साथ पति–पत्नी एवं उनकी संतानों के पारस्परिक संबंधों में भी परिवर्तन स्पष्ट होने लगा है। परिवार के सदस्यों के बीच व्यक्तिवादिता एवं औपचारिकता की भावना पनपने लगती है।

इस संबंध में रॉस ने अपनी पुस्तक **The Hindu family in its urban setting** में बताया है कि ''आने वाले कुछ समय में परिवार के नियमों तथा दायित्वों संबंधी विचार भी दुर्बल पड़ते जाएंगें।

सदस्यों के बीच पारस्परिक स्नेह कम होता जाएगा तथा परिवार के मुखिया के अधिकार लगभग समाप्त हो जाएंगे।''

इसी प्रकार एम0एस0 गोरे ने **''Urbainzation and family change''** में बताया कि नगरीकरण से प्रभावित वर्तमान परिवारों में रहन–सहन के स्तर सदस्यों की संख्या तथा सदस्यों की स्थिति में परिवर्तन आया है, लेकिन सांस्कृतिक रूप से वे आज भी संयुक्त परिवार व्यवस्था से जुड़े हुए हैं।

प्रमुख सामाजशास्त्री 'रास' ने भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया का पारिवारिक व्यवस्था पर प्रभाव को स्पष्ट करते हुए कहा है कि ''परिवार के प्रति कर्त्तव्य की भावनाएं और परिवार के सदस्यों के प्रति भावात्मक लगाव निश्चित रूप से कमजोर हो जाएंगे और पितृसत्ता समाप्त हो जाएगी। जब ऐसा होगा तो संबंधियों के और बड़े समूह में पहचान के लिए कुछ भी बाकी नहीं रह जाएगा।''

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने पारिवारिक व्यवस्था में कई उल्लेखनीय परिवर्तन किए हैं। वास्तव में नगरीकरण की प्रक्रिया द्वारा जहाँ संयुक्त परिवार विघटित होकर एकाकी परिवारों में परिवर्तित हो रहे हैं। वहीं परंपरागत परिवारों में मिली–जुली संस्कृति (परंपरागत तथा पश्चिमी) का भी समावेश हो रहा है। इन परिवर्तनों ने परंपरागत परिवारों की कई परंपराओं एवं रीति–रिवाजों को परिवर्तित कर दिया है।

**4. राजनीतिक जीवन पर प्रभाव (Impact on Political life)–**

भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने अधिकांश लोगों में राजनीति के प्रति जागरूकता की भावना को विकसित किया है साथ ही व्यक्तियों में राजनीति के प्रति जिज्ञासा को भी उत्पन्न किया है। राजनीतिक प्रभावों को निम्नलिखित तथ्यों के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

1. **राजनीतिक जागरूकता–** यह कहना कोई अतिशोयक्ति नहीं होगा कि ग्रामीण समाज में व्यक्तियों के अंदर देश–विदेश संबंधी राजनीतिक जागरुकता का अभाव पाया जाता है, किंतु नगरीय समाज में व्यक्ति संचार के माध्यमों टी0वी0 एवं इंटरनेट के माध्यम से राजनीतिक गतिविधियों से भी अवगत होता रहता है। जिससे उसे देश और समाज के प्रति अपने अधिकारों एवं कर्त्तव्यों का बोध होता है। इस प्रकार भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने जनता को राजनीतिक रूप से जागरूक किया है।
2. **राजनीतिक गतिविधियों में भागीदारी–** नगरीकरण की प्रक्रिया ने व्यक्तियों को राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिया रूप से भागीदारी को सुनिश्चित किया है। जहाँ एक ओर व्यक्ति लोकतंत्र की महत्ता को समझता है वहीं दूसरी ओर उसे समाज और देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों का बोध रहता है। मतदाता के रूप में व्यक्ति एक ईमानदार नेता का चुनाव करता है। कहने का आशय यह है कि नगरों में व्यक्ति राजनीतिक गतिविधियों में खुले रूप से भाग लेते हैं।

**5. व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों पर प्रभाव**

जैसा कि हम सब जानते हैं कि नगरों में अनेक धर्म एवं जातियों के लोग आपस में मिल–जुल कर रहते हैं। जिससे उनकी परंपरागत परंपराओं, रीति–रिवाजों एवं रूढ़िवादी विचारधाराओं में परिवर्तन आता है। पश्चिमी सभ्यता को अपनाकर प्रत्येक व्यक्ति, व्यक्तियों को अलग–अलग जातियों एवं वर्गों में न बांटकर समानता के स्तर पर रखकर समान व्यवहार करने का प्रयास करता है। अतः संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने व्यक्तियों की परंपरागत व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों में एक क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। इस संबंध में प्रमुख समाजशास्त्री प्रो0 एम0एन0 श्रीनिवास ने लिखा है कि ''पश्चिमीकरण एक विशेष प्रक्रिया का नाम है, जिसमें व्यक्ति प्रौद्योगिकी, विभिन्न संस्थाओं, विचारों और सामाजिक मूल्यों के स्तर पर होने वाले सभी परिवर्तनों को ग्रहण करने के लिए तैयार रहता है। इस प्रकार पश्चिमीकरण वह प्रक्रिया है जो व्यक्तिग व्यवहारों के निर्धारण में मानवतावाद, उदारतावाद, तार्किकता, धर्म निरपेक्षता, समतावाद एवं परिवर्तन को महत्व देती है। साथ ही इसके अंतर्गत सांप्रदायिकता, जातिवाद एवं क्षेत्रवाद को हतोत्साहित किया जाता है।[11]

**6. ग्रामीण समुदाय में प्रभाव[12] (Impact on Rural community)**

भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने ग्रामीण समुदाय को भी प्रभावित किया है। इस संबंध में के0एम0 कपाड़िया ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि नगरीकरण के प्रभाव से गाँवों की आत्मनिर्भरता नष्ट हो गई है तथा गाँवों की परंपरागत संस्कृतियों पर नगरों की नई संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट होने लगा है। नगर की आधुनिक सुविधाएं गाँवों तक भी पहुँच गई हैं। नवीन संपर्क से गाँवों में रहन–सहन, वेशभूषा एवं घर की सजावट के तरीके प्रभावित हुए हैं। इसी प्रकार डॉ0 राव ने अपनी पुस्तक में ग्रामीण समुदाय पर नगरीकरण के प्रभावों की विस्तृत व्याख्या की है। इनके विचार में नगरीकरण के कारण ग्रामीण समुदाय में द्रव्यीकरण का विकास हुआ है एवं खेती में व्यापारीकरण की प्रवृत्ति स्पष्ट होती जा रही है। गाँवों में जो व्यक्ति पहले अपने परंपरागत कार्यों में लगे हुए थे वे अब नई सेवाओं के आकर्षण के कारण नगरों में प्रवेश कर रहे हैं। इससे गाँव में परंपरागत व्यवसायों के साथ–साथ जजमानी व्यवस्था भी समाप्त हो गई है। नगरीय उद्योग–धंधों में कार्य करने के कारण ग्रामीण लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ तथा उनमें आत्मनिर्भरता उत्पन्न हुई।

**7. जाति व्यवस्था पर प्रभाव (Impact on caste system)-**

ऐसा माना जाता है कि भारत में नगरीकरण के प्रभाव से जाति व्यवस्था सर्वाधिक प्रभावित हुई है। भारत में नगरीकरण की जाति व्यवस्था पर प्रभाव निम्नांकिम बिंदुओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है–

1. **अस्पृश्यता की भावना का ह्रास–** नगरीकरण के परिणामस्वरूप नगरों में उच्च जाति और निम्नजाति सभी मिल–जुल कर कार्य करते हैं। होटल में रेस्ट्रा में साथ–साथ खाना खाते हैं, इस तरह नगरीय समाज में छुआछूत या अस्पृश्यता की भावना का ह्रास हो रहा है।
2. **परंपरागत व्यवसायों में परिवर्तन–** प्राचीन काल में समाज को व्यवस्थित एवं संगठित रखने के लिए संपूर्ण समाज को कार्यात्मक आधार पर चार वर्णों में विभक्त कर दिया जाता था। प्रत्येक व्यक्ति को कुछ निश्चित कार्य व्यवसाय के रूप में करना होता था जो कालांतर में पीढ़ी–दर–पीढ़ी जातिगत व्यवसाय बनते चले गए, किंतु नगरीकरण के पश्चात् इस परंपरागत व्यवसाय में परिवर्तन आने लगा अपनी योग्यता और रुचि के अनुरूप प्रत्येक व्यक्ति कोई भी कार्य करने के लिए स्वतंत्र है। सरल शब्दों में यदि कहा जाए तो यह आवश्यक नहीं कि व्यक्ति केवल अपने परंपरागत व्यवसाय को ही करे। अपनी रुचि तथा योग्यता के अनुरूप जहाँ उसकी आमदनी अधिक होती है उस व्यवसाय को चुनने के लिए वह स्वतंत्र होता है।
3. **धर्म एवं संस्कृति में परिवर्तन–** नगरीय सभ्यता ने व्यक्ति को वैचारिक एवं ताकिक स्वतंत्रता प्रदान की है। नगर का वातावरण प्रगतिशील एवं विकसित होने के कारण व्यक्ति अपने धार्मिक नियमों, परंपराओं एवं रूढ़िवादी विचारों का धीरे–धीरे त्याग कर रहा है, जिससे उसमें धर्म एवं संस्कृति संबंधी पारंपरिक विचारधाराओं में परिवर्तन आ रहा है। वर्तमान समय में तो व्यक्ति अपने धर्म को छोड़कर दूसरे धर्म को अपना रहा है।
4. **वैवाहिक संस्था में परिवर्तन–** भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने वैवाहिक संस्था में भी क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। औद्योगिकरण के कारण युवक एवं युवतियाँ साथ–साथ काम करते हैं तथा एक–दूसरे को समझने का अवसर भी प्राप्त होता है। जिससे प्रेम विवाह तथा अंतर्जातिय विवाह को बढ़ावा मिला है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि नगरीकरण की प्रक्रिया ने भारतीय वैवाहिक पारंपरिक संस्था में कई परिवर्तन किए हैं।

उपयुक्त विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने जाति व्यवस्था पर गहरा प्रभाव डाला है, इस संबंध में आन्द्रे बिताइ का मानना है कि पाश्चात्य रंग में रंगे हुए अभिजन ने वर्ग के बंधन, जाति के संबंधों से कहीं अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। कुछ जातियों के शिक्षित सदस्य जो आधुनिक व्यवसायों में हैं। कभी–कभी दबाव समूह के रूप में संगठित हो जाते हैं। इस प्रकार एक जाति दूसरे दबाव समूहों के साथ राजनीतिक और आर्थिक संसाधनों के लिए एक सामूहिक इकाई की तरह प्रतिस्पर्द्धा करती है। इस प्रकार का संगठन एक

नई प्रकार की एकात्मकता दर्शाता है। ये प्रतिस्पर्द्धा करने वाली इकाइयाँ जाति के वर्गों की अपेक्षा सामाजिक वर्गो की तरह अधिक कार्य करती है।[13]

इसी प्रकार कोलेन्ड्रा ने नगरीकरण के जाति व्यवस्था पर प्रभाव को तीन प्रकारों के आधार पर स्पष्ट किया है।[14]

1. रोजगार में और शहरों की अपेक्षाकृत नई बस्तियों में विभिन्न उपजातियों और जातियों के व्यक्ति एवं–दूसरे से मिलते हैं। वे प्रायः लगभग बराबर के दर्जे के होते हैं और इसमें पड़ोस की या कार्यलय समूह को एकता विकसित होती है। इस तरह की चीज बड़े शहरों में सरकारी बस्तियों में आम रूप से पाई जाती है।
2. अन्तर–उपजातीय विवाह होते है और इसे उपजातियों के विलयन को प्रोत्साहन मिलता है। यह इसलिए होता है कि कई बार शिक्षित बेटी के लिए अपनी ही उपजाति में पर्याप्त रूप से शिक्षित वर नहीं मिलता, परंतु करीब की उपजाति में मिल जाता है।
3. लोकतांत्रिक राजनीति–उप जातियों और सन्निकट जातियों के विलयन को प्रोत्साहित करती है ताकि बड़े आकार के दलों का संगठन बन सके।

## 3.6 नगरीकरण से उत्पन्न समस्याएं

जैसा कि हम सब जानते हैं विकास और प्रगति जहाँ एक ओर समाज को एक नई दिशा और सकारात्मक परिणाम लाने में सहायक होते है। वहीं दूसरी ओर वे कई नकारात्मक परिणाम एवं एसस्याएं भी लाते हैं। भारत में नगरीकरण से उत्पन्न समस्याओं को निम्नांकित आधार पर समझा जा सकता है।

1. **मलिन या गंदी बस्तियों का निर्माण–** भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने मलिन तथा गंदी बस्तियों का निर्माण किया है। रोजगार के अवसरों, शिक्षा तथा उच्च जीवन स्तर की लालसा में नगरों में दिन–प्रतिदिन जनसंख्या का घनत्व बढ़ जाता है। जो आवास संबंधी समस्या को उत्पन्न कर देता है। इस समस्या से बचने के लिए व्यक्ति छोटी–छोटी बस्तियों का निर्माण करने लगता है। जहाँ मूलभूत सुविधाओं का भी अभाव होता है तथा स्वास्थ्य एवं अपराध संबंधी कई नई समस्याओं को जन्म देने का कारण बनता है।
2. **प्रदूषण की समस्या–** नगरीकरण की प्रक्रिया ने प्रदूषण की समस्या को सर्वाधिक उत्पन्न किया है। औद्योगिक अवशिष्ट ने जहाँ एक ओर नदी और पीने के पानी को प्रदूषित किया है वहीं दूसरी ओर चिमनियों से निकलने वाले धुंए और जहरीली गैसों ने वायु प्रदूषण को भी बढ़ावा दिया है, जिससे धीरे–धीरे कई नई बिमारियाँ उत्पन्न होती है जो स्वास्थ्य पर अपना गहरा दुष्परिणाम छोड़ती है।

3. **प्रवजन की समस्या–** रोजगार के अवसर, गरीय सुविधाएं एवं नगरों की चकाचौंध भरी जीवन की ओर आकर्षित होकर ग्रामीण समाज से युवा वर्ग का नगरों की ओर पलायन एक प्रमुख समस्या बन गया है, जिससे गाँव–गाँव खाली होते जा रहे हैं।
4. **अपराध एवं बाल अपराध–** भारत में नगरीकरण के कारण अपराध एवं बाल अपराध को बढ़ावा मिला है। नगरों में अलग–अलग जगहों से विभिन्न मनोवृत्तियों वाले व्यक्ति आकर निवास करते हैं। जिसका प्रमुख उद्देश्य केवल धन कमाना होता है। अतः व्यक्ति अपराध की ओर अग्रसर होकर भी धन की प्राप्ति करता है, नगरों में पति–पत्नी दोनों के कार्यरत होने की दशा में उनके बच्चे गलत संगत में पड़कर अपरासध की ओर अग्रसर होने लगते हैं।
5. **श्रम समस्याएं–** भारत में नगरीकरण ने श्रम समस्याओं को जन्म दिया है। ग्रामीण समाज से व्यक्ति रोजगार की तलाश में नगरों में तो प्रवेश करते हैं, किंतु रोजगार के अभाव में आकस्मिक रोजगार को अपना लेते हैं। जैसे फेरीवोल, रिक्शा चालक, ग्रह सेवक तथा छोटे बच्चों की देखभाल आदि का कार्य इस तरह के कार्य व्यक्तियों के लिए कई नई प्रकार की समस्याओं को उत्पन्न कर देता है, क्योंकि ऐसे कार्यों में किसी भी प्रकार का स्थायित्व नहीं पाया जाता है।
6. **सामुदायिक विघटन–** सामुदायिक विघटन की समस्या को जन्म देने नगरीकरण की प्रक्रिया का विशेष योगदान माना जा सकता है। सरल शब्दों में यदि कहा जाए तो नगरीय समुदाय में अधिकांश व्यक्ति परिवार विहीन या अकेले निवास करते हैं। इसके अलावा स्थायी रूप से बेरोजगार व्यक्ति, भिखारी, नशाखोर एवं जुआखोर व्यक्ति सभ्य समाज के संगठन में रोज नए–नए संकट पैदा करते हैं जो सामुदायिक विघटन उत्पन्न करने लगते हैं। ऐसे व्यक्ति अपराध को भी बढ़ावा देते हैं।

इस प्रकार संक्षेप में कहा जा सकता है कि भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने देश में विकास एवं प्रगति को एक दिशा प्रदान की है। वहीं दूसरी ओर कई प्रकार की अनगिनत समस्याओं को भी जन्म दिया है।

## 3.7 सारांश

उपरोक्त संपूर्ण विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने भारत के परंपरागत एवं स्थिर समाज को परिवर्तित करके एक गतिशील समाज में परिवर्तित कर दिया है। जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति व्यक्ति के जीवन स्तर में एक क्रांतिकारी परिवर्तन दिखाई देने लगा है। नगरीकरण के कारण व्यक्तियों में जहाँ एक ओर नवीन वैचारिक शक्तियों का उद्भव

हुआ है वहीं दूसरी ओर वह आर्थिक रूप से भी सुदृढ़ हुए हैं। जिससे भारतीय समाज के परंपरागत रहन–सहन के ढंग मे परिवर्तन आ गया है। कहने का आशय यह है कि इस प्रक्रिया के कारण व्यक्ति जीवन के प्रति नवीन दृष्टिकोणों को आत्मसात कर रहे हैं। जो उनके लिए लाभप्रद और तार्किक हो, जैसा कि हम सब जानते हैं कि परिवर्तन के सदैव दो पहलू होते हैं एक सकारात्मक तथा दूसरा नकारात्मक भारत में जहाँ एक ओर नगरीकरण की प्रक्रिया ने सकारात्मक परिणामों से देश को विकास एवं प्रगति की एक नई दिशा से अवगत कराया है वहीं नकारात्मक परिणाम के रूप में कई प्रकार की समस्याओं को भी उत्पन्न किया है जिनका सविस्तार अध्याय में पहले विस्तृत चर्चा की जा चुकी है। अतः यह आवश्यक है कि विकास एवं प्रगति के साथ–साथ हमें उसके दुष्प्रभावों के विषय में भी सर्दव सचेत रहना चाहिए जो एक उन्नतिशील समाज एवं देश के लिए आवश्यक होता है।

## 3.08 बोध प्रश्न/बोध प्रश्नों के उत्तर

**1. बोध प्रश्न**

(सत्य/असत्य)

1. ग्रामीण जनसंख्या का नगरों की ओर जाना ही नगरीकरण है– सत्य/असत्य
2. व्यवसायिक केन्द्रों ने नगरों के विकास को बढ़ावा दिया है– सत्य/असत्य
3. कार्ल मार्क्स का मानना है कि नगरीकरण एक तरफा प्रक्रिया न हो कर दुतरफा प्रक्रिया है– सत्य/असत्य
4. बर्गेल का मानना है की ग्रामीण क्षेत्रों के नगरीय क्षेत्रों में होने वाले परिवर्तन को ही नगरीकरण कहा जाता है– सत्य/असत्य
5. भारत वर्ष में नगरीकरण की प्रक्रिया प्राचीन काल से चली आ रही है– सत्य/असत्य

**उत्तर**

1. सत्य
2. सत्य
3. असत्य
4. सत्य
5. सत्य

**2. बोध प्रश्न**

**रिक्त स्थानों की पूर्ति**

1. नगरीकरण की प्रक्रिया ने परंपरागत .....का ह्रास किया है।

2. भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ने विभिन्न .....एवं उद्योग धंधों को प्रोत्साहित किया है।
3. उच्च जाति और निम्न जाति के साथ–साथ कार्य करने से .....की भावना का ह्रास हुआ है।
4. अपनी जाति से बाहर विवाह करना अन्तरजातीय विवाह कहलाता है जो .....का परिणाम है।
5. कोलेन्ड्रा ने नगरीकरण के जाति व्यवस्था पर प्रभाव के .....प्रकार बताए हैं।

**उत्तर**

1. सामाजिक मूल्यों, 2. व्यवसायों, 3. अस्पृश्यता, 4. नगरीकरण, 5. तीन

## 3.9 लघु प्रश्न

1. नगरीकरण की अवधारणा को स्पष्ट करिए।
2. एन्डरर्सन द्वारा दिए गए नगरीकरण की पाँच विशेषताओं का उल्लेख करिए।
3. भारत में नगरीकरण से कृषि व्यवसाय में किस प्रकार वृद्धि हुई स्पष्ट करिए।
4. भारत में नगरीकरण के सामाजिक प्रभाव को स्पष्ट करिए।
5. नगरीकरण की प्रक्रिया ने भारत में जाति व्यवस्था को परिवर्तित किया है। संक्षेप में स्पष्ट करिए।

## 3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. नगरीकरण किसे कहते हैं तथा भारत में नगरीकरण की अवधारणा को स्पष्ट करिए?
2. भारत में नगरीकरण के कारण तथा प्रभाव को स्पष्ट करिए?
3. भारत में नगरीकरण से उत्पन्न समस्याओं का सविस्तार व्याख्या किजीए?
4. भारत में नगरीकरण के सामाजिक तथा आर्थिक प्रभाव को स्पष्ट करिए?
5. भारत में नगरीकरण के पारिवारिक व्यवस्था तथा राजनीतिक व्यवस्था के प्रभाव को सविस्तार स्पष्ट व्याख्या कीजिए?

## 3.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Anderson And Iswarn, Urban Socialogy, New York, publishing House-1953.
2. Thompson Warren S. Urbanization in Encyclopedia of th Social Science vol XV.
3. Anderson Nels, The Urban Community, A world prospective, New York Henry Holt and Co, 1959.
4. गणेश पाण्डेय, अरुणा पाण्डेय, ''नगरीय समाजशास्त्र–2004, राधा पब्लिकेशन्स, पे0न0–110
5. गणेश पाण्डेय, अरुणा पाण्डेय, ''नगरीय समाजशास्त्र–2004, राधा पब्लिकेशन्स, पे0न0–119

6. Kingsley Davis “Urbanization in India : Past and future in India’s Urban future Ra Turnar Bombay. Oxford University press, 1962, P No-03.
7. Wurster “Urban Living conditions overhead costs and the deveplpment pattern in India” Urban future (1962), P No-277.
8. जी0आर0 मदन, ‘‘विकास का समाजशास्त्र–2003, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, पे0न0–203
9. Third five year plan, P No-689.
10. गणेश पाण्डेय, अरुणा पाण्डेय, ‘‘नगरीय समाजशास्त्र–2004, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पे0न0–116
11. गणेश पाण्डेय, अरुणा पाण्डेय, ‘‘नगरीय समाजशास्त्र–2004, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पे0न0–117
12. गणेश पाण्डेय, अरुणा पाण्डेय, ‘‘नगरीय समाजशास्त्र–2004, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पे0न0 – 117–118
13. Beteille Andre “caste : old and new essays in social stratification” Asia publishing house, Delhi, 1969.
14. Kalenda Pauline “Caste in contemporary India” Rawat publications , Jaipur, 1984.

इकाई– 4

# नगर, नगरों का कार्याधारित वर्गीकरण
# (The City, Functional Classification of Cities)

इकाई की रुपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 परिचय

4.2 नगरों के कार्याधारित विभाजन का ऐतिहासिक विकास

4.3 नगरों का कार्याधारित वर्गीकरण

4.3.1 भारत में वर्गीकरण

4.3.2 अन्य देशों में वर्गीकरण

4.4 अध्ययनों का समालोचनात्मक विश्लेषण

4.5 निष्कर्ष

4.6 अभ्यास प्रश्न

4.7 भावी अध्ययन

## 4.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद हम जान सकेंगे कि नगरों को किस तरह वर्गीकृत किया जा सकता है। नगरों के विकास और वर्गीकरण का इतिहास क्या है और वे विद्वान कौन हैं, जिन्होंने कार्यों के आधार पर भारत और अन्य देशों में नगरों का वर्गीकरण किया।

## 4.1 परिचय (Introduction)

धरती पर विस्तृत कालखंड में विकसित हुये नगर अनंत सौंदर्यस्वरूप हैं। विद्वान शोधकर्ताओं से लेकर कवियों तक हर वर्ग, हर विचार के व्यक्ति को नगरों ने प्रभावित किया है। शोधकर्ताओं ने नगरों को मुख्यतः दो प्रकारों में वर्गीकृत किया है, 1. स्वतः विकसित (Grown) 2. नियोजित (Planned) (Blumenfeld, 1943). आदिकालीन व्यवस्था में आवास सुविधा नियोजित अथवा अनियोजित होती थी। मूल उद्देश्य विविध गतिविधियों के साथ आवास समस्या को हल करना था। प्राचीनकाल में लोग अधिकतर बिखरे हुये गांवों में रहते थे, जहां उनका मुख्य कार्य कृषि गतिविधियां थीं। यही वजह थी कि नगरों और गांवों की पहचान का एक मुख्य माध्यम कृषिकार्य और गैरकृषिकार्य बन गये। बाद में औद्योगिक विकास और आर्थिक गतिविधियों ने नियोजित नगरों का विकास किया। 'विकासशील अर्थव्यवस्थाओं (विशेषकर अफ्रीका में) में औद्योगीकरण के बिना भी शहरीकरण हो रहा है। चूंकि एक शहर गैर व्यापारिक वस्तुओं का उत्पादन कर सकता है साथ ही अंर्तराष्ट्रीय स्तर पर व्यापारयोग्य वस्तुओं का भी (यदि वे पर्याप्त प्रतिस्पर्धी हों), यह लाभ के पैमाने पर निर्भर करता है। कोई शहर व्यापारिक वस्तुओं का उत्पादन कर पाने में तब अक्षम होता है, जब शहर और आंतरिक क्षेत्रों में गैर व्यापारिक वस्तुओं की मांग अधिक हो अथवा शहरी अवस्थापना और निर्माण की लागत बेहद अधिक हो।' (Venables, 2017). नगर मानवजाति के सांस्कृतिक विकास के केन्द्र हैं।

यहां यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि पहली मानवीय आवासीय व्यवस्था का विकास अलग–अलग रुचियों, लक्ष्यों वाले लोगों के एकसाथ आने से हुआ। नगर के केन्द्र का तात्पर्य राजनीतिक शक्तियों और धार्मिक प्राधिकरणों से है, जो राष्ट्रों पर हमले कर जीत हासिल करने की मंशा के कारण बने। (Hoyt, 1962). आकार, अवस्थिति और कार्यों तथा लोगों की आवश्यकताओं, सामाजिक–सांस्कृतिक महत्य आदि के आधार पर नगर विभिन्न प्रकार के होते हैं। विभिन्न शोधकर्ताओं ने नगर को आकार, अवस्थिति, सामाजिक–सांस्कृतिक महत्व आदि कारकों के आधार पर वर्गीकृत करने का प्रयास किया है। इन सबमें कार्यों के आधार पर नगर का वर्गीकरण तब सबसे उपयुक्त प्रतीत होता है, जब हम समरूप सैद्धान्तिक वर्गीकरण चाहते हैं। कस्बों का कार्याधारित विश्लेषण शहरी अध्ययन का अहम हिस्सा बन गया है, क्योंकि इसके जरिये क्षेत्रीय नियोजन को बेहतर आधार मिलता है (velapurgore, Rathod and kalgapur, 2008). स्मिथ (1965) के अनुसार, 'नगर अर्थव्यवस्था और लोगों की संस्कृति में विविध कार्यों को संपन्न करने का माध्यम हैं। सभी नगरों के कुछ कार्य समान होते हैं। सभी नगरों के कुछ कार्य उनकी अवस्थिति और अन्य परिस्थितियों, उनमें रहने वाले लोगों के हिसाब से अलग व विशेष होते हैं। और सभी नगरों के कुछ कार्य उनकी विकास प्रक्रिया तथा इतिहास से जुड़े हुये होते हैं। इस प्रकार नगरों को कार्य को मापदंड मानने के आधार पर वर्गीकृत करना अन्य किसी भी माध्यम से अधिक प्रभावी होता है।'

## 4.2 नगरों के कार्याधारित विभाजन का ऐतिहासिक विकास (Historical Growth of Functional Division of City)

होमर होइट ने नगरों के कार्यों को कालक्रम में वर्गीकृत किया है। उन्होंने नगरों को प्राचीन और आधुनिक में बांटा, जो निम्नवत हैः

## प्राचीन नगर (Ancient cities: before 100 A.D.)

अधिकतर महान नगर जो शक्तिशाली साम्राज्यों की राजधानियां थीं और जहां महल, मन्दिर आदि थे नक्शे से गायब हो चुकी हैं (जैसे बेबीलोन, निनेवा, मेम्फिस और थीब्स आदि)। अन्य कुछ महान नगरों के अवशेष खुदाई में मिले हैं, जिनमें क्रीट का नॉसस, ग्रीस का कोरिन्थ और भारत का मोहनजो–दारो शामिल हैं। ये सभी नगर ईसा से 3000 वर्ष पूर्व विकसित थे। बायब्लोस, बाल्बेक, सैगुन्तेम, इटालिया, पॉम्पी, पलमाइरा, सीसेरिया और कई अन्य छोटे नगर भी नष्ट हो गये। अन्य महान नगरों, जैसे मैक्सिको (500–1200 ईसवी) के मन्दिर भी जंगलों में दफन मिले। मेक्सिको सिटी के नजदीक ही स्थित तेओतिवाकान के पिरामिड अमेरिका के संरक्षित नगरों में एक हैं। ये सभी महान नगरीय केन्द्रों के उदाहरण हैं, जो नष्ट हो गये। अब भी अस्तित्वमान प्राचीनतम नगरों में सीरिया का डेमेस्कस, येरूशलम, रूस का कीव और बगदाद शामिल हैं। 1200 से 1000 ईसा पूर्व विकसित वर्तमान नगरों में एथेंस, बीजिंग, रोम शामिल हैं। इसी तरह 300 से 50 ईसा पूर्व ग्रीक या रोमन काल में विकसित हुये नगरों में लंदन, पेरिस, अंकारा, वियेना, मिलान, बार्सिलोना, लिस्बन, कोरदोवा, मार्सिल्स, ब्रुसेल्स, एनीटोक, कैंटन आदि शामिल हैं।

## 100 से 1000 ईसवी (Period 100 A.D. to 1000 A.D)

रोमन साम्राज्य का विकास मुख्यतः कांस्टेन्टिनोपल नगर के आसपास हुआ, जो बाद में 328 ईसवी में पूर्वी रोमन साम्राज्य की राजधानी बनकर उभरा। वेनिस का उद्भव एक गांव के रूप में हुआ, जिसे मत्स्याखेट जैसी गतिविधियों के लिये जाना जाता है। हालांकि, रोमन साम्राज्य के उतार के दौर में इस शहर की जनसंख्या तेजी से गिरी और अगस्टस के काल यानी नवीं सदी तक एक लाख से घटकर महज 17 हजार रह गयी। हालांकि, 800 ईसवी तक इंग्लैंड में मेनचेस्टर सिटी और जर्मनी में हैम्बर्ग जैसे नये शहर विकसित हुये।

## 1000 से 1500 ईसवी (Period 1000 A.D. to 1500 A.D.)

इस काल में बाल्टिक सागर के तटों पर बसे नगर पश्चिमी व्यापारिक मार्गों के निकट थे। नॉर्वे में 1048 में ओस्लो और 1070 में बर्जेन जबकि 1943 में कोपेनहेगन विकसित हुये। तटवर्ती इलाकों से प्रारंभ हुआ यह नगरीकरण समय के साथ आंतरिक पूर्वी क्षेत्रों तक बढ़ता गया। बाद में ये नगर पूर्वी और मध्य यूरोप की राजधानियां बनीं। बर्लिन, वर्सा, प्राग, ekWLdks, स्टॉकहोम का विकास 1000 से 1250 ईसवी के बीच हुआ। इसी तरह मैड्रिड 1050 ईसवी में विकसित हुआ। जापान में टोक्यो 1200 ईसवी में नगरीकृत हुआ, जबकि इंग्लैंड में भी शहरी विकास 12वीं सदी में ही हुआ। इस दौरान विकसित हुये कुछ प्रमुख नगरों में बुकारेस्ट, रोमानिया–1388 ईसवी, कोरिया–1350 ईसवी, अहमदाबाद– 1411 ईसवी, मेक्सिको– 1300 ईसवी शामिल हैं।

## 1500 से 1699 ईसवी (Period 1500 A.D. to 1699 A.D.)

इस अवधि में कोलंबस ने अमेरिका की खोज की, जबकि सैन जुआन ने कैरीबियन सिटी और प्यूर्टो रिको ने दक्षिण अमेरिका को 1535 में खोजा। बाद के काल में खोजे गये नगर निम्नवत हैः

- हवाना, क्यूबा– 1514 (स्पेनिश द्वारा)
- लीमा, पेरू– 1535 (स्पेनिश द्वारा)
- ब्यूनस आयर्स, अर्जेन्टीना– 1536 (स्पेनिश द्वारा)
- बगोटा, कोलम्बिया– 1538 (स्पेनिश द्वारा)
- सेन्टियागो, चिली– 1541 (स्पेनिश द्वारा)
- कराकास, वेनेजुएला– 1567 (स्पेनिश द्वारा)
- रियो डि जेनेरियो, ब्राजील– 1506–65 (पुर्तगालियों द्वारा)
- क्यूबेक, मॉन्ट्रियल– 1567 (फ्रेंच द्वारा)
- न्यूयॉर्क– 1615 (डच द्वारा)
- बोस्टन– 1630 (इंग्लैंड द्वारा)
- फिलाडेल्फिया– 1652
- चार्ल्सटन, दक्षिण कैरोलिना– 1670

## 1700 से 1799 ईसवी तक (Period 1700 A.D. to 1799 A.D.)

18वीं सदी की शुरुआत में रूस में नयी राजधानी पेट्रोग्राद (अब लेनिनग्राद) विकसित हुयी, जिसकी स्थापना पीटर द ग्रेट ने 1704 में की थी। इसी काल में उत्तरी अमेरिकी महाद्वीप में नये नगरों के विकास की प्रक्रिया भी तेज हुयी, जिसने समय के साथ महानगरीय स्वरूप ले लिया। इस दौर में विकसित जो नगर बाद में महानगर के तौर पर विकसित हुये, उनके नाम निम्नवत हैं:

- न्यू ऑर्लेन्स– 1718
- पिट्सबर्ग– 1750
- सेंट लुईस– 1764
- सिनसिनाटी– 1788
- बाल्टीमोर– 1729
- सवाना, जॉर्जिया– 1733
- वाशिंगटन, डीसी– 1791
- टोरंटो, कनाडा– 1798
- ग्रेट लेक्स, क्लीवलैंड– 1796

## 1800 से 1899 (Period 1800 A.D. to 1899 A.D.)

19वीं सदी में अमेरिका के आंतरिक क्षेत्रों में आबादी की वृद्धि, आवासों और रेलमार्गों के निर्माण में तेजी आयी (Hoyt, 1962). परिवहन और अन्य सुविधाओं में आये इन महत्वपूर्ण परिवर्तनों की वजह से विकसित हुये नगर निम्नवत हैं:

- डेट्रोएट– 1802
- कांसास सिटी– 1821

- शिकागो– 1836
- डलास– 1841
- पोर्टलैंड, ओरेगन और मिनेपोलिस– 1845
- सिएटल– 1852
- डेन्वर– 1857
- साल्ट लेक सिटी– 1847
- जोहान्सबर्ग – 1886 (सोने की खदानों की खोज के बाद)
- मिलामी, फ्लोरिडा– 1896 (फ्लोरिडा ईस्ट कोस्ट रेलमार्ग के निर्माण के बाद)

### 20वीं सदी में नगर (Cities in 20th Century)

इस दौर में नये नगरों का तेजी से विकास हुआ, लेकिन इन नगरों के विकास का कारण नयी खोज या परिवहन और अन्य सुविधाओं की बढ़ोतरी के बजाय सरकारों की नाकामी रही। ऐसे में राजनीतिक महत्वों के आधार पर नगर विकसित हुये। उदाहरण के लिये इजराइल में 1927 में जाफा नगर के पास अवीव नाम के नये नगर की स्थापना हुयी। इसी तरह ब्राजील में 1960 में ब्राजीलिया नाम के नये नगर का विकास हुआ जो इस देश की राजधानी बना।

## 4.3 नगरों का कार्याधारित वर्गीकरण (Functional Classification of City)

नगर को सजीव व्यवस्था मान लें तो यह आवश्यक हो जाता है कि नगर यानी इस व्यवस्था के अलग–अलग हिस्से परस्पर समन्वय, संचार और उत्तरदायित्व, लचीलेपन का प्रवाह बनाये रखें। बेहतर व्यवस्था के लिये यह आवश्यक है कि नगर अपने हर नागरिक, हिस्से और समुदाय के लिये समग्र रूप से कार्य करे। डल (1986) ने सक्रिय नगर के लिये आवश्यक कार्यों का प्रस्ताव दिया है, जो निम्नवत हैः

- अपनी विकास आवश्यकताओं, लोगों और संगठनों के प्रति नगर का उत्तरदायित्व प्रभावी एवं उपयुक्त होना चाहिये
- नगर में यह क्षमता हो कि वह स्वयं को निरंतर परिष्कृत करे और परिवर्तनों के साथ निरंतरता बनाये रखे
- जीवन की आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन ताकि यह अपने निवासियों के विकास के लिये सक्षम हो
- नगर अपने नागरिकों के लिये शैक्षिक भूमिका का निर्वहन करे

शोधकर्ताओं और विद्वानों ने विभिन्न लक्ष्यों के अनुसार नगरों के कार्यों को परिभाषित करने का प्रयास किया है। लीबा टॉब ने नगरों के कार्यों को ऐतिहासिक रूप से परिभाषित किया तो जेन एडम्स ने अपने लेख '**The Function of Social settlement**' में बताया कि मानवीय व्यवस्थाओं का कार्य मानवीय ज्ञान के मूल्य को क्रियाओं और अनुभव के आधार पर परीक्षित करता है। प्रख्यात विद्वान वेबर इस बात पर जोर देते हैं कि भारी शहरीकरण की प्रक्रिया ने राजनीतिक सहभागिता के अवसरों को लगातार कम किया। इस तरह हम पाते हैं कि नगर को कार्याधारित आयाम से देखने के कई विचार और भारत समेत अन्य देशों को भी विभिन्न तरह से वर्गीकृत किया गया है।

### 4.3.1 भारत में नगरों के कार्य (Function of City in India)

**उत्पादन के केन्द्र (Centre of Production)**: यह ऐतिहासिक तथ्य है कि दुनियाभर में नगरों का विकास उद्योगों और औद्योगिक उत्पादन के विकास से हुआ। आज के दौर में भी औद्योगीकरण की रफ्तार को ही नगरों के विकास और विस्तार का महत्वपूर्ण कारक माना जाता है। वर्तमान युग की औद्योगिक क्रान्ति को हम सिर्फ उद्योगों से ही जोड़कर नहीं देख सकते, बल्कि भारत के परिप्रेक्ष्य में इसे नगरीय क्रान्ति के तौर पर भी देखा जा सकता है। नगरों को औद्योगिक एवं उत्पादन केन्द्र के रूप में देखा जा सकता है। उत्पादन केन्द्रों को हम आगे विभिन्न उपश्रेणियों में भी वर्गीकृत कर सकते हैं, जो निम्नवत हैं–

### प्राथमिक एवं द्वितीयक उत्पादन केन्द्र (Primary & Secondary Production Centres)

प्राथमिक उत्पादन केन्द्र का तात्पर्य उन स्थानों से है, जहां से उद्योगों के लिये कच्चा माल और प्राथमिक उत्पाद प्राप्त होते हैं। चूंकि ये नगर मुख्यतः कच्चे माल के आपूर्ति केन्द्र होते हैं, ऐसे में यहां रहने वाली अधिकतर आबादी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कच्चे माल के उत्पादन से संबंधित होती है। नेल्लोर, कोलार और बरेली ऐसे नगरों के कुछ उदाहरण हैं। दूसरी ओर, द्वितीयक उत्पादन केन्द्र का अर्थ उन नगरों से है, जहां अंतिम उत्पादन तैयार होता है। अधिकतर द्वितीयक उत्पादन केन्द्र आकार में बेहद बड़े होते हैं, जो दिनबदिन विस्तारित होते जाते हैं।

### व्यापार एवं वाणिज्य केन्द्र (Centre of Trade and Commerce)

मध्यकालीन कस्बे और नगर व्यापारिक एवं वाणिज्यिक गतिविधियों के केन्द्र थे। इन नगरों में उत्पादन द्वितीयक गतिविधि थी। व्यापारी और कारोबारियों यहां संगठित संघों के स्वरूप में थे और वस्तुओं एवं सुविधाओं के वितरण के अलावा बैंकिंग प्रणाली के रूप में भी काम करते थे। राजा भी इन संघों की प्रक्रियाओं को मान्यता प्रदान करते थे और पारंपरिक नियमों के अनुरूप इनमें साधारण न्यायालयों का भी संचालन होता था। इसके अलावा उस दौर में उद्यमों में कुशल श्रमिक भी होते थे। आरके मुखर्जी बताते हैं कि मुगलकाल में राजकीय उद्यम की व्यवस्था भी थी। राजकीय उद्यमों के अलावा निजी उद्यम भी इस काल में मौजूद थे। यहां यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि तत्कालीन राज्यों की राजधानियां वाणिज्यिक–व्यापारिक केन्द्रों के तौर पर भी विकसित हुयीं, क्योंकि कारोबारी और व्यापारी राजा के निकट रहकर संरक्षण और अपने कारोबारों, उद्यमों को बढ़ाने के लिये उपयुक्त संसाधन पाना चाहते थे। व्यापारियों को उपयुक्त आंतरिक क्षेत्रों और वहां तक संचार, परिवहन आदि सुविधाओं की आवश्यकता होती थी, ताकि वे अपने संगठन को और अधिक विस्तार दे सकें।

उस काल में राजनीतिक संरक्षण विभिन्न व्यापारिक नगरों, कस्बों और बाजारों के विकास और पतन का साधन था। व्यापारिक और वाणिज्यिक केन्द्र आंतरिक क्षेत्रों में उत्पादित होने वाली वस्तुओं पर भी बड़े पैमाने पर निर्भर थे। इसके अलावा बड़े नगरों तक परिवहन, व्यापार सुविधाएं और नये व्यापारिक समुद्री मार्गों की तलाश भी उनके लिये आवश्यक थी। उदाहरण के लिये वास्कोडिगामा के समुद्री रास्ता तलाशने के बाद कालीकट बड़े व्यापारिक केन्द्र के तौर पर विकसित हुआ। एक अन्य उदाहरण मुंबई का है, जहां व्यापार और वाणिज्यिक गतिविधियों ने इस शहर को बड़े उत्पादक केन्द्र के तौर पर विकसित किया। हालांकि, औपनिवेशिक दौर में भरूच और सूरत जैसे नगरों को मुंबई के विकास के चलते उपेक्षित रहना पड़ा। उन नगरों को व्यापार केन्द्र के रूप में विकसित होने में ज्यादा मदद मिली, जो समुद्री मार्गों से जुड़े हुये थे। हालांकि, भारत में कोझीकोड, कोची, तूतीकोरिन, विशाखापत्तनम, कोलकाता, काकीनाडा और चेन्नई प्रमुख बंदरगाह और सामान्यतः

व्यापारिक केन्द्र हैं, लेकिन यह हमेशा आवश्यक नहीं होता है कि बंदरगाह ही व्यापारिक एवं वाणिज्यिक केन्द्र हों।

### राजधानी एवं प्रशासनिक केन्द्र (Capital and Administrative Centres)

नगरों के विकास के साथ प्रशासनिक कस्बों और नगरों का विशेष स्थान रहा है जो मुख्यतः केन्द्रीय स्थान पर अवस्थित होते हैं। भारतीय नगरीय इतिहास पर नजर डालें तो विभिन्न साम्राज्यों के उद्भव और विकास के साथ नगरीय केन्द्रों में भी उतार–चढ़ाव सामने आते रहे। उदाहरण के लिये पाटलिपुत्र, विजयनगरम, मदुरै, गोलकुंडा को प्राचीन प्रशासनिक नगरों के तौर पर देखा जाता है, लेकिन वर्तमान के प्रशासनिक नगरों के तौर पर इनकी पहचान नहीं रह गयी है।

### 4.3.2 भारत में नगरों का कार्याधारित वर्गीकरण (Functional Classification of City in India)

भारतीय विद्वानों ने जनगणना आधारित वर्गीकरण की कमजोरियों को उजागर करते हुये पाया कि वस्तुतः आर्थिक गतिविधियों से ही समूहों का निर्माण होता है। आर्थिक गतिविधियां ही किसी समूह के सामान्य और विशिष्ट होने का निर्धारण करती हैं। पहले, दूसरे और तीसरे क्रम की आर्थिक गतिविधियां नगरों की भूमिकाओं को निर्धारित क़रती हैं। इससे ही तय होता है कि कोई नगर प्रभावी भूमिका में रहेगा या उसे कम अहमियत दी जायगी। वस्तुनिष्ठता की इस समस्या और इसके आधार पर नगरों–कस्बों की कार्य भूमिका के सांख्यिकीय आंकड़ों का विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने तरीके से विश्लेषण किया है। जानकी, अमृत लाई, केएन सिंह, प्रकाश राव, ओपी सिंह, रफीउल्लाह, महामाया मुखर्जी, काजी अहमद, अनन्त पद्मनाभन, अशोक मित्रा और कई अन्य विद्वानों ने अपने–अपने क्षेत्र में नगरों का वर्गीकरण किया है। इनमें से किसी का भी वर्गीकरण न तो दूसरों से कमतर है, न ही बेहतर। लेकिन ये सभी क्षेत्रीय दृष्टिकोण के आधार पर कस्बों की कार्याधारित भूमिकाओं को स्पष्ट करते हैं।

प्रकाश राव ने आंकिक ग्रेडिंग के लिये कस्बों शहरी सुविधाओं और सेवाओं, बस परिवहन सुविधा एवं ग्राहक क्षेत्रों को मानक के रूप में इस्तेमाल किया। रफीउल्लाह ने नगरों की रैंकिंग के लिये वेबर के तरीके को अपनाया। तिवारी ने कुछ आगे बढ़कर मध्य प्रदेश के नगरों–कस्बों को आईबीएम 7044 कंप्यूटर के जरिये विभिन्न मानकों के आधार पर वर्गीकृत किया। ओपी सिंह ने भारत में केन्द्रीय स्थानों के कार्यों के आधार पर विश्लेषण किया। उन्होंने कार्यों की विशेषता और कार्यों के पदानुक्रम के आधार पर अलग–अलग विभाजन किया। पोथाना ने आन्ध्र प्रदेश में आर्थिक आधार पर नगरों का वर्गीकरण किया। महापात्र, त्रिपाठी और सिन्हा ने ओडिशा के छोटे कस्बों के आर्थिक आधार पर कार्यविभाजन किया। रजा, अग्रवाल और मोंदिरा दत्ता ने भारतीय अर्थव्यवस्था में महानगरीय केन्द्रों का परीक्षण कर वर्गीकरण किया।

### अशोक मित्रा का कार्याधारित वर्गीकरण (Ashok Mitra's Functional Classification)

अशोक मित्रा का वर्गीकरण विशुद्ध रूप से 1961 और 1971 की जनगणना में कामगारों के वर्गीकरण पर आधारित है। वर्गीकरण निम्नवत किया गया थाः

- कृषि
- कृषि श्रमिक
- पशुधन, वानिकी, मत्स्यपालन, आखेट, पौधरोपण, बागवानी और अन्य संबद्ध गतिविधियां
- खनन एवं चुगान

- घरेलू–कुटीर उद्योग
- उत्पादन से इतर घरेलू उद्यम
- व्यापार एवं वाणिज्य
- परिवहन, भंडारण एवं संचार
- सेवाएं

प्रथम दो श्रेणियां विशुद्ध रूप से कृषि श्रेणी को प्रदर्शित करती हैं। अन्य श्रेणियां औद्योगिक एवं शहरी श्रेणियों की प्रतीक हैं। ऐसे में प्रारंभिक दो श्रेणियों को छोड़कर बाकी सात श्रेणियों के आधार पर नगरों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

- **उत्पादक नगर (Manufacturing Town):** तीसरी, चौथी, पांचवीं और छठी श्रेणी में कामगारों की संख्या सातवीं और आठवीं श्रेणी में कामगारों की कुल संख्या से तुलनात्मक रूप से कहीं अधिक है। नवीं श्रेणी में कामगारों की संख्या इन सभी श्रेणियों से काफी कम है।
- **व्यापार एवं परिवहन नगर (Trade and Transport Town):** इस वर्ग में सातवीं और आठवीं श्रेणी के कामगारों की प्रतिशतता नवीं श्रेणी के कामगारों की प्रतिशतता से अधिक है। तीसरी, चौथी, पांचवीं और छठी श्रेणियों के कामगारों की संख्या से भी सातवीं आठवीं श्रेणी के कामगारों की संख्या बेहद अधिक है।
- **सेवा प्रदाता नगर (Service Town):** नवीं श्रेणी के कामगारों की संख्या तीसरी, चौथी, पांचवीं और छठी श्रेणियों से कहीं अधिक है, जबकि सातवीं और आठवीं श्रेणी के कामगारों की संख्या तीसरी, चौथी, पांचवीं और छठी श्रेणियों से कम है।

**क्या आप जानते हैं: अशोक मित्रा भारतीय मार्क्सवादी अर्थशास्त्री और राजनेता हैं। वह भारत सरकार के मुख्य आर्थिक सलाहकार रहे। मित्रा ने कलकत्ता डायरी और टर्म्स आफ ट्रेड एंड क्लास रिलेशन्स पुस्तकें लिखी हैं। कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी दैनिक द टेलीग्राफ के लिये वह नियमित रूप से लेख लिखते हैं, जबकि बंगाली में लघु कहानियां भी उन्होंने लिखी हैं। उनके अन्य प्रकाशित लेखन में चाइना इश्यूज इन डेवलपमेंट, फ्रॉम द रैंपर्स, प्रैटलर्स टेल: रिकलेक्शन्स आफ ए कन्ट्रारी मार्क्सिस्ट (इसका बंगाली में अपिला चपला नाम से प्रकाशन हुआ है) शामिल हैं।**

वर्ष 1991 में सभी शहरी स्थानों को उनके कार्यों के महत्व के अनुसार श्रेणीबद्ध करने का प्रयास किया गया। इस प्रक्रिया में औद्योगिक श्रेणियों को पांच आर्थिक गतिविधियों के आधार पर निर्धारित किया गया। इसके आधार पर किया गया वर्गीकरण निम्नवत है:

- **प्राथमिक गतिविधियां (Primary Activities):** 1. कृषि, 2. कृषि श्रमिक, 3. पशुधन, वानिकी, मत्स्यपालन, आखेट, बागवानी और अन्य गतिविधियां
- **उद्योग (Industry):** इसमें उत्पादन, प्रसंस्करण, सेवा और मरम्मत शामिल हैं। इसके तहत 1. घरेलू उद्योग और 2. घरेलू उद्योग से इतर उद्योग 3. निर्माण श्रमिक आते हैं
- **व्यापार (Trade):** व्यापार एवं वाणिज्य
- **परिवहन (Transport):** परिवहन, भंडारण एवं संचार
- **उद्योग (Services):** अन्य सेवाएं

यदि भारत के ऐतिहासिक सन्दर्भ में देखा जाये तो स्पष्ट होता है कि यहां 1951 से ही उपजीविका को वर्गीकरण का प्राथमिक आधार माना गया। लेकिन, इस वर्गीकरण की विफलता का मुख्य कारण यह रहा कि यह निर्धारण किसी शोध के आधार पर नहीं, बल्कि जनगणना आंकड़ों के अनुसार किया गया था। 1951 के जनगणना आंकड़ों में श्रमिकों की उपजीविका और व्यावसायिक श्रेणियों में कई खामियां थीं। कृषि और गैर कृषि श्रेणी की इन खामियां को 1961 की जनगणना में दूर किया गया और इन श्रेणियों को भी जनगणना आंकड़ों में शामिल किया गया। इसके आधार पर श्रेणियां निम्नवत हुयीं:

- कृषक
- कृषि श्रमिक
- खनन, पशुधन, वानिकी, मत्स्यपालन, आखेट, बागवानी एवं संबद्ध गतिविधियां
- घरेलू उद्यम
- उत्पादन उद्योग
- निर्माण
- व्यापार एवं वाणिज्य
- परिवहन, भंडारण एवं संचार
- अन्य सेवाएं

विकास के पैमाने को ध्यान में रखते हुये 1971 की जनगणना में वानिकी, खनन, पशुधन, मत्स्यपालन, आखेट आदि गतिविधियों को अलग–अलग मानते हुये नयी श्रेणियां शामिल की गयीं। 1981 की जनगणना में इसे और अधिक परिष्कृत किया जा सका, जिसके बाद निम्न श्रेणियां उभरीं:

- कृषक
- घरेलू उद्योग
- कृषि श्रमिक
- अन्य कामगार
- सीमांत कामगार

**निष्कर्ष (Conclusion):** व्यापक विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कोई भी विशेष सिद्धान्त भारतीय नगरों को पूरी तरह वर्गीकृत करने में सक्षम नहीं है। विविध क्षेत्र, विकास दर, आजीविका श्रेणियों और विभिन्न कार्यों के आधार पर भारतीय नगरों का समान वर्गीकरण संभव नहीं है। इसके चलते कोई भी सीधा सिद्धांत या आधार इस तरह के वर्गीकरण के लिये उपयुक्त नहीं है।

### 4.3.3 अन्य देशों में नगरों का कार्याधारित वर्गीकरण (Functional Classification of City in Other Countries)

नगरों को उनके कार्यों के आधार पर विभिन्न जोन एवं क्षेत्रों में बांटा गया है। यहां हम इनमें से कुछ पर चर्चा करेंगे, ताकि दुनियाभर में नगरों के वर्गीकरण और इसके लिये अपनाये गये तरीकों को समझ सकें।

**ऑरासो मॉडल (Conclusion)**

ऑरासो ने वर्ष 1924 में विशेष कार्य सिद्धांत दिया। उन्होंने शहरी नियोजन में शहरी भूगोल के महत्व को देखते हुये इसे शहरी अध्ययन का उपक्षेत्र मानने के बजाय स्वतंत्र क्षेत्र माने जाने पर जोर दिया। हालांकि, शहरी भूगोल द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ही प्रमुख सिद्धांत के तौर पर उभरा और शहरी नियोजन व भौगोलिक विकास के लिये आवश्यक कारक बन गया। वर्ष 1921 में एम ऑरासो ने नगरों को छह श्रेणियों में बांटाः

- प्रशासनिक (Administrative)
- सुरक्षा (Defence)
- संस्कृति (Culture)
- उत्पादन (Production)
- संचार (Communication)
- मनोरंजन (Recreation)

उन्होंने नगर को बेहद साधारण स्वरूप में वर्गीकृत किया। शहरीह केन्द्र मानव आबादी के प्रमुख हिस्से के रूप में निश्चित अनिवार्य कार्यों के निष्पादन में अहम भूमिका निभाते हैं। ये कार्य सामान्यतः नगर की समग्र व्यवस्था से प्रभावित होते हैं। प्रशासन इसमें सबसे महत्वपूर्ण भूमिका में होता है, लिहाजा यह सबसे अधिक क्रियाशील भी रहता है। इस तथ्य का प्रमाण इससे भी मिलता है कि प्राचीन काल में राजा अपने प्रशासनिक नगरों को संचार और अन्य सुविधाओं से युक्त स्थानों पर बसाते थे। आज भी राजधानी के रूप में दिल्ली में ही भारत के सभी प्रमुख सरकारी मुख्यालय हैं। इसी तरह सुरक्षा का संबंध नागरिकों से है और ऐसे स्थान देश की सीमाओं पर स्थित होते हैं। सांस्कृतिक स्थानों को राष्ट्रीय संपत्ति के रूप में संरक्षित किया जाता है।

**क्या आप जानते हैंः मार्कल ऑरासो आस्ट्रेलियाई भूगोलवेत्ता, अनुवादक, भूगर्भशास्त्री थे। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद उन्होंने आस्ट्रेलियाई इंपीरियल फोर्स में तैनाती ली। भूगोल के क्षेत्र में 50 साल से भी अधिक समय तक मार्कल का योगदान रहा। जनसंख्या समस्या और व्यवस्थागत पैटर्न पर आधारित उनके औपचारिक बौद्धिक लेखन का प्रकाशन 1918 से 1927 तक हुआ। इस अवधि में 1923–24 में वह अमेरिकन ज्योग्राफिकल सोसाइटी ऑफ न्यूयॉर्क में बतौर भूगोलवेत्ता तैनात थे। उन्होंने अमेरिका में करीब चार वर्ष व्यतीत किये और इस दौरान वह आईजे बोमैन, हरलैन बैरोज और मार्क जेफरसन जैसे प्रख्यात अमेरिकी भूगोलवेत्ताओं के संपर्क में आये। 1920 की जीवनी में ऑरासो भूगोलवेत्ता के तौर पर स्वयं का मूल्यांकन करने के साथ तात्कालिक परिस्थितियों की जानकारी देते हैं। उन्होंने महसूस किया कि उनके योगदान को अपेक्षित पहचान नहीं मिली। उनके शब्दों में, मैं उभरता उभरता सितारा था, लेकिन मैं क्षितिज पर अधिक दूर तक नहीं जा सका।**

**आलोचना (Criticism):**यद्यपि ऑरासो ने नगरों को कार्यों के महत्व के आधार पर वर्गीकृत किया (जो वर्गीकरण का सबसे विश्वसनीय आधार है) फिर भी यह आलोचना से मुक्त नहीं है। इसके कारण निम्न हैंः

- विशिष्ट कार्य सिद्धान्त अत्यधिक सामान्यीकृत हो गया
- एक मुख्य श्रेणी में वर्गीकृत नगर में सामान्य तौर पर अन्य वर्गों की भूमिकाओं की अनदेखी की गयी

- किसी वर्ग का 'कट ऑफ प्वाइंट' अनुमानित प्रतिशत के आधार पर निर्धारित किया जाता है ऐसे में यह व्यक्तिपरक हो जाता है
- आर्थिक आयाम को प्रक्रिया में नजरअंदाज किया गया है, जबकि यह बिन्दु इसलिये अहम है कि किसी नगर को अपने दायरे से बाहर रहने वाले लोगों की जरूरतों को भी जुटाना पड़ता है
- ऑरासो द्वारा कार्यों के आधार पर कई श्रेणियों को प्रस्तुत करने से संशय और भ्रम की स्थिति उत्पन्न होती है, इसका तात्पर्य यह है कि यहां कार्य और अवस्थिति दोनों ही मानक मिश्रित हो गये हैं, उदाहरण के लिये– संचार श्रेणी में आने वाले नगर वस्तुओं के परिवहन का कार्य भी करते हैं, लेकिन यह बिन्दु वर्गीकरण में स्पष्ट नहीं किया गया है
- ज्वारीय सीमा में आने वाले, वृक्षपातन वाले और पुलों वाले नगरों के कार्यों में उनके स्थान की विशेषता (ज्वार, वृक्षपातन आदि) का महत्व स्पष्ट होता है, इससे यह स्पष्ट होता है कि ये नगर संचार के लिहाज से महत्वपूर्ण हैं, सिर्फ स्थान के लिये नहीं। इसी तरह तीर्थ केन्द्र वाले नगर सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण होते हैं, जबकि वे नदियों, घाटियों, पर्वतीय क्षेत्रों में अवस्थित हो सकते हैं।
- विश्वविद्यालयी नगर भी अनुपयुक्त श्रेणी है, क्योंकि इस तरह के विशेषण कार्यों को स्पष्ट नहीं करते, बल्कि यह नगर के समग्र नगरीय कार्यों में से सिर्फ एक विशेषता को ही स्पष्ट करते हैं

**निष्कर्ष (Conclusion):** ऑरासो के वर्गीकरण में महत्वपूर्ण श्रेणियों को स्पष्ट किया गया है जो भावी विशिष्ट सिद्धांतों, तरीकों के लिये अवसर प्रदान करते हैं। शहरी गतिविधियों के आधार पर शहरी केन्द्रों के निर्धारण के लिये यह व्यावहारिक रूप से समग्र व्यवस्था है। हालांकि, कार्याधारित विभिन्नताओं और संबंधित गतिविधियों के लिहाज से यह धुंधली तस्वीर पेश करता है। ऐसे में इसे और बेहतर ढंग से निष्पादित करना आवश्यक हो जाता है।

## हैरिस का मॉडल (Harris's Model)

पूर्ववर्ती शोधकर्ताओं के वर्गीकरण से असंतुष्ट हैरिस ने व्यक्तिपरक और नगरों के कार्यों के आधार पर अत्यधिक आलोचनात्मक स्थिति के विरोध में तर्क दिये। अपने शोधपत्र "A functional classification of the cities in the united states" में उन्होंने आबादी के कारक को वर्गीकरण का बुनियादी आधार बनाया। उन्होंने दो मुख्य कारकों में इन्हें बांटा, ये थे– रोजगार एवं आजीविका। उन्होंने नगरों को इस आधार पर श्रेणियों में वर्गीकृत किया:

- उत्पादन
- खुदरा बिक्री
- विविधता
- थोक बिक्री
- परिवहन
- खनन
- होटल–रिजॉर्ट और मनोरंजन
- अन्य

**क्या आप जानते हैं: हैरिस का कॅरियर नगरों के प्रति उनकी विशेष रुचि से प्रारंभ हुआ। अपने डॉक्टरी शोधपत्र, "Salt Lake City: A Regional Capital" में उन्होंने सेवा संबंधी कार्यों और नगरों पर इनके विस्तृत प्रभाव का विश्लेषण किया। इसके बाद 1941 में हैरिस ने एसोसिएशन ऑफ अमेरिकन ज्योग्राफर्स में शहरों के वर्गीकरण पर अपना पहला शोधपत्र प्रस्तुत किया, जिसे शहरी भूगोल के क्षेत्र में उल्लेखनीय माना जाता है। उपनगरीय क्षेत्रों पर भी उन्होंने 1943 में जर्नल ऑफ सोशियोलॉजी में लेख लिखे। इन शोधपत्रों ने शहरी अध्ययन के क्षेत्र में उन्हें महत्वपूर्ण विद्वान के तौर पर स्थापित किया।**

**हैरिस मॉडल की धारणा (Assumption of Harris Model):** हैरिस द्वारा अपने मॉडल में जिन धारणाओं को शामिल किया गया है, वे निम्नवत हैं:

- जमीन समतल नहीं होती है (बर्गीज मॉडल का सुधार), किसी बड़े नगर में समतल जमीन की तलाश करना बेहद कठिन कार्य होता है। भूखंड की गुणवत्ता नगरीय क्षेत्र की समग्र गतिविधियों, विकास और उन्नति की दिशा को प्रभावित करती है।

- नगर के लोगों के बीच संसाधनों का समान वितरण किया जाता है। विशेषाधिकार या संसाधनों तक विशिष्ट पहुंच का लाभ लेने के दौरान पदानुक्रम को बनाये रखना अनिवार्य नहीं होता है।

- जनसंख्या घनत्व की प्रकृति समरूप होती है। पूरे नगर में लोग समान रूप से रहते हैं, किसी दायरे विशेष में नहीं। यह इसलिये आवश्यक है कि जनसंख्या का असमान वितरण बाजार को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है।

- नगरों में परिवहन लागत भी समान होती है, ग्राहकों पर यात्रा व्यय का अधिक असर नहीं होता है।

- क्षेत्र विशेष में विशिष्ट गतिविधि के संचालन का एकमात्र उद्देश्य लाभ प्राप्त करना होता है। यही वजह है कि उद्योगों की स्थापना मांग पर निर्भर करती है। हालांकि, श्रम लागत, परिवहन लागत, स्थानीय बाजार से निकटता जैसे पहलुओं पर भी विशेष ध्यान देने की जरूरत होती है। स्थान की अवस्थिति का कारक परिवहन लागत और वस्तुओं–सेवाओं की गतिशीलता को भी प्रभावित करता है।

**आलोचना (Criticism):** गणनात्मक तकनीकों और विभिन्न श्रेणियों के चलते हैरिस के नगरीय वर्गीकरण को उत्तरवर्ती वर्गीकरणों के लिये प्रतिमान माना जाता है। हालांकि, उनका वर्गीकरण भी आलोचना से मुक्त नहीं है। उनके वर्गीकरण को व्यक्तिपरक श्रेणियों और कच्चे आंकड़ों के इस्तेमाल के कारण आलोचना के दायरे में रखा गया है। मोजर और स्कॉट (1961) ने नगरों के वर्गीकरण के लिये कुल 5 श्रेणियां विकसित कीं, जो जनसंख्या आकार और ढांचा, जनसांख्यिकीय परिवर्तन, आवास स्वामित्व आदि पर आधारित थीं।

## हॉवर्ड नेल्सन का वर्गीकरण (Howard Nelson's Classification)

नेल्सन ने पूर्ववर्ती वर्गीकरणों में सामने आयी खामियों को दूर करने का प्रयास किया। उन्होंने हैरिस और अन्य विद्वानों के वर्गीकरण के तरीकों का विरोध करते हुये एक निर्दिष्ट प्रक्रिया का उपयोग किया, जिसकी अन्य लोग भी निष्पक्ष जांच कर पाने में संभव हों। उन्होंने अपने वर्गीकरण की बुनियाद विशुद्ध रूप से मुख्य औद्योगिक समूहों पर केन्द्रित रखी। ये समूह 1950 की जनगणना में महानगरीय, नगरीय और ऐसे नगरीय क्षेत्रों के लिये मानक थे, जहां की आबादी 10 हजार या इससे अधिक थी। कृषि, निर्माण जैसे कम महत्व के समूहों को उन्होंने अलग कर दिया और अंतिम रूप से नौ सक्रिय समूहों को निर्धारित किया। हॉवर्ड ने नगर के आकार के अनुसार विभिन्न गतिविधियों में रोजगार की निश्चित प्रतिशतता हासिल की। किसी शहर को कब विशेषीकृत माना जा सकता है, इस सवाल का समाधान उन्होंने खास सांख्यिकीय तकनीक स्टैंडर्ड डिवीजन (Standard Division: SD) के जरिये निकाला।

**क्या आप जानते हैं: नेल्सन ने अमेरिका के शहरों के वर्गीकरण के लिये उसी तकनीक का इस्तेमाल किया, जो ओगासावारा ने चीन के नगरों के लिये प्रयोग की थी। हालांकि, वर्गीकरण से पूर्व नगरों के सेवा ढांचे को नगरों के समग्र ढांचे से अलग कर दिया गया था (Alexandersson, 2015)। हॉवर्ड का विख्यात शोधपत्र A Service Classification of American Cities 1955 में जर्नल ज्योग्राफी में प्रकाशित हुआ।**

किसी शहर को एक से अधिक गतिविधियों और श्रेणियों के अनुसार विशेषीकृत किया जा सकता है। हॉवर्ड ने नगरों की सभी गतिविधियों को plus 1, plus 2, plus 3 श्रेणियों में बांटा है। निम्न सारिणी हॉवर्ड द्वारा चयनित नौ गतिविधि समूहों के आधार पर प्रतिशतता के अनुसार तैयार की गयी है।

**Table 9.2**
*Nelson's Nine Activity Groups (1950)*

| | *Manufacturing* | *Retail Trade* | *Professional Service* | *Transportation and Communication* | *Personal Service* | *Public Administration* | *Wholesale Trade* | *Finances Insurance and Real Estate* | *Mining* |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | *Mf* | *R* | *Pf* | *T* | *Ps* | *Pb* | *W* | *F* | *Mi* |
| Average | 27.07 | 19.23 | 11.09 | 7.12 | 6.20 | 4.58 | 3.85 | 3.19 | 1.62 |
| Standard Deviation | 16.04 | 3.63 | 5.89 | 4.58 | 2.07 | 3.48 | 2.14 | 1.25 | 5.01 |
| Average Plus 1 SD | 43.11 | 22.86 | 16.98 | 11.70 | 8.27 | 8.06 | 5.99 | 4.44 | 6.63 |
| Average Plus 2 SD | 59.15 | 26.49 | 22.87 | 16.28 | 10.34 | 11.54 | 8.13 | 5.69 | 11.64 |
| Average Plus 3 SD | 75.19 | 30.12 | 28.76 | 20.86 | 12.41 | 15.02 | 10.27 | 6.94 | 16.65 |

मान लें कि कोई नगर Pf 2F श्रेणी में वर्गीकृत है तो इसका अर्थ यह है कि यहां 22.87 प्रतिशत से अधिक लेकिन 28.76 प्रतिशत से कम श्रम बल पेशेवर सेवाओं से जुड़ा है। इसी तरह 4.44 या इससे अधिक लेकिन 5.69 प्रतिशत से कम लोग वित्तीय, बीमा और रियल इस्टेट के काम से जुड़े हैं। सारिणी से यह तय होता है कि कोई शहरी केन्द्र मुख्यतः किस तरह की गतिविधि से संबद्ध किया जा सकता है। यदि कोई नगर इनमें से किसी भी मानक में शामिल नहीं हो पाता है तो नेल्सन के वर्गीकरण के अनुसार वह नगर विविध गतिविधियों का केन्द्र हो सकता है।

**निष्कर्ष (Conclusion):** विभिन्न शोधकर्ताओं ने हॉवर्ड के मॉडल को नगरों के वर्गीकरण में प्रयोग किया है। महाराष्ट्र के लातूर जिले का वर्गीकरण इस माध्यम से करने पर स्पष्ट हुआ कि जिले का उदगिर कस्बा कृषि कार्यों में सबसे आगे था। इसी तरह लातूर खनन और वानिकी, अहमदपुर और लातूर आवासीय सुविधाओं, उदगिर निर्माण, लातूर और निलंग व्यापार एवं वाणिज्यिक गतिविधियों में आगे थे। वहीं, ऑसा तहसील किसी भी श्रेणी में शामिल नहीं हो सकी (वेलापुरक, राठौड़ और कल्गापुरे, 2001)। इससे स्पष्ट है कि नेल्सन हॉवर्ड का मॉडल अविकसित औद्योगिक क्षेत्रों के लिये उपयुक्त नहीं है।

## 4.4 ताजा अध्ययनों का समालोचनात्मक विश्लेषण (Critical Analysis of Recent Studies)

संघमित्रा ने महानगरों के कार्याधारित वर्गीकरण के लिये अशोक मित्रा के मॉडल का उपयोग किया। उन्होंने भारत के 12 महानगरों में वर्ष 1901 से 1971 तक कार्याधारित गतिविधियों का अध्ययन किया, जिसके लिये 1961 की जनगणना के आधार पर नौ औद्योगिक श्रेणियों में कामगारों का विश्लेषण किया। यह उस दौर में गैर कृषि कार्यों में कार्यबल के खिसकने के कारणों को जानने का प्रयास था। इसके माध्यम से कार्य, कार्यों में सहभागिता –विशेष रूप से महिलाओं की– की दर को जानने की कोशिश की गयी। इसके तहत तीन बुनियादी वर्गीकरण किये गये

- सेवा प्रदाता क्षेत्र (Service Town Sector)
- औद्योगिक नगर (Industrial Towns)
- व्यापार एवं परिवहन नगर (Trade and Transport Towns)

इसी तरह रेड्डी और राव (1981) नगरीय क्षेत्र में संतुलन की स्थिति का वर्णन करते हैं। उनके अनुसार नगर के अभिकेन्द्रीय कार्य आंतरिक इलाकों और आवृत्त क्षेत्र में उत्पन्न होते हैं, नगरीय कार्यों के इन दोनों पहलुओं से नये संबंध व्युत्पन्न किये जाते हें। वहीं, सोनी (1981) ने हॉवर्ड नेल्सन के मॉडल के आधार पर लखनऊ के परिनगरों में सेवा केन्द्रों का कार्याधारित वर्गीकरण और विश्लेषण किया। उनके अध्ययन में कुल 67 सेवा केन्द्र चिह्नित किये गये। इनमें से 16 एकल कार्याधारित थे, जबकि 23 युगल कार्याधारित यानी एक साथ दो कार्यश्रेणियों में शामिल थे। 22 केन्द्र तीन कार्यश्रेणियों में रखे गये, जबकि पांच बहुकार्य आधारित रहे।

सिंह (2014) ने हरियाणा के छोटे और मध्यम कस्बों के आकार, कार्य और अवस्थापना विकास का अध्ययन करते हुये इस राज्य में शहरी विकास, स्थानिक वितरण, कार्यों के गुणों में होने वाले बदलाव को स्पष्ट किया। उनके शोधकार्य में वर्ष 1961 से 1991 तक यानी तीस वर्ष की अवधि में तीन चिह्नित छोटे और मध्यम कस्बों के अंतरसंबंधों और परस्पर अन्य व्यवस्थाओं को भी प्रमुखता से इंगित किया गया। यह स्पष्ट हुआ कि इस अवधि में हरियाणा के अधिकतर कस्बाई नगर आकार में छोटे या मध्यम थे। यह भी साफ हुआ कि छोटे कस्बे दरअसल वे विकसित गांव थे, जहां आबादी सघन थी। शाही (1989) ने शहरी केन्द्रों के कार्यों का अध्ययन किया और उनके कार्याधारित विश्लेषण के लिये उन्होंने आकार की श्रेणी का उपयोग किया। बाद में शहरी केन्द्रों को कार्यों की विशेषता और पदानुक्रम के आधार पर पांच कार्याधारित श्रेणियों में बांटा गया। इसका मकसद जनसंख्या आकार के अनुरूप कार्यों का तुलनात्मक विश्लेषण एवं नगरों की समग्र व्यवस्था के संबंध को समझना था। इसके साथ ही एक छठी श्रेणी विविध नगर (Diversified Town) भी जोड़ी

गयी। इसमें उन नगरों को शामिल किया गया, जो पूर्वनिर्धारित विशिष्ट कार्याधारित श्रेणियों में शामिल नहीं हो पाते।

निगम ने लखनऊ का अध्ययन किया और विभिन्न क्षेत्रों में कार्यों के पृथक्कीकरण या विभाजन की प्रवृत्ति को स्पष्ट किया। बताया कि मुख्य व्यावसायिक क्षेत्र नगर के आंतरिक क्षेत्र में स्थित हैं, जबकि आवासीय क्षेत्र परिधीय क्षेत्र में। इसी तरह प्रशासनिक क्षेत्र मुख्यतः मध्य में मिले तो शिक्षण संस्थान मध्य और बाहरी क्षेत्रों में अवस्थित हैं। नगर के दक्षिण–पश्चिमी क्षेत्र का विकास औद्योगिक क्षेत्र के रूप में हुआ है, जबकि बैरक–क्वार्टर के साथ कैंटोन्मेंट दक्षिण की ओर उपनगरीय इलाके में है। अस्पताल मध्य क्षेत्र में पश्चिम की ओर स्थित हैं। कृषि कार्यों ने लगभग पूरे नगर को पश्चिम, उत्तर के उपनगरीय क्षेत्र और दक्षिण की ओर से बाहरी क्षेत्र से चारों ओर से घेरा हुआ है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि लखनऊ में वे सभी कार्य भी पाये गये जो बड़े नगरों में होते हैं। इस तरह लखनऊ को विविध श्रेणी में रखा गया। चूंकि कार्यों के आधार पर यह एक तरफ प्रदेश की राजधानी है तो दूसरी ओर सेना का क्षेत्रीय मुख्यालय भी। यह एक विश्वविद्यालयी नगर भी है तो बड़ा सेवा प्रदाता केन्द्र भी।

## 4.5 निष्कर्ष (Conclusion)

व्यापक विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कोई भी विशिष्ट सिद्धांत भारतीय नगरों के वर्गीकरण के लिये पूरी तरह उपयुक्त नहीं है। भारतीय नगरों में विविध क्षेत्र, विकास दर, व्यावसायिक एवं उपजीविका श्रेणियां और कार्यों के अलग–अलग वर्ग–श्रेणी मिलती हैं। ऐसे में कोई एक सीधा फार्मूला यहां श्रेणियां तय कर पाने में पूरी तरह सक्षम नहीं है। नगरीकरण की प्रक्रिया नगरीकरण से जुड़ी कई अन्य प्रक्रियाओं से संबद्ध होती है, जिनमें लगातार बदलाव दर्ज किया जाता है। सामान्यतः यह माना जाता है कि शहरी विकास की प्रक्रिया आर्थिक गतिविधियों के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभावों पर निर्भर करती है। इनमें उत्पादक उद्योगों का विस्तार, सेवा केन्द्रों का विकास आदि पहलू शामिल हैं।

## 4.6 अभ्यास प्रश्न (Model Questions)

- नगरों के कार्याधारित वर्गीकरण से आप क्या समझते हैं? नगर के विकास के विभिन्न चरण क्या हैं?
- भारतीय शोधकर्ताओं द्वारा किये गये नगरों के कार्याधारित वर्गीकरण की विस्तार से जानकारी दें।
- विदेशी शोधकर्ताओं द्वारा किये गये नगरों के वर्गीकरण को विस्तार से समझायें।
- नगरों के कार्याधारित वर्गीकरण को लेकर किये गये ताजा अध्ययनों के बारे में विस्तार से लिखें।
- आप जिस नगर में रहते हैं, उसे ध्यान में रखते हुये वर्गीकृत करने का प्रयास करें। आपके नगर को वर्गीकृत करने के लिये कौन सा सिद्धांत उपयुक्त है और क्यों, विस्तार से समझायें।

## 4.7 भावी अध्ययन (Further Readings)


- Duhl, leonard, j (1986), "The healthy city: Its function and its future", Health Promotion International, Volume 1, Issue 1, Pages 55–60,https://doi.org/10.1093/heapro/1.1.55
- Hoyt, Homer (1962), Function Of the Ancient and the Modern City, Land Economics, University Of Wisconsin Press, Vol.3, Pp-241-247
- Hans Blumenfeld (1943), Forms and Function in urban community, "The journal of American of architectural historians", vol. 3, number ½, the history of city planning, pp.11-21
- Smith, Robert, H.T. (1965), Method and purpose in functional town classification, Annals of the Association of American Geographes,Taylor and
- francis,Vol.55,No.3 ,1965,pp.539-548
- Mitra Ashok (1973), Functional classification of Indian town, Institute of Economic Growth New Delhi
- M.N .Nigam (1964),Functional Regions Of Lucknow ,National Geographical Regions Of India ,Volume X Part-1,Pp 38-52
- Reddy,N.B.K. and Rao, D.S.(1981),"An equilibrium function in a city region",vol.2,NAGI,1981
- Shahi (I 989), '"Rank-Size Relationship and Hierarchy of Urban Centres"(In Prof. Jagdish Singh Edt. "Urban Analysis Of Gujarat: A Geographical Analysis"), Chapter 5. Pp 122-155, Institute of Rural Development, Gorakhpur
- Singh, Kuldip (2014), "size, functions and infrastructural development in small and medium towns of Haryana", Ethesis, Shodhaganga, Inflibnet
- Venable, Anthony, J. (2017), "Breaking Into Tradable: Urban Form and Urban Function in A Developing City", Journal or Urban Economics, Volume 19, Pp.88-97, Https://Doi.Org/10.1016/J.Jue.2017.01.002

इकाई– 5

## नगरीकरण, नगरीयता एवं नगरवाद
## (Urbanization, Urbanism, Urbanity)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 नगरीकरण की अवधारणा एवं परिभाषा

5.3 नगरीकरण की विशेषताएं

5.4 नगरीकरण से संबंधित समस्यायें

5.5 नगरीकरण का जाति पर प्रभाव

5.6 भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया एवं प्रभाव

5.7 नगरीयता का अर्थ एवं परिभाषा

5.8 नगरीयता की विशेषताएं

5.9 नगरीयता एवं नगरीकरण में अन्तर

5.10 नगरवाद का अर्थ एवं परिभाषा

**5.11 नगरवाद की विशेषताएँ**

**5.12 नगरीकरण, नगरीयता एवं नगरवाद में अंतर**

**5.13 नगरवाद से उत्पन्न समस्याएँ**

**5.14 सारांश**

**5.15 अभ्यास/बोध प्रश्नों के उत्तर**

**5.16 संदर्भ ग्रंथ सूची**

**5.17 निबंधात्मक प्रश्न**

## 5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समझ सकेंगे–

1. नगरीकरण किसे कहते हैं तथा इसकी विशेषतायें।
2. नगरीकरण से उत्पन्न समस्यायें एवं जाति में प्रभाव।
3. भारत में नगरीकरण के पढ़ने वाले प्रभाव।
4. नगरीयता की अवधारणाा एवं इसकी विशेषतायें।
5. नगरीयता एवं नगरीकरण में क्या अन्तर है?
6. नगरवाद की परिभाषा एवं इससे उत्पन्न विभिन्न समस्यायें।
7. नगरीकरण एवं नगरवाद में मुख्य अन्तर।

## 5.1 प्रस्तावना

नगरीकरण की प्रक्रिया का अभिप्राय उस प्रक्रिया से लगाया जा सकता है। जिसमें कोई भी स्थान नगर से सम्बन्धित अनेकों विशेषताओं का अपनाता है। यद्यपि नगरीयता एव नगरीय वाद को नगरीकरण का ही स्वरूप मान लिया जाता है, जबकि इनमें काफी अन्तर पाया जाता है। वास्तव में नगरीकरण का सीधा सम्बन्ध नगर से लगाया जाता है, जो क्षेत्र विशेष के अनुरूप पृथक–पृथक पाया जाता है। वास्तव में नगरीकरण, नगरीयता एवं नगरवाद, नगरीय जीवन से जुड़ी एक ऐसी अवधारणा है जो नगरीकरण के कारणों एवं परिणामों का विश्लेषण करती है। जो विकासशील देशों में नगरीकरण के कुप्रभावों की तीव्रता को स्पष्ट किया है। अतः इस दृष्टिकोण से नगरीकरण, नगरीयता एवं नगरवाद का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है।

## 5.2 नगरीकरण की अवधारणा एवं परिभाषा

नगरीकरण का तात्पर्य नगर और नगर से जुड़ी अनेकों ऐसी विशेषताओं से है जो ग्रामीण क्षेत्रों की विशेषताओं से बिल्कुल अलग है। भारत में पिछले कुछ दशकों से नगरीकरण की प्रक्रिया में तीव्रता आयी है। जिसका प्रमुख कारण जनसंख्या वृद्धि से लगाया जा सकता है। ऐसा माना जाता है कि जैसे–जैसे जनसंख्या वृद्धि होती है। वैसे–वैसे ग्रामीण क्षेत्र से नगरीय जीवन की ओर जनता पलायन करती है। नेल्स एण्डरसन ने कहा है कि 'नगरीकरण' प्रायः बड़े नगरों में केन्द्रित है ओर उद्योग की ओर उन्मुख है। इसे प्रायः पाश्चात्य कहा जाता है और एक जीवन के ढंग के रूप में नगरीयता कहा जाता है। भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया दो तरीकों से विकसित हुई है। प्रथम औद्योगीकरण के

कारण जब किसी स्थान पर उद्योग स्थापित किये जाते हैं तो उन उद्योगों में कार्य करने के लिए आस–पस के लोग निरन्तर आकर वहीं बस जाते हैं और इस प्रकार जनसंख्या बढ़ती है। और वह नगर का रूप ले लेती है। द्वितीय, धार्मिक भावनाओं से नगरों का विकास भारत एक धर्म प्रधान देश है। इसलिए धार्मिक भावनाओं से नगर बसे हैं। जब किसी एक स्थान विशेष पर लोगों की धार्मिक भावनायें जुड़ जाती है, तो लोग दूर दूर से आकर वहां धार्मिक भावनायें प्रकट करते हैं और कुछ वहीं बस जाते हैं। इस प्रकार जनसंख्या की बहुलता नगर का विकास करती है।''1

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नगरों के विकास की प्रक्रिया को ही नगरीकरण कहा जाता है। अब यहाँ पर एक प्रश्न उठता है कि वास्तव में नगर या नगरीय क्षेत्र किसे कहा जाता है? नगर की अवधारणा को प्रायः जनसंख्यात्मक और समाजशास्त्रीय अर्थों में विभक्त किया गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि नगर की जनसंख्या, घनत्व तथा नगर की विषयमता, पारस्परिक निर्भरता व जीवन स्तर व गुणवत्ता आदि के आधार पर नगर को परिभाषित किया जा सकता है। सरल शब्दों में कहा जाये तो नगर उस स्थान को कहा जा सकता है। जहाँ जनसंख्या का घनत्व अधिक होता है तथा समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से लोगों के मध्य औपचारिक सम्बन्ध पाये जाते हैं। लुईस बर्थ ने नगरीय समाज का ग्रामीण समाज से अन्तर करते हुए नगर को तीन आधारभूत विशेषताओं के आधार पर परिभाषित किया है–जनसंख्या का आकार, घनत्व और विषयमता। इन विशेषताओं का अर्थ है कि यद्यपि नगर निवासी, ग्रामवासियों की अपेक्षा अधिक मानवीय सम्पर्कों का अनुभव करेगा। किन्तु वह अधिक अकेलापन भी अनुभव करेगा, क्योंकि उन सम्पर्कों की प्रकृति भावनात्मक रूप से शून्य होगी। लुईस बर्थ के अनुसार नगरों में सामाजिक अंतक्रिया जो कि नगरों की विशेषता है।

अवैयक्ति, खण्डीय, दिखावटी, अस्थाई और सामान्यतः विशुद्ध रूप से व्यवहारिक और साधन होती है। इसनको लुईस बर्थ द्वितीयक सम्पर्क कहते हैं, जो ग्रामीण क्षेत्रों के प्राथमिक सम्पर्कों से बिल्कुल भिन्न होते हैं।[2]

इस प्रकार नगरीकरण के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि नगरीकरण एक सामाजिक परिवर्तन की ही प्रक्रिया है। जिसमें ग्रामीण समाज धीरे–धीरे नगरीय समाज में परिवर्तित होने लगता है। नगरीकरण की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए अनेकों विद्वानों ने अलग–अलग परिभाषायें दी हैं। जो निम्नांकित है–

1. बर्जल के अनुसार–''ग्रामीण क्षेत्रों को नगरीय क्षेत्रों में परिवर्तित होने की प्रक्रिया को ही हमें नगरीकरण कहना चाहिए। इस प्रक्रिया का गांव की जनसंख्या की आर्थिक संरचना पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जिस अनुपात में ग्रामीण जनसंख्या धरती है। ठीक उसी अनुपात से नगर की जनसंख्या में भी वृद्धि होती है।
2. बर्गेल–''ग्रामीण क्षेत्रों के नगरीय क्षेत्रों में परिवर्तन होने की प्रक्रिया का नाम ही नगरीकरण है।''
3. किग्सले डेविस–''नगरीकरण वह प्रक्रिया है जिसके निर्धारण का महत्वपूर्ण आधार जनसंख्या का एक न्यूनतम स्तर नागरिक प्रशासन तथा मुद्रा अर्थ व्यवस्था है।
4. वारेन थामसन–''नगरीकरण एक प्रक्रिया है। जिसमें कृषि से सम्बन्धित समुदाय के लोग धीरे–धीरे ऐसे बड़े समूहों के रूप में परिवर्तित होने लगते है, जिनकी क्रियायें उद्योग, व्यापार, वाणज्यि तथा सरकारी कार्यालयों से सम्बन्ध होती है।

5. नेल्सन एन्डरसन– ''नगरीकरण का तात्पर्य केवल गाँवों के लोगों का शहरों की ओर बढ़ना अथवा कृषि को छोड़कर व्यापार या नौकरी करना ही नहीं है, बल्कि इस प्रक्रिया में व्यक्तियों के विचारों, व्यवहारों, मनोवृत्तियों और मूल्यों में होने वाला परिवर्तन भी सम्मिलित हैं।
6. थामसन वारन–''एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइन्सेज में नगरीकरण की परिभाषा को इस प्रकार परिभाषित किया है–यह ऐसे समुदायों के व्यक्तियों का जो प्रमुख रूप से या पूर्णरूप से कृषि से जुड़े हुए है। उन समुदायों में जाना है, जो साधारणतया (आकार में) उनसे बड़े हैं और जिनकी गतिविधियाँ मुख्य रूप से सरकार, व्यापार, उत्पादन या इनसे सम्बद्ध कारोबारों पर केन्द्रित हैं।''
7. एम0 एन0 श्रीनिवास ने लिखा है–नगरीकरण से तात्पर्य केवल सीमित क्षेत्र में अधिक जनसंख्या से ही नहीं है, अपितु सामाजिक आर्थिक सम्बन्धों में परिवर्तन से भी है।
8. गेराल्ड ब्रीज ने नगरीकरण की परिभाषा को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि नगरीकरण एक प्रक्रिया है, जिसके कारण लोग नगरीय कहलाने लगते हैं शहरों में रहने लगते है। खेती के स्थान पर अन्य पेशों को अपनाने लगते हैं। जो नगरों में उपलब्ध है और व्यवहार प्रतिमान में अपेक्षाकृत परिवर्तन का समावेश करते हैं।
9. उकेक के अनुसार–''अपने अधिक साधारण और जनांकिकीय अर्थों में नगरीकरण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसके द्वारा जनसंख्या एक निर्दिष्ट आकार से भी अधिक झुण्डों में एकत्रित होने की प्रवृत्ति रखती है।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट होता है कि वास्तव में नगरीकरण एक निरन्तर चलने वाली एक ऐसी परिवर्तनशील प्रक्रिया है, जो ग्रामीण एवं नगरीय जीवन में एक प्रकार से विभेद उत्पन्न करती है। जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों की जनसंख्या का नगरीय क्षेत्रों में पलायन को भी समझा जा सकता है। इस प्रकार नगरीकरण वह प्रक्रिया है। जिसमें नगरों की जनसंख्या में लगातार वृद्धि होती रहती है तथा व्यक्तियों द्वारा नगरीय जीवन सम्बन्धी व्यवहार को भी अपनाया जाता है। जिसमें नगरीय जीवन शैली मनोवृत्तियों एवं नगरीय व्यवहार एवं दृष्टिकोण आदि हैं।

## 5.3 नगरीकरण की विशेषतायें

1. **जनसंख्या की अधिकता**– नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक पाया जाता है, जिसमें प्रायः अलग–अलग धर्म एवं जाति के लोग निवास करते हैं।
2. **गैर कृषि व्यवसायों की अधिकता**–जैसा कि सर्वविदित है। नगरों की स्थापना में व्यापार एवं उद्योग–धंधों का एक महत्वपूर्ण स्थान है। व्यापार एवं उद्योग–धंधों के विकास ने नगरीकरण की प्रक्रिया को जन्म दिया। एक प्रकार से नगरीकरण का प्रमुख आधार व्यापार एवं कृषि से अलग व्यवसाय है। अतः एक ओर जहाँ सम्पूर्ण ग्रामीण समाज कृषि अर्थव्यवस्था पर आधारित है। वहीं दूसरी ओर नगरीकरण की अर्थव्यवस्था गैर कृषि व्यवसायों पर आधारित है।
3. **सामाजिक गतिशीलता**– नगरीकरण की प्रमुख विशेषता सामाजिक गतिशीलता है। बेरोजगारी, उच्च जीवन स्तर की लालसा, सामाजिक प्रतिष्ठा, शैक्षणिक स्थिति तथा उच्च आर्थिक स्तर प्राप्त करने के लिए व्यक्ति ग्रामीण समाज से नगरीय समाज की ओर पलायन करता हैं ये सारे आधार ऐसे हैं, जो सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा दते हैं।

4. **सामाजिक विभेदीकरण**– नगरीकरण की दूसरी प्रमुख विशेषता सामाजिक विभेदीकरण है। हम सभी जानते हैं कि नगरों में विभिन्न धर्म, जाति, वर्ग तथा विभिन्न जीवन स्तर के लोग जीवन–यापन करते हैं। अतः प्रत्येक व्यक्ति के मध्य अनेकों सामाजिक विभेदीकरण या अन्तर पाया जाता है। जो अलग–अलग समूहों में विभक्त होता है। यहां पर यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि सामाजिक विभेदीकरण होने के पश्चात ही प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे पर पारस्परिक निर्भर होता है तथा समूह में प्रत्येक कार्यों का निर्वह्न आपस में मिलजुल कर किया जाता है।
5. **द्वितीयक तथा औपचारिक सम्बन्धों की अधिकता**– नगरों में प्रायः व्यक्तियों के मध्य द्वितीयक तथा औपचारिक सम्बन्धों की अधिकता पायी जाती है। प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के साथ स्वार्थ सम्बन्धों के आधार पर बंधे हुए होते हैं।
6. **सुख–सुविधाओं के साधनों की प्रचुरता**–सुख– सुविधाओं की प्रचुरता भी नगरीकरण की एक प्रमुख विशेषता मानी जा सकती है। वर्तमान समय में प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में प्रत्येक सुख–सुविधाओं का उपभोग एवं उच्च जीवन स्तर की लालसा रखता है। पग्रति नये–नये आविष्कार, आवागमन के साधनों की प्रचुरता, शैक्षणिक, चिकित्सीय एवं मनोरंजन सम्बन्धी अनेक साधन नगरीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा देते हैं।
7. **भौतिक सभ्यता एवं संस्कृति**– नगरीकरण की एक प्रमुख विशेषता भौतिक संस्कृति एवं आधुनिक सभ्यता है। जिसके आकर्षण में बँध कर मानव नगरों की ओर जाकर वहाँ अपना जीवन–यापन करना अधिक सुलभ एवं सरल मानते हैं।

इस प्रकार उपयुक्त विशेषताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि नगरीकरण वास्तव में नगरीय उद्योग–धन्धों, व्यवसाय एवं सुख–सुविधाओं के साधनों की प्रचुरता की ही देन है, जिसमें व्यक्तियों के मध्य द्वितीयक एवं अनौपचारिक सम्बन्ध पाये जाते हैं। यद्यपि व्यक्तियों के मध्य भावनात्मक लगाव का अभाव पाया जाता है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रत्येक दूसरे व्यक्ति पर निर्भर होता है। आवश्यकताओं, उच्च जीवन स्तर की लालसा तथा महत्वकांक्षाओं एवं अपेक्षाओं के स्तर ने सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा दिया है, जिससे व्यक्ति ग्रामीण समाज से नगरों की ओर पलायन कर रहे हैं।

## 5.4 नगरीकरण से सम्बंधित समस्यायें

ऐसा माना जाता है कि जब समाज में किसी प्रकार का भी परिवर्तन होता है तो सदैव उसके सकारात्मक एवं नकारात्मक परिणाम दृष्टिगत होते हैं। भारतीय समाज भी इससे अछूता नहीं है। नगरीकरण की वृद्धि ने जहाँ एक ओर नगरीकय समाज को विकसित एवं प्रगतिशील बनाने में अपनी एक विशेष भूमिका का निर्वह्न किया है। वहीं दूसरी ओर नगरीकरण की प्रक्रिया ने कई गम्भीर समस्याओं को भी जन्म दिया है। नगरीकरण से उत्पन्न होने वाली कई समस्याओं को निम्नांकित आधार पर समझा जा सकता है–

1–मलिन बस्तियों की समस्या– नगरीकरण की तीव्र वृद्धि के कारण नगरों की जनसंख्या में भी तीव्र गति से वृद्धि हुई है। नगरों में जहाँ एक ओर तीव्र गति से जनसंख्या वृद्धि हुई है उस अनुपात में आवास या मकानों की साथ में वृद्धि नहीं हो पायी है।

अतः परिणामस्वरूप मलिन बस्तियाँ या गंदी बस्तियों का निर्माण होने लगा। 'गन्दी बस्तियाँ नगर के उस भाग अथवा क्षेत्र का नाम है जहाँ घने रूप से बसे हुए अत्यधिक गन्दे और टूटे–फूटे मकानों में निम्न आय वाले गरीब लोग अथवा श्रमिक कम स्थान में जीवन व्यतीत करते हैं।''[3]

ग्रामीण समाज में रोजगार की कमी के कारण बड़ी संख्या में रोजगार पाने के लिए प्रतिदिन नगरों में लाखों की संख्या में श्रमिक वर्ग प्रवेश करता है। नगरों में उन्हें रोजगार तो मिल जाते हैं, परन्तु स्थान का अभाव होने के कारण इन्हें गन्दी तथा अस्वास्थ्यकारी मलिन बस्तियों (कम किराये की छोटी–छोटी कोठरियों) में निवास करना पड़ता है। डॉ0 मुकर्जी ने इस सम्बन्ध में कहा है कि औद्योगिक केन्द्रों की गन्दी बस्तियों की दशा इतनी भयंकर है कि यहां मानवता का नाश हो रहा हैं महिलाओं का जीवन अपमानित है और अबोध शिशुओं का दम घुट रहा है।''[4] मलिन बस्तियाँ नगरीकरण की एक प्रमुख समस्या के रूप में उभर कर सामने आ रहा है। सीलन होने तथा रोशनी के अभाव में ये बस्तियाँ अनेक रोगों को भी जन्म दे रही है। जिसमें प्रमुख रूप से संक्रामक रोग, अस्थमा, डायरिया तथा टी0बी0 है। मलिन बस्तियां एक तरह से अपराधिक गतिविधियों का भी अड्डा बनता जा रहा है। इसके अलावा इन बस्तियों में नशाखोरी, जुआ, वैश्यावृत्ति एवं चोरी जैसे अपराध भी दिन प्रतिदिन बढ़ रहे हैं। इन मलिन बस्तियों में इन सब समस्याओं के अतिरिक्त व्यक्तियों में अवसाद, निराशा तथा कुण्ठा की भावना में भी बढ़ोत्तरी हो रही है। मलिन बस्तियों में प्रमुख रूप से मुम्बई की चोले, कलकत्ता की बस्तयों, तथा चेन्नई में चरियां तथा कानपुर के पुरवा तथा आहाते आदि हैं।

2–विघटन की समस्या– नगरीकरण के कारण एक प्रमुख समस्या व्यक्ति का वैयक्तिक विघटन तथा पारिवारिक विघटन होता है। ग्रामीण समाज से जब एक व्यक्ति नगरीय समाज में प्रवेश करता है, तो अधिकांशतः नये परिवेश में वह सामंजस्य नहीं बिठा पाते। अतः व्यक्तियों में वैयक्तिक विघटन होने लगता है, जिसके परिणमास्वरूप व्यक्ति तनावग्रस्त एवं निराशा से परिपूर्ण होने लगता है। इन परिस्थितियों से मुक्त होने के लिए व्यक्ति वेश्यागमन तथा नशाखोरी करने लगता है। पारिवारिक नियंत्रण न होने के कारण व्यक्ति आपराधिक गतिविधियों में भी लिप्त हो जाता है। जो कई प्रकार की समस्याओं को उत्पन्न करने लगता है।

इसके साथ ही नगरीकरण की प्रक्रिया ने पारिवारिक विघटन को भी बढ़ा दिया है। इस प्रक्रिया ने परम्परागत संयुक्त परिवार की प्रणाली को पूर्णरूप से विघटित करने दिया है। पति–पत्नी दोनों के कार्यरत् होने के कारण बच्चों को पूर्णरूप से स्वतंत्रता प्राप्त होने से वह आपराधिक गतिविधियों में लिप्त हो जाते हैं माता–पिता के अत्यधिक व्यस्त हो जाने के कारण बच्चों का जीवन अपेक्षापूर्ण एवं निराश एवं तनावग्रस्त हो जाता है।

पारिवारिक विघटन होने के कारण व्यक्ति धीरे–धीरे अपने अन्य पारिवारिक सदस्यों से दूर होने लगता है। जिससे परिणामस्वरूप बीमारी, बेकारी तथा गंभीर दुर्घटना हो जाने पर व्यक्ति को परिवार के अन्य सदस्यों का सहयोग नहीं मिल पाता, जिससे व्यक्ति का जीवन निर्वह्न तक दुखदायी एवं कष्टों से परिपूर्ण हो जाता है। अतः कहा जा सकता है। नगरीकरण की प्रक्रिया ने जहां एक ओर विकास को एक नयी दिशा दी है। वहीं दूसरी ओर सामाजिक एवं पारिवारिक विघटन जैसी कई गम्भीर समस्याओं को भी जन्म दिया है।

3–प्रवर्जन या पलायन की समस्या– प्रत्येक व्यक्ति अपने मूल स्थान से प्रवर्जन या पलायन इसलिये करता है, जब व्यक्ति की मूलभूत आवश्यकतायें भी पूर्ण नहीं हो पाती। रोजगार की कमी अच्छे

जीवन स्तर की लालसा। ये देनों ही ऐसी चीजें हैं जो व्यक्ति को नगरों की ओर पलायन करने के लिए विवश करता है। भारत में प्रवर्जन के चार स्वरूप हैं–

- ग्रामीण से ग्रामीण
- ग्रामीण से नगरीय
- नगरीय से नगरीय
- नगरीय से ग्रामीण

यद्यपि ग्रामीण से ग्रामीण प्रवर्जन अभी तक सबसे अधिक प्रचलित पलायन का रूप है। परन्तु ग्रामीण से नगरीय और नगरीय से नगरीय प्रवर्जन अभी इतना ही महत्वपूर्ण है।''[5]

ग्रामीण दरिद्रों के शहर में प्रवेश राजस्व के स्रोतों को कम करते हैं दूसरी ओर आजकर धनवान व्यक्ति उपनगरीय क्षेत्रों में रहना अच्छा समझते हैं। धनवान व्यक्तियों के पलायन से नगर की वित्तीय हानि होती है। इस प्रकार का श्हार में प्रवर्जन और शहर से दूर प्रवर्जन से समस्यायें बढ़ती हैं।''[6]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि पलायन या प्रवर्जन एक ऐसी मुख्य समस्यायें हैं। जो ग्रामीण समाज को तो खोखला कर ही रही है साथ ही नगरों में भी अनेकों समस्याओं को जन्म देती है।

4– **प्रदूषण की समस्या–** नगरीकरण एवं औद्योगीकरण के कारण एक विश्वस्तरीय प्रमुख समस्या प्रदूषण की समस्या है। उद्योगों एवं कारखानों से उठने वाले प्रदूषित धुंए ने सम्पूर्ण वायुमण्डल की एक तरह से पूरी तरह प्रदूषित कर दिया है। साथ ही इन उद्योग का गन्दा पानी एवं औद्योगिक अपविष्ट नदियों में बहा दिया जाता है। जिससे नदियों का पानी पूरी तरह से प्रदूषित हो गया है। इस प्रकार कहा जा सका है कि प्रदूषित धुंए एवं अपविष्ट औद्योगिक निकासी ने जल तथा वायु प्रदूषण को जन्म दिया है जिससे अनेकों गम्भीर बीमारियों का सामना जन जीवन को करना पड़ रहा है।

बनार्ड ने चार प्रकार के प्र्यावरण बताए हैं– भौतिक, जैविक, सामाजिक एवं मिश्रित, सामाजिक में शारीरिक मनोवैज्ञानिक तथा मिश्रित में आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक पर्यावरण को सम्मिलित किया है। नगरीकरण पर्यावरण को अनेक तरह से प्रदूषित किया है। सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रदूषण, जल, हवा एवं ध्वनि प्रदूषण नगर की प्रमुख विशेषता बन गई है। इस तरह जैसे–जैसे नगरीकरण बढ़ रहा है, वैसे–वैसे प्रदूषण भी बढ़ रहा है। शिक्षा के कारण व्यक्ति अविवेकी एवं धर्म निरपेक्ष भी होता जा रहा है।''[7]

5– **सामुदायिक विघटन–** इलियट और मैरिल का कथन है–''सामुदायिक विघटन एक ऐसी जटिल प्रक्रिया है जिसमें उन सभी समूहों, संस्थाओं तथा ऐच्छिक समितियों का आंशिक अथवा पूर्ण विघटन हो जाता है। जिनकी संयुक्त गतिविधियों द्वारा समुदाय की अन्तःक्रियाओं का निर्माण होता है।''[8]

जैसा कि इलियट और मैरिल ने कहा है कि सामुदायिक विघटन सम्पूर्ण समाज को विघटित कर देता है। नगरीकरण के द्वारा संयुक्त परिवार धीरे–धीरे एकल परिवारों में परिवर्तित हो रहे हैं। धार्मिक एवं जातिगत मान्यतायें धीरे–धीरे परिवर्तित हो रही हैं और उनमें शिथिलता आ रही है। मलिन बस्तियों एवं आवास की समस्या ने विकराल रूप ले लिया है। अपराधिक गतिविधियां तीव्र गति से बढ़ रही है। काम की अधिकता तथा मनोरंजन के अपर्याप्त साधनों ने व्यक्ति में अवसाद, कुंठा एवं

निराशा को जन्म दिया है। दूसरे अर्थों में कहा जा सकता है कि भारतीय परम्परागत समाज की समाजिकता एक तरह से नगरीकरण के कारण प्रायः विघटित होने लगी है। जिससे परिणामस्वरूप सामाजिज संस्थाओं, सामाजिक संगठनों एवं सामाजिक व्यवस्था में अनेकों परिवर्तन हो रहे हैं जिससे अनकों प्रकार की समस्याओं का भी उदय हो रहा है।

6– **अपराधीकरण को बढ़ावा–** जैसा कि हम सब जानते हैं कि रोजगार के अवसरों की कमी, बेरोजगारी तथा आर्थिक सुदृढ़ीकरण के कारण प्रत्येक व्यक्ति नगरों में जाकर जीवन यापन करना ज्यादा पसंद कर रहा है। किन्तु यह भी वास्तविकता है कि नगरीय जीवन को बेकारी की कम करने के बजाये बढ़ावा दिया है। व्यक्ति अपनी सीमित आय में अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी सुगमतापूर्णव नहीं कर पाता। अतः अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह गलत मार्ग की सहायता लेने लगता है, जिसमें मुख्य रूप से जुआ, अनैतिक कृत्य तथा चोरी करना आदि इै। इसके विपरीत एकाकी जीवन होने के कारण व्यक्ति गलत संगत में पड़ कर भी कई प्रकार के अपराध करने लगता है।

7– **बेरोजगारी की समस्या–** औद्योगीकरण की प्रक्रिया नगरीकरण की प्रमुख देन है। औद्योगीकरण की प्रक्रिया में कारखानों में अधिकतर कार्य मशीनों के द्वारा ही किये जाते हैं जिससे अधिक उत्पादन किया जा सके। मशीनीकरण ने एक तरह से उद्योग–धन्धों तथा कुटीर उद्योगों को पूरी तरह से नष्ट कर दिया है। अतः जिससे हजारों की संख्या में लोग बेरोजगार हो गये हैं। अतः सरल शब्दों में कहा जाये तो नगरीकरण की प्रक्रिया ने बेरोजगारी की समस्या को विकसित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वह्न किया है।

8– **यातायात की समस्या–** नगरों में जनसंख्या की अधिकता ने यातायात और परिवहन की समस्या को भी बढ़ा दिया है। नगरीकरण के कारण समस्या को भी बढ़ा दिया है। नगरीकरण के कारण जनसमुदाय तो निरन्तर बढ़ता जा रहा है। किन्तु उस दिशा में यातायात के साधनों में तीव्रता नहीं आयी है। यदि यातायात की आपूर्ति को बढ़ाया जाता है, तो वह प्रदूषण को बढ़ावा देता है। अतः नगरीकरण की प्रक्रिया ने यातायात की एक बड़ी समस्या को भी बढ़ावा दिया है।

9– **द्वितीयक समूहों की वृद्धि–** नगरीकरण की प्रक्रिया ने द्वितीयक समूहों में भी वृद्धि की है। जिससे प्राथमिक समूहों में भी विघटन की स्थिति आ गयी है। सरल शब्दों में यदि कहा जाये तो व्यक्तियों के मध्य घनिष्ठ सम्बन्धों का अभाव हो गया है। जिसके स्थान पर औपचारिक सम्बन्धों की वृद्धि हो गयी है। द्वितीयक समूहों में व्यक्ति केवल स्वार्थ के कारण दूसरे व्यक्ति से जुड़ा रहता है। नगरों में तो पड़ोस में भी व्यक्ति एक दूसरे से अच्छे से परिचित नहीं होते हैं।

10– **विवाह का परिवर्तित स्वरूप**– नगर विभिन्न प्रकार के धर्म एवं जाति के लोग निवास करते हैं। अतः धीरे–धीरे वैवाहिक संस्था में भी परिवर्तन होने लगे है। वर्तमान समय में विवाह में जाति एवं धर्म को विशेष महत्व नहीं दिया जाता है। सजातीय विवाह के स्थान पर अन्तजार्तीय विवाह को प्राथमिकता दी जाती है। जातीय तथा धार्मिक बंधन प्रायः शिथिल होने लगे हैं। नगरीकरण के कारण विवाह एक धार्मिक संस्कार न होकर समझौता बन गया है। साथ ही वैवाहिक बन्धनों में भी अब शिथिलता का विकास हो गया है।

उपरोक्त विवेचना के आधार पर काह जा सकता है। कि नगरीकरण की प्रक्रिया ने समाज को जहां एक ओर विकसित एवं प्रगतिशील बनाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वह्न किया है। वहीं दूसरी ओर इस प्रक्रिया ने अनेकों समस्याओं को भी जनम दिया है। पलायन के कारण ग्रामीण क्षेत्र

धीरे–धीरे खाली होने लगे हैं, जिससे कृषि कार्यों में बूरा प्रभाव पड़ा है। रोजगार एवं उच्च जीवन स्तर पाने की लालसा ने नगरों में जनसंख्या की आशातीत वृद्धि कर दी है। जिससे मलिन बस्तियों एवं आवास की विकाराल समस्या का जन्म हुआ है। एकल परिवार एवं स्वतंत्र जीवन शैली ने जहां एक ओर अपराधीकरण को बढ़ा दिया है, वहीं दूसरी ओर व्यक्तिवादिता, अवसाद, निराशा एवं कुंठित मनोवृत्तियों को भी जन्म दिया है। नगरीकरण से सामुदायिक विघटन तो हुआ है। साथ ही सामाजिक एवं पारिवारिक विघटन भी तीव्र गति से हुआ है। अतः यहाँ पर यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि नगरीकरण ने नगर एवं समाज की विकसित तो किया है, किन्तु कई गम्भीर एवं विकाराल समस्याओं को भी जन्म दिया है।

## 5.5 नगरीकरण का जाति पर प्रभाव

नगरीकरण ने जाति व्यवस्था पर भी पूर्ण रूप से प्रभाव डाला है। नगरीकरण का जाति पर प्रभाव को निम्नांकित बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

1. नगरों में सभी धर्मों के व्यक्ति साथ–साथ उद्योग–धन्धों में कार्य करते हैं। साथ कार्य करने के कारण प्रत्येक जाति के व्यक्ति एक दूसरे के साथ मिल–बांटकर खाना खाते हैं। इस प्रकार जातीय रूढ़िवादिता, अस्पृयता की भावना व जातीय बंधन धीरे–धीरे ढीले हो रहे हैं।
2. परम्परागत समाज में कार्यात्मक विभाजन होने के कारण व्यक्ति को अपने जाति के आधार पर कुछ निश्चित कार्य करने होते थे। वर्तमान समय में नगरीय जीवन में परम्परागत कार्य धीरे–धीरे लुप्त होते जा रहे हैं उसके स्थान पर व्यक्ति सर्वसुलभ कार्यों तथा रूचि के अनुरूप कार्यों को प्राथमिकता देते हैं। अतः नगरीकरण ने परम्परागत कार्यों में परिवर्तन ला दिया है।
3. नगरीकरण की प्रक्रिया ने सांस्कृतिक को भी परिवर्तित कर दिया है। वास्तव में प्रत्येक जाति की अपनी संस्कृति, भाषा तथा संस्कार होते हैं, जिनका पालन उन्हें अनिवार्य रूप में करना होता है। किन्तु नगरीय जीवन में धीरे–धीरे सांस्कृतिक कट्टरता कम होने लगती है, क्योंकि यहाँ प्रत्येक धर्म, संस्कृति एवं जाति के लोग साथ–साथ मिलजुल कर रहते हैं तथा खान–पान में विशेष कोई पाबंदी नहीं होती। अतः कहा जा सकता है कि नगरीकरण ने सांस्कृतिक व्यवस्था को भी परिवर्तित कर दिया है।
4. प्राचीन समय से ही प्रत्येक जाति की अपनी वैवाहिक संस्था होती थी। विवाह प्रत्येक जाति एवं धर्म के आधार पर निर्धारित होते थे। एक तरह से विवाह नाम संस्था पूर्ण रूप से जाति पर आधारित थी। वर्तमान समय में नगरीकरण ने इस संस्था को भी पूर्ण रूप से परिवर्तित कर दिया है, क्योंकि नगरों में प्रत्येक जाति एवं धर्म के लड़के एवं लड़कियाँ साथ–साथ मिलजुलकर रहकर एक ही स्थान पर काम करते हैं। इसके अलावा अनेक जाति को मानने वाले आस–पड़ोस में भी साथ–साथ निवास करते हैं जिससे अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन मिला है।
5. परम्परागत भारतीय समाज में जाति प्रथा का एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। जिसमें कई जातियों में महिलाओं को स्वतंत्रता प्राप्त नहीं होती है। महिलायें परिवार के पुरुष सदस्यों के आधीन रहकर कार्य करती थीं। पर्दा प्रथा जाति की एक प्रमुख शर्त थी, जिसमें महिलाओं को पर्दे में रहकर ही प्रत्येक कार्य करने होते हैं। नगरीकरण की प्रक्रिया ने जाति प्रथा की इस परम्परागत रूढ़िवादिता को खत्म करने में मुख्य भूमिका का निर्वह्न किया है। नगरीय

समाज में महिलाओं को प्रत्येक क्षेत्र में पूर्ण स्वतंत्रता के साथ–साथ जातिगत रूढिवादिता से भी मुक्ति मिली है। पर्दा प्रथा धीरे–धीरे खत्म हो रही है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नगरीकरण की प्रक्रिया ने जातिवाद को परिवर्तित करने में अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वह्न किया है। आन्द्रे बिताई ने इस सम्बन्ध में कहा है कि ''पाश्चात्य रंग में रंगे हुए अभिजन वर्ग के बंधन जाति के संबंधों से कहीं अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। कुछ जातियों के शिक्षित सदस्य जो आधुनिक व्यवसायों में हैं। कभी–कभी दबाव समूह के रूप में संगठित हो जाते हैं। इस प्रकार एक जाति दूसरे दबाव समूहों के साथ राजनीतिक और आर्थिक संसाधनों के लिए एक सामूहिक इकाई की तरह प्रतिस्पर्द्धा करती हैं इस प्रकार का संगठन एक नई प्रकार की एकात्मकता दर्शाता है। ये प्रतिस्पर्द्धा करने वाली इकाईयां जाति के वर्गों की अपेक्षा सामाजिक वर्ग की तरह अधिक कार्य करती है।''[9]

कोलेन्ड्रा के अनुसार–''रोजगार में और शहर की अपेक्षाकृत नई बस्तियों में विभिन्न उपजातियों और जातियों के व्यक्ति एक दूसरे से मिलते हैं। वे प्रायः लगभग बराबर दर्जे के होते हैं। और इनमें पड़ोस की या कार्यालय समूह को एकता विकसित होती है। इस तरह की चीज बड़े शहरों में सरकारी बस्तियों में आम रूप से पाई जाती है। इसी प्रकार अन्तर उपजातीय विवाह होते है। और इससे उपजातियों के विलयन को प्रोत्साहन मिलता है। यह इस लिए होता है कि कई बार शिक्षित बेटी के लिए अपनी ही उपजाति में पर्याप्त रूप से शिक्षित वर नहीं मिलता। परन्तु करीब की उपजाति में मिल जाता है।''[10]

## 5.6 भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया एवं प्रभाव

ऐसा माना जाता है कि भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया ईसा से 3000 वर्ष पूर्व से ही प्रारम्भ हो गयी थी। आज से लगभग 2000 वर्ष पूर्व भारत में मगध, नालन्दा, तक्षशिला, उज्जैन, धारा, पाटलीपुत्र, कन्नौज, काशी और मालवा जैसे बड़े–बड़े नगर अपने अस्तित्व में आ गये थे।

भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया मुख्य रूप से औद्योगीकरण के कारण हुई। ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार व्यापार के लिए जिन स्थानों में कच्चा माल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध था। ऐसे स्थानों में उद्योग–धंधों की स्थापना की गयी। जिसके परिणामस्वरूप धीरे–धीरे इन स्थानों में रोजगार के अवसर उपलब्ध होने के कारण जनसंख्या वृद्धि होने लगी तथा बड़े–बड़े नगरों की स्थापना होने लगी। भारत में औद्योगिक विकास के कारण स्थापित नगरों में प्रमुख नगर जमशेदपुर, टाटानगर, मोदीनगर, दुर्गापुर, राउरकेला, भिलाई, विशाखापट्नम और बुरहानपुर आदि हैं। भारत में औद्योगीकरण के कारण विभिन्न स्थानों पर जब बड़े–बड़े उद्योगों की स्थापना हुई तो लघु एवं कुटीर उद्योग–धंधों का पतन होने लगा। इन उद्योगों में लगे लाखों कारीगर औद्योगिक केन्द्रों में रोजगार पाने की मंशा से गांवों को छोड़कर नगरों में आकर बसने लगे। दूसरी ओर लोगों की बढ़ी हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उद्योगों में किये जाने वाले उत्पादन की मात्रा में भी वृद्धि होती गई।''[11]

किग्सले डेविस ने इस संदर्भ में कहा है कि ''नगरों की उत्पत्ति और विकास आज केवल कुछ आर्थिक, राजनैतिक, सैनिक, धार्मिक, और मनोरंजन संबंधी आकर्षणों का ही परिणाम नहीं है, बल्कि उन विभिन्न आकर्षणों की मांगों जैसे–उद्योगों की स्थापना, परिवहन, संचार, विशेषीकरण, श्रमविभाजन और आर्थिक सुरक्षा की भावना आदि से ही इतना अधिक प्रभावित है।''[12]

भारत में नगरीकरण ने नगर को विकसित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वह्न किया है। वहीं दूसरी ओर भारतीय सामाजिक संरचना को भी परिवर्तित किया है। नगरीकरण ने भारतीय परम्परागत समाज के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। नगरीकरण के द्वारा भारतीय समाज में होने वाले प्रभाव को निम्नांकित आधार पर समझा जा सकता है।

**अ– समाजिक प्रभाव**

1. **पारिवारिक व्यवस्था पर प्रभाव–** ग्रामीण समाज के अधिकांश व्यक्ति बेरोजगारी एवं रोजगार की तलाश में ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन करकते नगरों की ओर प्रस्थान कर रहे हैं। अतः नगरीकरण ने पारिवारिक व्यवस्था में परिवर्तन ला दिया। शिक्षा के प्रभाव के कारण महिलायें भी आत्मनिर्भर हो कर अर्थोपार्जन कर रही हैं अतः नगरीकरण के कारण संयुक्त परिवार विघटित होकर एकांकी परिवारों में परिवर्तित हो रहे हैं। जिससे परिवार के सदस्यों के मध्य भी सम्बन्धों में स्पष्ट परिवर्तन दिखाई दे रहा है। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध समाजशास्त्री रास ने अपनी पुस्तकत 'दि हिन्दू फैमली इन इट्स अरबन सेटिंग में बताया कि आने वाले कुछ समय में परिवार के नियमों द्वारा दायित्वों संबंधी विचार भी दुर्बल पड़ते जायेंगे। सदस्यों के बीच पारस्परिक स्नेह कम होता जायेगा तथा परिवार के मुखिया के अधिकार लगभग समाप्त हो जायेंगे। इसी प्रकार एम0 एस0 गोरे ने अपनी पुस्तक 'अरबनाईजेशन एण्ड फैमली चेंज' में बताया है कि नगरीकरण से प्रभावित वर्तमान परिवारों में रहन सहन के स्तर, सदस्यों की संख्या तथा सदस्यों की स्थिति में परिवर्तन आया है। लेकिन सांस्कृतिक रूप से वे आज भी संयुक्त परिवार व्यवस्था से जुड़े हुए हैं।''[13]

2. **मूल्यों में परिवर्तन–** नगरीकरण के परिणाम स्वरूप परम्परागत मूल्यों में धीरे–धीरे परिवर्तन हो रहे हैं। आधुनिकीकरण एवं पश्चिमीकरण सभ्यता ने व्यक्तियों के परम्परागत मूल्यों से जुड़े हुए विचारों एवं धारणाओं को परिवर्तित कर दिया है। परम्परागत रूढिवादिता विचारों का स्थान पर प्रगतिशील विचारों ने ले लिया है।
3. **धार्मिक परिवर्तन–** नगरीकरण ने व्यक्ति के धार्मिक जीवन में भी अनेकों परिवर्तन ला दिया है। धर्म की प्राचनी मान्यतायें अब धीरे–धीरे खत्म हो रही हैं। विभिन्न जाति एवं धर्म को मानने वाले लोगों के साथ–साथ मिलजुल कर रहने तथा साथ–साथ कार्य करने से धार्मिक कट्टरता में धीरे–धीरे कमी आने लगी है। अन्धविश्वास एवं धार्मिक रूढ़ियों का मानव समाज त्याग रहा है, जो वास्तव में नगरीकरण की ही देन माना जा सकता है। छुआछूत एवं अस्पृश्यता की भावना भी धीरे–धीरे खत्म हो रही है।
4. **महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन–** नगरीकरण की प्रक्रिया ने महिलाओं को शिक्षित बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वह्न किया है। महिलायें अपनी परम्परागत छवि से बाहर निकल रही हैं। वैचारिक जागरूकता एवं स्वतंत्रता के कारण महिलायें धरे से बाहर निकल कर विभिन्न क्षेत्रों में पुरुषों के समान कार्य कर रही हैं। एक तरह से नगरीकरण ने अर्थोपार्जन के माध्यम से आत्मनिर्भर बनने के कारण अनेकों अवसर मुहिया करवाये हैं नगरीकरण के कारण ही महिलाओं में सामाजिक एवं आर्थिक जागरूकता का तीव्र विकास हुआ है। महिलाओं में स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता ने महिलाओं की स्थिति को और सशक्त किया है, जिससे महिलायें अब स्वयं जीवनसाथी का चुनाव कर रही हैं। विवाह की आयु धीरे–धीरे बढ़ने लगी है। साथ ही जीवन साथी से वैचारिक मतभेद होने की स्थिति में विवाह–विच्छेद को भी महिलायें गलत नहीं मानती हैं।
5. **जाति व्यवस्था में परिवर्तन**– ऐसा माना जाता है कि नगरीकरण ने जाति व्यवस्था को सर्वाधिक प्रभावित किया हैं विभिन्न जातियों के एक साथ रहने, मिलजुल कर कार्य करने से जातिगत

ऊँच–नीच की भावना लगभग समाप्त हो गयी है। व्यवसाय में जाति को प्रमुखता न देकर व्यक्ति की योग्यता एवं कार्यकुशलता को मुख्य आधार माना जाता है। अस्पृश्यता सम्बन्धी मान्यतायें अब पूर्ण रूप से समाप्त हो गयी हैं इस सम्बन्ध में जी0 एस0 घुरिये ने स्पष्ट किया है कि 'नगरों में जो व्यक्ति ग्रामीण समुदाय से आकर प्रवासी के रूप में रहते हैं, वे आज भी जाति के नियमों से शहरी श्रमिकों की अपेक्षा अधिक प्रभावित हैं। इसी प्रकार एक ही नगर में नई बनी कलौनियों की तुलना में पुराने मोहल्लों में जाति प्रथा का प्रभाव अधिक बना हुआ है। इसी प्रकार नर्मदेश्वर प्रसाद ने बताया है कि ''जिन समूहों पर नगरीकरण के प्रभाव से जाति व्यवस्था का प्रभाव कम हुआ है, वहां भी इस प्रभाव में काफी असमानता है। जैसे नगरीकरण के प्रभाव से जातियों के आनुवंशिक व्यवसाय का विभाजन, खान–पान के नियंत्रणों, जाति पंचायतों के संगठन तथा जाति के आधार पर सामाजिक स्थिति के निर्धारण आदि में बहुत शिथिलता आ गई है।''[14]

**ब– राजैनैतिक जीवन पर प्रभाव**

1. जागरूकता में वृद्धि–ऐसा देखा गया है कि नगरीय समुदाय में व्यक्ति ग्रामीण समुदाय की तुलना में अपने अधिकारों एवं कर्त्तव्यों के प्रति अधिक जागरूक रहता है। चूंकि व्यक्ति नगर में निवास करता है, तो वहां वह राजनैतिक गतिविधियों के प्रति अधिक जागरूक रहता है। अपने अधिकारों के प्रति व्यक्ति कानूनी लड़ाई तक लड़ने को तैयार हो जाते हैं विभिन्न लोगों के साथ रहने तथा संचार सुविधायें की सुलभता के कारण व्यक्ति राजनैतिक जीवन की प्रत्येक घटना पर नजर रखता है तथा राजनैतिक व्यवस्था में अपने हित तथा अहित को ध्यान में रखकर वह राजनैतिक रूप से सदैव जागरूक रहता है।
2. **स्पष्ट सक्रियता**– नगरीय समुदय में व्यक्ति राजनैतिक क्षेत्र या व्यवस्था में सक्रिय रूप से भागीदारी है। जागरूकता एवं वैचारिक स्वतंत्रता होने के कारण व्यक्ति यह समझने लगता है कि उसके लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा। अतः व्यक्ति अपनी सक्रिय भागीदारी के कारण लोकतांत्रिक देश के निर्माण में अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करता है।
3. **ग्रामीण समुदाय में परिवर्तन–** नगरीकरण तथा सामाजिक गतिशीलता के कारण ग्रामीण समुदाय में भी स्पष्ट परिवर्तन दिखई देते हैं पलायन के कारण जो व्यक्ति ग्रामीण समुदय को छोड़कर नगरों में निवास करने लगता है तथा नगरीय जीवनशैली तथा संस्कृति को ग्रहण कर लेता है। तब ग्रामीण समुदाय के उसके निकट सम्बनधी या रिश्तेदार उसके जैसा बनने का प्रयास करते हैं। जिसके परिणाम स्वरूप ग्रामीण समुदय की परम्परागत जीवनशैली तथा संस्कृति में धीरे–धीरे परितर्वन हओने लगते हैं। शिक्षा की वृद्धि एवं प्रचार–प्रसार तथा यातायात एवं परिवहन के साधनों ने नगरीय सभ्यता एवं संस्कृति को ग्रामीण समुदाय तक पहुंचाने का कार्य तीव्र गति से किया है। जिससे ग्रामीण समुदायय की संरचना में व्यापक परिवर्तन दिखाई देने लगे हैं। डॉ0 राव ने अपनी पुस्तक 'अरबनाईजेशन एण्ड सोशल चंज' में ग्रामीण समुदाय पर नगरीकरण के प्रभावों की विस्तृत व्याख्या की है। उनके अनुसार नगरों के संपर्क में आने से ग्रामीण समुदाय में द्रव्यीकरण का विकास हुआ है तथा खेती में व्यापारीकरण की प्रवृत्ति स्पष्ट होती जा रही है। जो व्यक्ति पहले गांवों में कपड़े धोने, जूता बनाने, बाल काटने, लोहे का काम करने अथवा पुरोहिताई का काम आदि करते थे। वे नई सेवाओं के आकर्षण में नगरों में प्रवेश कर रहे हैं। इससे न केवल आनुवंशिक व्यवसाय की परम्परा समाप्त होने लगी है, बल्कि ग्रामीण समुदाय में जजमानी व्यवस्था का भी विघटन हो गया है। खेती में व्यापारीकरण, नगरीय उद्योग–धंधों में नौकरी तथा परिवहन की सुविधाओं से जब ग्रामीणों की आर्थिक सिीति में सुधार हुआ तो उनमें आत्मर्भिरता भी बढ़ने

लगी है। इसके फलस्वरूप उन्होंने भी संचार साधनों तथा रेडियो, टी0वी0 टेपरिकार्डर आदि का उपयोग करना प्रारम्भ कर दिया।[15]

इसी प्रकार डॉ0 इंद्रा शुक्ला ने नगरीकरण के आर्थिक प्रभाव में दो प्रकार के प्रभावों का उल्लेख किया है।

1. **उत्पादन व व्यवसाय के केन्द्र–** आज नगरों में बड़े–बड़े उद्योग स्थापित हो गए हैं जो उत्पादन तथा व्यवसाय के केन्द्र बन चुके हैं। नगर में किसी भी व्यवसाय या उद्योग को प्रारम्भ करने में कठिनाई नहीं होती है। यहां ग्रामीण व्यक्ति आकर अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को खरीदते हैं और अपनी उत्पादित वस्तुओं को बेचते हैं।
2. **बैंकिंग व वित्तीय संस्थाओं का विकास–** नगरों में वित्तीय संस्थाओं, बैंक, मुद्रा व साख आदि की सुविधाए उपलब्ध हैं। इसी कारण नगर व्यापार व वाणिज्य के केंद्र बन गए हैं किसी भी नए उद्योग या व्यवसाय को स्थापित करने के लिए बैंक से उचित ब्याज दर पर ऋण मिल जाता है। इन बैंकों में अपनी बचत को जमा करके व्याज दर के रूप में लाभ भी प्राप्त किया जा सकता है।''[16]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नगरीकरण की प्रक्रिया ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था, संरचना, परम्परागत समूहों एवं संस्थाओं में अपना व्यापक प्रभाव डाला है।

## 5.7 नगरीयता का अर्थ एवं परिभाषा

नगरीयता एक ऐसी अवधारणा है जो नगरीय जीवन शैली को परिभाषित करती है। नगरीय जीवन से तात्पर्य नगरीय संगठन, संगठन के प्रकार, मूल्य, व्यवहार करने के तरीके तथा नगरीय संरचना है। कहने का तात्पर्य यह है कि नगरीयताएक प्रकार से एक नगरीय जीवन पद्धति है। जिसमें यह निर्धारित किया जाता है। कि नगर में जीवन–यापन करने वाले लोगों का अन्य लोगों के साथ व्यवहार कैसा कैसा होगा तथा उनके मूल्य कैसे होंगे? वास्तव में सामाजिक मूल्य का स्वरूप पूर्व में ही निर्धारित होता है। जिसका पालन प्रायः नगर में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को करना पड़ता है। नगरीता के सन्दर्भ में अनेक विद्धानों एवं समाजशास्त्रियों ने अलग–अलग परिभाषाएँ दी हैं। जिनमें से प्रमुख समाजशास्त्रियों की परिभाषा निम्नांकित है।

लुईस बर्थ–''नगरीयता जीवन के रहन–सहन के ढंग को कहते हैं जो सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक रूप से नगरीय रहन–सहन में जटिलता को लाता है जो जनसंख्या के आकार में परिवर्तन, घनत्व और विषमता को निर्धारित करता है। व्यक्ति के व्यवहार एवं नगरीय परिवेश में सोचने के ढंग आदि में परिवर्तन लाता है। जहां लोग विभिन्न समुदायों के बीच से एक नये नगरीय समुदाय का निर्धारण करते हैं।

थिओडर्स के अनुसार–''नगरीयता एक जीवन पद्धति (way of life) है। यह समाज एक ऐसा संगठन है जिससे श्रम का जटिल विभाजन, प्रौद्योगिकी के ऊँचे स्तर, उच्च गतिशीलता (highmobility), आर्थिक कार्यों को सम्पन्न करने के लिए उसके सदस्यों की पारस्परिक आश्रितता और सामाजिक सम्बन्धों में अवैयक्तिता (impersonality) का समावेश होता है।[17]

एण्डरसन के अनुसार–'' नगरीयता जीवन के रहन–सहन के ढ़ंग के रूप में केवल नगरों एवं शहरों की ही अकेले अपने अन्दर नहीं समेटता, बल्कि वह राजधानी जैसे महानगरों से दृष्टिगोचर होती है कि यह एक व्यवहार करने का तरीका है।

क्वीन एवं कारपेंटर–''नगरीयता नगर निवास की एक प्रघटना है।

सुधाकर प्रसाद तिवारी–''नगरीयता या नगरवाद एक जीवन शैली है। जिसमें सारा कार्य समयबद्ध नियमित यथार्थता से जुड़ा रहता है। यहां व्यक्ति विचारों और वस्तुओं के स्थान पर नयी वस्तुओं को लाता रहता है। पुराने विचारों एवं परम्पराओं से करना चाहता है। हर वस्तु या व्यक्ति को हानि–लाभ के सन्दर्भ में आंकता है।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि नगरीयता एक जीवन पद्धति है। जो नगरों में रहने वाले लोगों का जीवन जीने का एक तरीका है। नगरीयता के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि यह एक आधुनिक जीवन शैली से युक्त जीवन जीने का एक ऐसा तरीका है, जो प्राथमिक सम्बन्धों से विपरीत द्वितीयक सम्बन्धों पर आधारित होता है जिसमें एक सामाजिक–सांस्कृतिक आदर्शों एवं मूल्यों की एक समन्वित सामाजिक व्यवस्था समाहित होती है।

## 5.8 नगरीयता की विशेषताएँ

नगरीयता की विशेषता के सन्दर्भ में अनेकों समाजशास्त्रियों ने अलग–अलग तरीके से अपने विचारों को स्पष्ट किया है। प्रमुख समाजशास्त्रियों द्वारा दिये गये नगरीयता की विशेषताओं को निम्नांकित आधार पर समझा जा सकता है।

1 लुईस बर्थ ने नगरीयता की चार विशेषताएँ बतलायी हैं।[18] स्थायित्व–एक नगर निवासी अपने परिचितों को भूलता रहता है और नये व्यक्तियों से सम्बन्ध बनाता रहता है। उसके अपने पड़ोसियों से एक क्लब आदि जैसे समूहों के सदस्यों से अधिक मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध नहीं होते। इसलिए उनके चले जाने से उसे कोई चिन्ता नहीं होती।

1. सतहीपन– एक नागरिक कुछ ही व्यक्तियों से बातचीत करता है और उनसे भी उसके सम्बनधर अवैयक्तिक और अनौपचारिक होते हैं। व्यक्ति एक दूसरे से अत्यंत अलग–अलग भूमिकाओं से मिलते हैं। वे अपनी जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिक व्यक्तियों पर निर्भर होते हैं।
2. गुमनामिता– नगरवासियों के एक दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं होते। वैयक्तिक पारस्परिक परिचतता जो आस–पड़ोस के व्यक्तियों में निहित होती है। नगर में नहीं होती।
3. व्यक्तिवाद– व्यक्ति अपने निहित स्वार्थों को अधिक महत्व देते हैं।

रूथ ग्लास ने नगरीयता की निम्नलिखित विशेषताएँ बतलाई हैं।[19]

1. गतिशीलता
2. गुमनामीपन
3. व्यक्तिवाद
4. अवैयक्तिक सम्बन्ध
5. सामाजिक विभेदीकरण
6. अस्थायित्व और यांत्रिक एकता

एन्डर्सन ने नगरीयता की तीन विशेषताओं को सूचीबद्ध किया है[20]–

1- समंजननीयता
2- गतिशीलता
3- प्रसार।

4– मार्शल क्लिनर्ड ने निम्नांकित विशेषतायें को स्पष्ट किया है[21]– द्रुतगामी सामाजिक परिवर्तन

1. प्रतिमानों और मूल्यों के बीच संघर्ष
2. जनसंख्या की बढ़ती हुई गतिशीलता
3. भौतिक वस्तुओं पर बल
4. अभिन्न अंतर–वैयक्तिक सम्प्रेषण में अवनति

5– डेविस ने नगरीय सामाजिक व्यवस्था की आठ विशेषताओं का उल्लेख किया है।[22] सामाजिक विषमता–नगरीय क्षेत्रों में विभिन्न धर्मों, भाषाओं, जातियों और वर्गों के व्यक्ति रहते हैं और वहां पर व्यवसाय में भी विशेषता होती है।

1. दैतीयक संबंध
2. सामाजिक गतिशीलता
3. व्यक्तिवाद
4. स्थान सम्बन्धी पृथक्करण
5. समाजिक सहनशीलता
6. द्वैतीयक नियंत्रण
7. स्वयंसेवी संस्थाएँ

लुईस बर्थ ने नगरीयता की चार विशेषतायें बतलाई हैं।[23] जनसंख्या की विषमता

1. कार्य की विशेषता
2. गुमनामीपन तथा अवैयक्तिकता
3. जीवन और व्यवहार का मानकीकरण

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि यद्यपि अनेक विद्वानों ने नगरीयता की अलग–अलग विशेषताओं का उल्लेख किया है। किन्तु विशिष्ट जीवन पद्धति, विविधता, उपयोगितावाद, वर्ग–विभेद, गतिशीलता, व्यक्तिवाद एवं अस्थायित्वता के आधार पर नगरीयता की विशेषताओं को निम्नांकित आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है–

1. नगरीयता वास्तव में औद्योगीकरण की देन है। जिसमें परम्परागत धार्मिक नियमों, संस्कृति, मूल्यों एवं आदर्शों का कोई विशेष स्थान नहीं होता है।
2. घनिष्ठता का अभाव होने के कारण नगरीयता में प्राथमिक सम्बन्धों की अपेक्षा द्वैतीयक सम्बनधों को अधिक महत्व दिया जाता है।
3. नगरीयता सदैव व्यक्तिवादी होती है नगरीय जीवन में सदैव व्यक्ति स्वार्थ सम्बन्धों के आधार पर एक दूसरे से जुड़े रहते हैं अर्थात् व्यक्तियों के सम्बन्ध 'हम' के स्थान पर 'मैं' की भावना से जुड़े रहते हैं। व्यक्ति केवल उन्हीं व्यक्तियों से सम्बन्ध रखते हैं जो उनके स्वार्थों को पूरा करने में सक्षम होते हैं।
4. नगरीय जीवनशैली अपनाने के पश्चात् व्यक्ति के व्यक्तित्व में धीरे–धीरे अनेकों परिवर्तन आने लगते हैं अर्थात् नगरीयता एक तरह से सामाजिक एवं वैचारिक गतिशीलता को बढ़ावा देता है। क्योंकि व्यक्ति के विभिन्न लोगों के सम्पर्क एवं वैचारिक स्वतंत्रता बढ़ने के कारण उसके विचारों में तो परिवर्तन आता ही है। साथ ही व्यक्ति दिन प्रतिदिन आने वाली नई–नई परिस्थितियों में भी आसानी पूर्वक सामंजस्य स्थापित कर लेता है।

5. नगरीयता में भौतिक संस्कृति का अपना एक विशेष महत्व होता है। आधुनिकीकरण एवं पश्चिमीकरण के कारण नगरों में निवास करने वाले व्यक्ति सामान्यतः भौतिक संस्कृति को मानने वाले होते हैं। जिससे अभौतिक संस्कृति का धीरे–धीरे ह्रास होने लगता है।
6. नगरीयता एक तरह से विशेषीकरण के विकास को प्रोत्साहित करता है। कार्यों का क्षेत्र विस्तृत होने के कारण व्यक्ति अपनी रूचि के क्षेत्रों में कार्य करने लगता है। जिससे कार्यों में धीरे–धीरे विशेषज्ञता आने लगती है। प्रत्येक कार्य विशेषज्ञ नगरीय समाज को अपनी कार्यकुशलता एवं योग्यता के आधार पर अपना योगदान देता है और इस प्रकार व्यक्तियों के मध्य श्रम विभाजन भी होता है।
7. नगरीय जीवन में अत्यधिक जनसंख्या घनत्व होने के कारण व्यक्ति की वैयक्तिक पहचान धीरे–धीरे खतम होने लगती है। अनौपचारिक सम्बन्धों के कारण व्यक्ति केवल स्वार्थ सम्बन्धों को ही स्थापित करता है। जिससे सामूहिक मनोवेग एवं विशेषज्ञ सम्बन्धों की भावना समाप्त होने लगती है।

## 5.9 नगरीयता एवं नगरीकरण में अंतर

नगरीयता एवं नगरीकरण के सम्बन्ध में यदि बात की जाए तो प्रायः नगरीयता एवं नगरीकरण को एक ही अर्थ में प्रयोग किया जाता है। जबकि इनमें परस्पर काफी अन्तर पाया जाता है। चूंकि ये दोनों ही प्रक्रियायें नगरों से सम्बन्धित होती हैं। अतः इन्हें समान माना जाता है।

वास्तव में नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो नगरीय प्रभावों का प्रसार करती है। वास्तव में नगरीकरण सामाजिक गतिशीलता का परिणाम होती है जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों से व्यक्ति प्रवर्जन या प्रवास के द्वारा नगरीय केन्द्रों में निवास करने लगता है। नगरीय केन्द्रों तथा नगर में रहकर व्यक्ति जिस जीवन पद्धति को अपनाता है वह पद्धति नगरीयता कहलाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि नगरीयता व्यक्ति के जीवन जीने का एक ढंग है जो विशेष नगरीयय सामाजिक व्यवस्था को जन्म देता है। जबकि नगरीकरण नगरीय विशेषताओं को स्थापित करने में अपना विशेष योगदान देता है। अतः कहा जा सकता है कि नगरीकरण के कारण नगरों को निर्माण एवं विकास होता है। जबकि नगरीयता नगरों में निवास करने वाले व्यक्ति के जीवन जीने के तरीके तथा उनमें होने वाले परिवर्तनों को स्पष्ट करता है। नगरीकरण एवं नगरीयता के अंतर को स्पष्ट करने के लिए अनेक समाजशास्त्रियों ने अपने–अपने विचार प्रस्तुत किये हैं जो निम्नांकित हैं–

1. शशि के जैन के अनुसार– नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो नगरीय प्रभावों का प्रसार करता है। जबकि नगरों में व्यक्ति जिस तरह रहता है या जीवन व्यतीत करता है। उसे नगरीयता कहते हैं। जीवन की यह विधि नगरी या कस्बों तक ही सीमित है।
2. नेल्स एण्डरसन के कथनानुसार–नगरीकरण प्रायः बड़े नगरों में केन्द्रित है और उद्योग की ओर उन्मुख है इसे प्रायः पाश्चात्य कहा जाता है और एक जीवन के ढंग के रूप में नगरीयता कहा जाता है।
3. बर्गेल के अनुसार–''नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में और नगरीयता एक देश या परिस्थितियों के पुंज के रूप में समझे जायेंगे।
4. एम0 एस0 ए0 राव– नगरीकरण जहां एक प्रक्रिया है। वहीं पर नगरीयता जीवन ढंग को व्यक्त करती है।
5. थॉम्पसन एवं लुईस– ''नगरीकरण उस प्रक्रिया को कहते हैं। जिसके अन्तर्गत किसी देश की जनसंख्या बढ़ती दर से शहरों में आकर बसने लगती है। नगरीयता एक ऐसी जीवन–यापन करने की विधि है जो नगरों में अपनायी जाती है।

6. क्वीन एवं कारपेंटर–नगरीयता का प्रयोग हम नगर निवास की घटना को पहचानने के लिए करते हैं नगरीयकरण का प्रयोग एक विशिष्ट जीवन शैली जो अद्भुत रूप से नगर निवास से जुड़ी है। को पहचानने के लिए करते हैं।

अतः उपरोक्त समाजशास्त्रियों की परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि नगरीकरण और नगरीयता दो अलग–अलग अवधारणाएं हैं। जिन्हें प्रायः एक समझने की भूल की जाती है। जिसमें नगरीकरण के अर्न्तत ग्रामों का नगरों के रूप में बदलना तथा नगरीयता का तात्पर्य ऐसी जीवन पद्धति से है जो अनौपचारिक सम्बन्धों पर आधारित, अस्थायितव एवं परिवर्तनशील जैसी विशेषताओं से युक्त होती है।

## 5.10 नगरवाद का अर्थ एवं परिभाषा

जैसा कि हम सब जानते हैं कि नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें कोई भी स्थान नगरीय विशेषताओं को धारण करता है। जबकि नगरवाद नगरीय जीवन ढंग को व्यक्त करने वाली एक ऐसी प्रक्रिया है जो नगरीय जीवन के निर्धारण के ढंग को व्यक्त करता है। वास्तव में नगरवाद व्यक्ति की एक ऐसी जीवन शैली की पद्धति बन गयी है, जो नगरीय जीवन में अनेक जटिल समस्याओं को भी उत्पन्न कर देता है। नगरवाद के सम्बन्ध में दी गई प्रमुख परिभाषायें निम्नांकित हैं–

1. विरेन्द्र सिंह के अनुसार–''नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है। जिससे कोई स्थान नगरीय विशेषताओं को धारण करता है। जबकि नगरवाद जीवन–ढंग को व्यक्त करता है। नगरीय जीवन–ढंग का निर्धारण वे व्यवहार के ढंग, संगठन के प्रकार, मूल्य तथा व्यवहार प्रतिमान तय करते हैं जो पूर्व निश्चित हैं।
2. वीन और कारपेंटर के अनुसार–'' नगरवाद का प्रयोग हम नगर निवास की घटना को पहचानने के लिए करते हैं। नगरीकरण का प्रयोग एक विशिष्ट जीवन शैली, जो अद्भुत रूप से नगर निवास से जुड़ी है, को पहचानने के लिए करते हैं।
3. बर्जल ने नगरवाद को स्पष्ट करते हुए कहा है कि नगरीकरण एक प्रक्रिया के रूप में और नगरवाद एक देश या परिस्थितियों के पुंज के रूप में समझे जायेंगे।
4. प्रो0 राव– ''नगरीकरण जहाँ एक प्रक्रिया है। वहीं पर जीवन ढंग को व्यक्त करता है। ग्रामीण लोग समीपवर्ती कस्बे अथवा नगर से किसी प्रकार का सम्बन्ध रखते हैं। वह नगरीकरण के अध्ययन का एक आधार हो सकता है। इसे अन्य शब्दों में इस प्रकार कहा जा सकता है। प्रथम वह प्रत्यक्ष तरीका जिससे कि ग्रामीणवासी नगर के सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन में भाग लेते हैं। इसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि ग्रामीणवासी नगरों में जाकर ही रहें। वे गांव में रहते हुए भी नगरीय संस्कृति से प्रभावित हो सकते हैं। दूसरा–अंतर वैयक्तिक सम्बन्ध जो ग्रामीण लोग नगरीय लोगों के साथ रखते हैं। यद्यपि नगरीकरण सामाजिक परिवर्तन का एक कारक है फिर भी वह स्वतः परिवर्तित होता रहता है। भारत में नगरों में रहने वाले लोगों में भी ग्रामीण जीवन ढंग दृष्टिगत होता है। यह भारतीय नगरीकरण की अपनी विशेषता है। इस प्रकार के नगरीकरण को जिसे परम्परागत नगरीकरण कहते हैं।
5. एम0 एम0 ए0 राव– जब ब्रिटिश शासन काल में नगरीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई तो उसने परम्परागत नगरवाद को प्रभावित किया।
6. रेडफील्ड और सिंगर के अनुसार–''आर्थिक विकास का नगरीय वृद्धि पर प्रभाव पड़ता है। आर्थिक विकास एक प्रक्रिया है जिससे किसी राष्ट्र की वास्तविक रूप में दीर्घकालीन वृद्धि होती है। वास्तव में आर्थिक विकास की प्रक्रिया से न केवल मौद्रिक आय में ही वृद्धि होती है।

बल्कि सामाजिक आदतों, शिक्षा, जनस्वास्थ्य, आराम तथा समाजिक, सांस्कृतिक पर्यावरण में सुधार होता है जो एक सुखी जीवन के लिए आवश्यक है। आर्थिक विकास से सामाजिक दशाएँ सुधरती हैं। जिसे सामाजिक प्रगति की ओर एक कदम कहा जा सकता है।

7. क्रीन तथा कारपेंटर ने अपने ग्रथ 'दी अमेरिकन सिटी' में लिखा है कि 'नगर निवास की स्थिति से तादात्म्य स्थापित करने को नगरीयता और नगरीय निवास की विशिष्ट जीवन पद्धति से तादात्मीकरण को नगरीकरण कहते हैं।[24]
8. शशि के जैन– औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के परिणमास्वरूप लोगों में नगरीय जीवन–पद्धति के प्रति एक भावना, जागरूकता या चेतना विकसित होती है। जिसे हम नगरवाद के नाम से जानते हैं। यह चेतना एक विशिष्ट वातावरण से प्रभावित होने के कारण और एक विशेष जीवन–पद्धति के जीवन से अथवा उसका निरंतर अनुभव हो जाने के कारण धीरे–धीरे विकसित होती है जो लोगों की यह सोचने पर बाध्य करती है कि जीवन को एक विशेष–पद्धति से जिया जा रहा है। जिसकी अपनी कुछ विशेषताएँ हैं। नगरीय विशेषताओं वाले जीवन में प्रति जागरूकता ही नगरवाद है। या नगरीय जीवन की विशेषताओं से युक्त जीवन व्यतीत करने के प्रति विकसित चेतना ही नगरवाद है।''[25]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नगरवाद नगरों में रहने वाले व्यक्ति की विशिष्ट जीवन शेली की विशेषताओं को व्यक्त करता है। सरल शब्दों में यदि कहा जाए तो नगरीयता जहां एक ओर एक जीवन–पद्धति (way of life) है। जिसमें व्यक्ति नगरीय जीवन को अपनाता है। जबकि व्यक्ति जीवन–यापन के लिए अन्य सदस्यों पर आश्रित रहता है तथा अनौपचारिक सम्बन्धों द्वारा–एक दूसरे से सम्बंधित रहते हैं वहीं दूसरी ओर नगरवाद नगरीयता की विशेषताओं वाले जीवन को स्पष्ट करने में सहायक होता है। आधुनिक युग में नगरीकरणप ने जहां एक ओर जनसंख्या के घनत्व में वृद्धि की है वही अनेक बहुआयामी आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक समस्याओं को भी उत्पन्न किया है। जो नगरवाद के बढ़ते हुए प्रभाव से उत्पन्न होते हैं।

## 5.11 नगरवाद की विशेषताएँ

नेल्स एण्डरसन एवं के0 ईश्वरन ने नगरवाद की निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है[26]–

1. मुद्रा अर्थव्यवस्था– नगर के वातावरण में लोग अपरिचित तथा धन एवं सम्पत्ति से अधिक मतलब रखते हैं। सभी शारीरिक आवश्यकताओं एवं भौतिक सुविधाओं की पूर्ति मुद्रा से आसानी से सम्भव होती है। वस्तु विनिमय वाली अर्थव्यवस्था आज के विश्व में नहीं रही है। अतः अधिकांश लोग पैसे देकर और लेकर वस्तुएं खरीदते व बेचते हैं। इस प्रकार मुद्रा अर्थव्यवस्था ने भी नगरवाद के प्रसार में अपना योगदान प्रदान किया है।
2. लिखित प्रमाण या दस्तावेज– नगर में कोई भी कार्य या समझौता मौखिक न होकर लिखित होता है। जो कि स्टाम्प पेपर पर गवाहों की उपस्थिति में लिखित रूप में किया जाता है। ताकि कानून सहायक हो सके। पैसे का लेन–देन भी बैंक–चैक या बैंक ड्राफ्ट से किया जा सके तथा उसका रिकार्ड रखा जाता है। नगर के जटिल वातावरण में यह जरूरी भी है, क्योंकि नगर के इस अपरिचिततापूर्ण पर्यावरण में कोई किसी को नहीं जानता। कार्य या समझौते की शर्तों का पालन न करने पर व्यक्ति को नियंत्रण के अनौपचारिक साधनों द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता और इसीलिए नियंत्रण के औपचारिक साधन जैसे–पुलिस

एवं न्यायालय आदि केवल लिखित प्रमाणों पर ही विश्वास करते हैं। अतः नगरवाद में मौखिक कार्य की कोई उपयोगिता नहीं होती।

3. आविष्कार एवं प्रविधियों की विविधता– नगरों की प्रौद्योगिकी अत्यंन्त उन्नत और विकसित होने के कारण विभिन्न क्षेत्रों में नित्य नए–नए आविष्कार होते है रहते हैं यह नई प्रौद्योगिकी एवं आविष्कार लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति एवं सुविधाओं में वृद्धि ही नहीं कर रहे हैं। बल्कि मानवीय सम्बन्धों को निरंतर जटिल बना रहे हैं जिससे जीवन में नई–नई सामाजिक समस्याएँ विकसित होती चली जा रही हैं। जिनका समाधान करने के लिए कार्य करने की नई प्रणालियाँ एवं आविष्कार हो रहे हैं। यह ऐसा दुर्दम्य चक्र है, जिससे आधुनिक समाज में बचा भी नहीं जा सकता।
4. संगठित एवं सुदृढ़ प्रशासन– आवास व्यवस्था, भवन निर्माण, सफाई, जल, विद्युत, गन्दी गलियों की सफाई का प्रबन्ध सड़कों का निर्माण, यातायात की देखभाल, सार्वजनिक कल्याण एवं विकास कार्य, अदालतें, कचहरी, सार्वजनिक प्रशासन, शान्ति एवं सुरक्षा व्यवस्था, परिवार नियोजन, वाणिज्य एवं व्यापार नियंत्रण आदि विविध कार्य नगरीय जीवन में हेते हैं इनको सुवयवस्थिति एवं सुचारू रूप से चलाने तथा नगरीय जीवन की विशलता, जटिलता एवं अपरिचितता से निपटने के लिए एक स्वच्छ एवं सुदृढ़ प्रशासन आति आवश्यकक होता है, क्योंकि इसके बिना काम ठीक से नहीं चल सकता।
5. सांस्कृतिक आविष्कार– नगरीय समाज में भैतिक परिवर्तन अत्यधिक तीव्र गति से होने के कारण सांस्कृतिक परिवर्तन भी तीव्रता से होता है। नए–नए सांस्कृतिक तत्वों का आविष्कार होता रहता है। जिससे नगरीय संस्कृति का विकास होता चला जाता है। सांस्कृतिक परिवर्तन भौतिक परिवर्तन के समकक्ष तीव्र नहीं होते। जिससे सांस्कृतिक विलम्बन की प्रक्रिया उत्पन्न होती है, जो कई सामाजिक–साँस्कृतिक समस्याएँ उत्पन्न करती हैं। फिर भी भौतिक विकास नगरीय समा में नए सांस्कृतिक तत्वों का समावेश करता चलता है।

## 5.12 नगरीकरण, नगरीयता एवं नगरवाद में अंतर

1. नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो किसी स्थान की नगरीय विशेषताओं को धारण करता है जबकि नगरीयता एक जीवन पद्धति (way of life) है। जिसमें व्यक्ति नगरीय जीवन को अपनाता है, जबकि नगरवाद नगरीयता अर्थात् व्यक्ति किन आदतों को अपने व्यवहार में शामिल करता है तथा नगरीयता की विशेषताओं को अपनाता है उसे रेखांकित करता है।
2. नगरीकरण ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों ओर जनसंख्या की गतिशीलता को स्पष्ट करता है। जबकि नगरीयता नगर में रहने वाले लोगों की जीवन–पद्धति को प्रदर्शित करता है तथा नगरवाद नगरीयता एवं नगरीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न हुई परिस्थितियों को स्पष्ट करता है।
3. नगरीकरण द्वारा नगरों के निर्माण में सहायता मिलती है, जबकि नगरीयता व्यक्ति के व्यवहारों का निर्धारण करता है तथा नगरवाद व्यवहारों की विशेषताओं को स्पष्ट करता है।
4. नगरीकरण जहां एक ओर विकास एवं प्रगति को स्पष्ट करता है। वहीं नगरीयता व्यक्ति के जीवन शैली में परिवर्तन को स्पष्ट करता है तथा नगरवाद उन परिवर्तनों में व्यक्ति के सामन्जस्य स्थापित करने की प्रक्रिया को स्पष्ट करता है।
5. नगरीकरण प्रवर्जन का परिणाम है, जबकि नगरीयता एवं नगरवाद के माध्यम से व्यक्ति नगरीय व्यवहारों एवं जीवनशैली को अपनाता है जो सदैव परिवर्तनशील रहते हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नगरीकरण नगरीयता एवं नगरवाद ये अलग–अलग अवधारणायें हैं। प्रमुख समाजशास्त्रीय श्रीवास्तव ने नगरीयता एवं नगरवाद के अंतर को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि नगरीयता नगरवासियों की वह स्थिति है जो कि ग्रामवासियों की स्थिति से निभिन्न है। नगरीयता का सन्दर्भ नगर में हरने वाले लोगों की कार्य स्थिति भोजन की आदतों, तनाव के प्रतिमान और जीवन दृष्टिकोण के प्रतिमानों से है। नगरवाद मनोवृत्तियों की एक व्यवस्था है। यह अन्त व्यक्ति के सम्बन्धों के अंतर्गत औपचारिकतावाद, व्यक्तिवाद और गुमनामी के रूप में परिलक्षित होता है। इसी प्रकार श्रीवास्तव जी ने नगरीय लोगों के जीने के ढंग को नगरीयता एवं उनकी मनोवृत्ति को नगरवाद के रूप में रेखांकित किया है। किन्तु जीवन के ढंग और मनोवृत्ति दो सापेक्ष शब्द हैं मनुष्य की मनोवृत्ति जिस प्रकार की होती है, वह उसी प्रकार का जीवन व्यतीत करता भी है।''[27] नगरीकरणी की प्रक्रिया को अनेक बार नगरवाद से जोड़कर देखा जाता है। जबकि ये दोनों भिन्न है। पॉल मीडोज एवं मिसरूची ने लिखा है कि–''नगरीकरण से उस प्रक्रिया का बोध होता है जिसमें (अ) नगरीय मूल्यों का विस्तारण होता है। (ब) गांवों से नगरों की ओर लोग आते हैं। (स) व्यवहारों के प्रमिान परिवर्तित होते हैं और जिनका तादात्मीकरण नगर में रहने वाले समूहों से तालमेल रखता है।''[28] वस्तुतः नगरीकरण वह प्रक्रिया है जो नगरीयता को समृद्ध कर उसे ठगों को उन तक पहुंचाता है जो अवगत नहीं रहते। नगरीय सांस्कृतिक प्रतिमानों को सुदूर तक पहुंचाती है। लोगों के साथ–साथ रहने की असहिष्णुता का प्रादुर्भाव करती है अनुकूलन की दशाएं सृजित करती है। विभिन्न आस्थाओं, संस्थाओं, भाषाओं, प्रजातियों, क्षेत्रों के लागों को विजातीयता भरे समुदायों के साथ रखने की प्रेरणा देती है। नवीनता को अपनाने की प्रवृत्ति बढ़ाती है। विभिन्न आर्थिक समूहों में लोगों की गतिशलीता उत्पन्न करती है। वर्गीय संरचना को प्रोत्साहन देती है। लोगों में आधुनिकता का भाव भरती है। और सतत् क्रियाशील रह औद्योगीकरण की सहगामी होती है तथा अधि–संरचना का विस्तार करती है।''[29]

## 5.13 नगरवाद से उत्पन्न समस्याएँ

नगरीकरण के परिणामस्वरूप नगरवाद व्यक्ति की एक जीवनशैली बन गयी है। नगरों एवं नगरवाद के आकर्षण ने जहां ओर गनरों में जनसंख्या के घनत्व में तीव्र गति से बढ़ोत्तरी की है। वहीं दूसरी ओर अनेकों समस्याओं को भी उत्पन्न किया है। जिन्हें निम्नांकित आधार पर समझा जा सकता है।

1. **आवास समस्या–** औद्योगिक नगरों में आजीविका की खोज में बड़ी संस्था में व्यक्ति आता है। रोजगार के सुअवसर होने के कारण व्यक्ति को रोजगार तो आसानी से प्राप्त हो जाता है, किन्तु रहने के लिए स्थान आसानी से प्राप्त नहीं हो पाता। श्रमिक वर्ग एवं कम आय प्राप्त व्यक्ति भूमि क्रय करने मकान भी नहीं बना सकता। अतः नगरों में आवास समस्या एक विकराल समस्या के रूप में सामने आ रही है। आवासीय सुविधा प्राप्त न होने की स्थिति में व्यक्ति अनेक शारीरिक एवं मानसिक रोगों से ग्रस्त होने लगता है।
2. **मलिन बस्तियाँ–** आवासीय सुविधाएं प्राप्त न होने की स्थिति में व्यक्ति झोपड़ी, कोठरी एवं बांस के छप्परों में कुटिया बना कर निवास करता है। मलिन बस्ती का अर्थ जर्जर आवास व्यवस्था एवं गन्दगी युक्त पर्यावरण और वातावरण से होता है। मलिन बस्तियों गम्भीर बीमारियों का केन्द्र बन गया है। यहां शुद्ध ाजल, वायु एवं वातावरण का अभाव पाया जाता है। जिससे क्षय रोग, डायरिया एवं पेचिस एक आम रोग बन गया है। मलिन बस्तियाँ एक तरह से

अपराध का केन्द्र बनते जा रहे हैं। कई सर्वेक्षणों से ज्ञात होता है कि यह स्थान चरस, गांजा और कच्ची शराब बेचने का केन्द्र बनते जा रहे हैं। स्थान एवं कमरों की कमी होने के कारण तथा सदस्यों की संख्या ज्यादा होने के कारण यहां गोपनीयता का अभाव पाया जात है जिससे बच्चो ंका नैतिक पतन हो रहा है तथा बाल अपराधियों की संख्या में भी बढ़ोत्तरी हो रही है।

3. **वैयक्तिक एवं परिवारिक विघटन–** नगरवाद के कारण व्यक्ति के व्यक्तित्व और परिवार का विघटन होने लगता है अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पति और पत्नी दोनों कार्यरत् होते हैं। जिससे वह अपने बच्चों और परिवार को उचित समय व देखभाल नहीं कर पाते। आर्थिक सुदृढ़ता के लिए उचित और अनुचित सभी प्रकार के कार्यों को करते हैं जिसके परिणामस्वरूप धीरे–धीरे वैयक्ति एवं पारिवारिक विघटन होने लगता है।
4. **सामाजिक विघटन–** जैसा कि हम सब जानते हैं कि नगरीय जीवन में द्वितीयक सम्बन्धों की प्रधानता होती है। जिसके फलस्वरूप सामाजिक आदर्श, मूल्य, नैतिकता एवं सहिष्णुता का पूर्ण अभाव पाया जाता है। प्राथमिक सम्बन्धों या घनिष्ठता के अभाव में धीरे–धीरे सामाजिक विघटन होने लगता है।
5. **नगरीय तनाव–** अति आधुनिक भौतिकवादी सम्यता और संस्कृति के कारण नगर आज तनाव का केन्द्र बन रहे हैं। औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, नगरीयता एवं नगरवाद ने व्यक्ति के व्यवहारों एवं व्यक्तित्व में अनेकों परिवर्तन ला दिया है। जिससे व्यक्ति स्वार्थों, महत्वाकांक्षी अवसरवादी एवं भ्रष्ट बनता जा रहा है। जिसके परिणामस्वरूप अनेकों प्रकार की प्रतिस्पर्धा और संघर्ष का जन्म होता है। जो विभिन्न प्रकार नगरीय तनाव का कारण बनता है।
6. **पर्यावरण प्रदूषण–** उद्योगों एवं कारखानों से निकलने वाले प्रदूषित जल, दुर्गंध गन्दे नाले तथा कूड़ाघर आदि व्यक्ति के स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। जिसका प्रमुख कारण औद्योगिक अपशिष्टों का सही तरीके से निस्तारण न करना, नगर में साफ–सफाई की व्यवस्था का अभाव तथा जनसंख्या के घनत्व में तीव्र वृद्धि नगरीय पर्यावरण को प्रदूषित करता है। जो एक बहुत बड़ी समस्या के रूप में सामने आ रहा है।
7. **मानसिक संतुलन–** नगरीय जीवन में मानसिक असन्तुलन एक प्रमुख समस्या के रूप में सामने आ रहा है। यद्यपि मानसिक असंतुलन की अवधारणा प्रायः व्यक्ति की अपने व्यक्तिगत जीवन से जुड़ी एक घपटना है। किनतु नगरीय जीवन पद्धति तथा नगरीय व्यवहार के अपनाने` प्शत् व्यक्ति में मानसिक असन्तुलन की भावना का तीव्रता से विकास हो रहाहै। ग्रामीण समाज सरल समाज माने जाते हैं जिसमें व्यक्ति अपनी अनिवार्य एवं मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति से ही संतुष्ट रहता था। किन्तु नगरीय जीवन से उनकी अपेक्षायें तथा आकांक्षाओं में तीव्रता से वृद्धि हुई है। आर्थिक सुदृढता, भौतिक संस्कृति के साधनों, दिखावटी जीवन तथा विलासिता पूर्ण जीवन जीने की लालसा ने व्यक्ति की अपेक्षाओं के स्तर की बहुत अधिक बढ़ा दिया है। उसके प्राप्त न होने की स्थिति में व्यक्ति में मानसिक तनाव बढ़ने लगता है तथा मानसिक असन्तुलन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।
8. **नैतिक पतन–** समाज को व्यवस्थित एवं संगठित बनाये रखने के लिए नैतिक नियमों का अपना एक विशेष महत्व होता है। नैतिक नियम वे आचरण होते हैं जिन्हें समाज व्यक्ति के लिए उचित एवं पवित्र मानता है तथा व्यक्ति इन नियमों को अपनाकर समाज को व्यवस्थित रखने में अ में अपना सहयोग देता है। एक प्रकार से ये नैतिक नियम व्यक्ति को नियन्त्रित करने में प्रमुख भूमिका का निर्वह्न करती है। जैसा कि हम पहले भी स्पष्ट कर चुके हैं कि नगरीय जीवन में व्यक्ति की अपेक्षाओं एवं आकांक्षाओं का स्तर कताफी उच्च हो जाता है जब वह अपने स्वार्थों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु नैतिकता को त्यागकर अनैतिक एवं भ्रष्ट

तरीकों से धनोपार्जन करने लगता है। जिसके परिणामस्वरूप नगरीय जीवन में नैतिक पतन की समस्या विकराल रूप धारण कर रही है।

## 5.14 सारांश

उपरोक्त विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि नगरीकरण, नगरीयता एवं नगरवाद का सीधा सम्बन्ध नगर से है। नगरीकरण की प्रक्रिया भारत में पिछले कुछ दशकों से तीव्र गति से बढ़ी है। ऐसा माना जाता है कि भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया औद्योगीकरण के कारण विकसित हुई, क्योंकि औद्योगीकरण के कारण जब किसी स्थान पर उद्योगों को स्थापित किया जाता है, तो उन उद्योगों में कार्य करने के लिए उस क्षेत्र के आस–पास वे लोग आकर वहां बस जाते हैं। इस प्रकार जब जनसंख्या का घनत्व बढ़ने लगता है तो वह नगर का रूप धारण कर लेता है। नगरों में व्यक्ति नगरीय विशेषताओं वाली जीवनशैली को अपनाता है या उस जीवन शैली में अपना जीवन व्यतीत करता है तो उसे नगरीयता कहा जाता है। नगरीयता की विशेषताओं को जब व्यक्ति अपने व्यवहार में शामिल करता है तो उसे नगरवाद कहते हैं।

नगरीकरण का समाज पर विशेष प्रभाव पड़ता है। रोजगार की लालसा, अच्छे जीवन स्तर, उच्च जीवन शैली तथा आर्थिक सुदृढ़ता के लिए व्यक्ति नगरों की तरह पलायन करते हैं तथा नगरीय व्यवहार और जीवन–पद्धति को अपनाता जिससे उसके सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन में अनेकों परिवर्तन आते हैं। जिसके फलस्वरूप उसकी संस्कृति, मूल्य, धर्म, पारम्परिक संस्कृति तथा परिवारिक रीति–रिवाजों में परितर्वन आने लगते हैं यह परिवर्तन अनेकों समस्याओं को भी जन्म देता है। जिससे व्यक्तिगत रूप से व्यक्तित में ईर्ष्या, प्रतिस्पर्धा, प्रतियोगिता तथा घृणा सम्बन्धी व्यवहारों का जन्म होता है। साथ ही सामाजिक रूप से भी अनेकों समस्याओं जैसे मलिन बस्तियाँ, बेकारी, स्वास्थ्य सम्बन्धी परेशानी एवं बीमारियाँ, अनैतिकता, भ्रष्टाचार, अपराध एवं बाल अपराध तथा मानसिक तनाव एवं असन्तुलन का भी जन्म होता है।

## 5.15 अभ्यास/बोध प्रश्नों के उत्तर

1. बोध प्रश्न–

सत्य/असत्य

1.नगरीकरण ग्रामीण जीवन में परिवर्तन की प्रक्रिया को कहा जाता है– सत्य/असत्य

2.किंग्सले डेविस ने नगरीकरण का निर्धारण जनसंख्या के आधार पर किया है। – सत्य/असत्य

3.नगरवाद जीवन के ढंग को व्यक्त करता है। सत्य/असत्य

4.नगरीयता एक जीवन पद्धति नही है। सत्य/असत्य

5.नगरीकरण प्रवजन का परिणाम है। सत्य/असत्य

2.रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजीए।

1.नगरीकरण, नगरीयता एंव नगरवाद का सीधा सम्बन्ध.....से है।

2.नगरीयता नगर निवास की ..... है।

3.नगरवाद से ..... समस्या उत्पन्न होती है।

4.नगर..... तथा व्यवसाय के केन्द्र बन चुके है।

5..... के कारण ग्रामीण नगरों में निवास करने लगते है।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1 सत्य / असत्य

1 असत्य 2 सत्य 3 सत्य 4 असत्य 5 सत्य

2.रिक्त स्थानों की पूर्ती

1 नगर 2 प्रघटना 3 आवास 4 उत्पादन 5 पलायन

## 5.16 संदर्भ ग्रन्थ


1. शशि के जैन, 'नगरीय समाजशास्त्र, 2001, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ0सं0 228
2. Louis wirth, urbanism as a way of life. 1938
3. शशि के0जैन, 'नगरीय समाजशास्त्र, रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर, 2001, पृ0सं0238
4. शशि के0जैन, 'नगरीय समाजशास्त्र, रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर, 2001, पृ0सं0238
5. वीरेन्द्र सिंह, विकास का समाजशास्त्र, 2001, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, वाराणसी–223
6. वीरेन्द्र सिंह, विकास का समाजशास्त्र, 2001, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, वाराणसी–223
7. शशि के जैन, 'नगरीय समाजशास्त्र, 2001, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर, पृ0सं0 230
8. शशि के जैन, नगरीकरण समाजशास्त्र, 2001, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ0सं0 240
9- Beteille, andre, castes:old and new, essays in social stratification, asia publishing house delhi 1969
10- kalenda, Pauline, caste in contemporary India, Raurat Publication, Jaipur, 1984
11. शशि के जैन, 'नगरीय समाजशास्त्र, 2001, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ0सं0 232
12. शशि के जैन, 'नगरीय समाजशास्त्र, 2001, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ0सं0 232
13. शशि के जैन, नगरीय समाजशास्त्र, 2001, रिसर्च पब्लिकेशन्स जयपुर, पृ0सं0 233
14. शशि के जैन, नगरीय समाजशास्त्र, 2001, रिसर्च पब्लिकेशन्स जयपुर, पृ0सं0 234
15. शशि के जैन, नगरीय समाजशास्त्र, 2001, रिसर्च पब्लिकेशन्स जयपुर, पृ0सं0 236–237
16. इंद्रा शुक्ला, ग्रामीण–नगरीय समाजशास्त्र 2014, ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड, पृ0सं0 299
17- Theodorson C.A.and Theodorson a.q, A modern dictionary of sociology, Thomas y crowell co. new York 1969, page no 450
18. Wirth Louis, Urbanization as a way of life, American Journal of sociology, vol. 44. 1938, Page no 49
19. वीरेन्द्र सिंह, विकास का समाजशास्त्र, 2001, मिश्रा टेडिंग कारपोरेशन, वाराणसी,पृ0सं0 213
20. Anderson and iswarn, Urban sociology new York publishing house, 1953
21. वीरेन्द्र सिंह, विकास का समाजशास्त्र,2001,मिश्रा टेडिंग कारपोरेशन, वाराणसी, पेज 213
22- Divies, k, Human society, The macmillan co. Newyork, 1959,
23. Writh Louis, Urbanzitation as a way of life, American journal of sociology, vol. 44,, 1938
24. S.A.Quinn, and D.B.carpenter, the American city, p 29
25. शशि के जैन, नगरीय समाजशास्त्र, 2001, रिसर्च पब्लिकेशन्स जयपुर,पृ0सं0 21

26. Nels Anderson, The Urban Community, p 124
27. ए0आर0 श्रीवास्तव, भारतीय समाज, 2002, पृ0सं0 71
28- Paul Meadows and E.Mizruchi, Urbanism, Urbanization and change compararative, p-02
29. डॉ0 आर0 सी0 पाण्डेय, नगरीय समाजशास्त्र, पृ0सं0 2

## 5.17 निबन्धात्मक प्रश्न

1. नगरीकरण की अवधारणा एंव परिभाषा को स्पष्ट करें।
2. भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया एंव इसके प्रभाव को स्पष्ट करें।
3. नगरीकरण से उत्पन्न समस्याओं को सविस्तार स्पष्ट करें।
4. नगरीयता किसे कहते है? इसकी विशेषतायें तथा नगरीयता एंव नगरीकरण में अन्तर स्पष्ट करें।
5. नगरवाद से आप क्या समझते है? नगरवाद, नगरीयता तथा नगरीकरण में अन्तर स्पष्ट करें।

# इकाई– 6

## उपनगर, महानगर, निगम और प्रतिवेश

## Sub-urban, Metropolitan, Corporation and Neighbourhood

6.0 उद्देश्य

6.1 परिचय

6.2 वैश्वीकरण और नगर

6.3 उपनगर

6.4 महानगर

6.5 निगम

6.6 प्रतिवेश या आसपड़ोस

6.7 भारतीय सन्दर्भ में उपनगर, महानगर, निगम और प्रतिवेश

6.8 निष्कर्ष

6.9 अभ्यास प्रश्न

6.10 सहायक अध्ययन

## 6.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बादः

- हम यह बेहतर ढंग से जान–समझ सकेंगे कि उपनगर, महानगर, निगम और प्रतिवेश का अर्थ क्या है?
- हम विश्लेषणात्मक तरीके से उपनगर, महानगर, निगम और प्रतिवेश के कार्यों व महत्व को समझ सकेंगे।

## 6.1 परिचय (Introduction)

नगरों और शहरी जीवन की अवधारणा का जन्म शिकागो स्कूल में हुआ, जिसे लुईस वर्थ (Louis Wirth) के निबंध "Urbanism as a way of life" में सर्वप्रथम स्पष्ट किया गया। लुईस ने शहर को सामाजिक रूप से बहुजातीय और भिन्न व्यक्तियों के बड़े, सघन और स्थायी व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया है (Large, dense and permanent settlement of socially heterogenous individuals). शहरीकरण का रुझान त्वरित रूप से विकसित होने का है, जो समुदायों और स्थान के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूपांतरण की वजह बनता है। आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2050 तक दुनिया की 70 प्रतिशत आबादी नगरों में रह रही होगी (Dutch government, 2014). इससे स्पष्ट है कि शहरी क्षेत्रों का भावी विकास अधिकतर विकासशील देशों में ही होने वाला है। शहरी के बीच स्थानिक और कार्यसंबंधी अंतर्संबंध, व्यवस्थाएं तथा उनके चारों ओर क्षेत्रों का विकास तथा नगरीय मानकों में बढ़ोतरी एकीकृत शहरी नियोजन के निर्माण और इसे लागू करने को प्रासंगिक बनाते हैं। हाल के वर्षों में शहरी, ग्रामीण और प्रतिवेशी नगरों के बीच बढ़ते अंतर्सम्बन्धों ने वैज्ञानिक, प्रशासनिक, राजनीतिक अभिरुचियों में भी वृद्धि की है। महानगरीय क्षेत्रों का कार्यढांचा संबंधी दृष्टिकोण इस अवधारणा को अन्य स्थानिक नियोजन आयामों से विशिष्ट बनाता है।

## 6.2 वैश्वीकरण एवं नगर (Globalization and City)

हाल के वर्षों में नगरों में बड़े परिवर्तन हुये हैं और राष्ट्रीय राज्यों को गति मिली है। इन परिवर्तनों को वैश्वीकरण के हालिया चरण से जोड़कर देखा जा सकता है, जिसकी शुरुआत 70 के दशक के मध्य में हुयी (Sassen 1996; Porter 1998; Castells 2000). शहरों की मूल भूमिका को दो चरणों में सन्दर्भित करके देखा जा सकता है। 1. वे न सिर्फ आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनों के केन्द्र के तौर

पर सकारात्मक प्रतिनिधित्व करते हैं, बल्कि इन परिवर्तनों के लिये आवश्यक उत्प्रेरक की तरह भी काम करते हैं। 2. वैश्वीकरण एवं सूचनाकरण का समन्वय पदानुक्रम में शहरों के महत्व को सर्वोच्च पायदान पर रखने का काम करता है, जिन्हें वैश्विक शहरों (World or Global Cities) के नाम से जाना जाता है। (Hall & Pain ,2006). World City शब्द की परिभाषा सर्वप्रथम Hall (1966) ने दी थी। उन्होंने शहरों की बहुआयामी भूमिकाओं को स्पष्ट किया और उन्हें निम्न कारकों के केन्द्र के रूप में परिभाषित किया:

- राजनीतिक शक्ति (राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय दोनों) तथा सरकार से संबंधित संगठन
- राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, जहां शहर स्वयं के लिये और कई बार आसपास के शहरों, देशों के लिये बतौर गोदाम (Enterpots) की तरह काम करते हैं
- बैंकिंग, बीमा और अन्य संबंधित वित्तीय सेवाएं
- हर तरह की उन्नत व्यावसायिक गतिविधियां
- सूचनाओं का संग्रहीकरण एवं प्रसार
- विशिष्ट उपयोग–उपभोग
- कला, संस्कृति और मनोरंजन तथा इनसे जुड़ी सभी अधीनस्थ गतिविधियां

**बाद में फ्रीडमैन (Friedmann, 1986) ने निम्न सात बिन्दुओं के आधार पर वैश्विक नगरों को स्पष्ट किया:**

- किसी नगर का वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण इसके स्वरूप और अवसरों की उपलब्धता पर आधारित होता है। नगरों में श्रम के स्थानिक विभाजन के नये स्वरूप का निर्धारण और इनका कार्य ही नगर के ढांचागत परिवर्तन में निर्णयात्मक होता है।
- विश्वभर में अधिकतम महत्व वाले नगर वैश्विक राजधानी के मॉडल के तौर पर देखे जाते हैं, जिन्हें स्थानिक संगठन और उत्पादन व विपणन–बाजार के समन्वय व संयोजन का आधार बिन्दु माना जाता है। इस तरह के अंतर्संबंधों का परिणाम वैश्विक नगरों को सघन स्थानिक पदानुक्रम में बदलता है।
- वैश्विक नगरों के कार्यों और तंत्र पर वैश्विक नियंत्रण का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से इनके ढांचागत विकास, रोजगार और उत्पादन क्षेत्र की गतिशीलता में नजर आता है।
- अंतर्राष्ट्रीय राजधानी के रूप में इन्हें महत्वपूर्ण स्थान के तौर पर देखा जाता है।
- ये नगर आंतरिक (राष्ट्रीय) और/अथवा बाह्य (अंतर्राष्ट्रीय) शरणार्थियों या पलायन करने वाले लोगों के लिये रहने, जीवनयापन करने के अवसर पाने का लक्ष्य बिन्दु होते हैं।
- वैश्विक नगरों के ढांचे में कुछ नकारात्मक बिन्दु भी शामिल होते हैं, मौजूदा दौर में औद्योगिक पूंजीवाद, स्थानिक और वर्गीय ध्रुवीकरण जैसे बिन्दु महत्वपूर्ण हैं।
- वैश्विक नगरों का विकास सामाजिक लागतों में बढ़ोतरी करता है, जो राजकोषीय क्षमता की दर से कई बार अधिक होता है

**लंबी बहस, वाद–विवाद और विमर्श के बाद फ्रीडमैन ने वैश्विक नगरों के तीन महत्वपूर्ण कार्यों को स्पष्ट किया (see also Derudder et al. 2012):**

- मुख्यालय (Headquarter Function)
- वित्तीय केन्द्र (Financial Centres)

- समायोजन वाले नगर, जहां राष्ट्रीय और क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था वैश्विक अर्थव्यवस्था से समन्वित होती है (Articulator Cities)

1990 में, सासेन (Sassen, 1991) ने वैश्विक और सांसारिक नगरों (Global and World Cities) में अंतर स्पष्ट करने का प्रयास किया। यहां सांसारिक नगरों से तात्पर्य उन नगरों से है, जिनके विकास के फलस्वरूप ही वैश्विक नगर की अवधारणा उभरी। सासेन के अनुसार तीन महत्वपूर्ण कारक, नयी तकनीक, दूरसंचार और सूचना प्रौद्योगिकी ने दोनों तरह के नगरों को विकेन्द्रीकृत और सामूहिक आर्थिक गतिविधियों के संचालन को प्रेरित किया। स्थानिक लिहाज से इस समन्वय के प्रसार और वैश्विक एकीकरण ने महत्वपूर्ण नगरों को नयी रणनीतिक भूमिका प्रदान की। इसके चलते ये नगर एक नये तरह के नगर के स्वरूप में विकसित हुये, जो प्रारंभिक ऐतिहासिक बैंकिंग और व्यापारिक केन्द्रों से बिल्कुल अलग थे। सासेन के अनुसार वैश्विक नगर आभासी आर्थिक चक्र का निर्माण करते हैं और चार नये तरीकों से काम करते हैं:

- नियंत्रण की मांग शहरों को नियंत्रण बिन्दु (Command Points) के तौर पर विकसित करती है
- इसके चलते वित्तीय और व्यापारिक सेवाओं–सुविधाओं की मांग बढ़ती है और इसके चलते नगर विभिन्न अग्रगामी आर्थिक क्षेत्रों के लिये मूल स्थान (Key Locations) बन जाते हैं
- ये नगर इन आर्थिक क्षेत्रों के लिये उत्पादन और नये आविष्कारों के लिहाज से उपयुक्त स्थान बनते हैं
- नगर मुख्य आर्थिक क्षेत्र के उत्पादन के लिये बाजार को नियंत्रित–नियमित करते हैं

## 6.3 उपनगर (Sub-urban)

उपनगरीय व्यवस्था को जटिल विषय माना जाता है। एक ओर इन्हें, 'महानगरों का ऐसा क्षेत्र, जहां शहर नहीं है' (Mckee and Mckee,2003) के तौर पर परिभाषित किया जाता है, वहीं दूसरी ओर इन्हें इससे कहीं अधिक माना जाता है। विभिन्न शोधकर्ताओं ने इन्हें जीवन के तरीकों, अमेरिकन स्वप्न, अद्वितीय और वैचारिक–मानसिक स्थिति के तौर पर परिभाषित किया है। उपनगरीय क्षेत्र हमारे इतिहास, संस्कृति में सन्निहित रहे हैं और टेलीविजन, फिल्मों व साहित्य में भी इनका आभासी प्रतिनिधित्व मिलता है, जिसे हमारे बाहरी जीवन का हर हिस्सा माना जा सकता है। इस तरह उपनगर न सिर्फ अतीत का विषय है, बल्कि वर्तमान का मॉडल भी है। यह एक ऐसा स्थान है, जिसका लगातार विघटन हो रहा है, फिर भी कहीं न कहीं इसका अस्तित्व बना रहता है।

भौगोलिक रूप से देखें तो उपनगर सम्मिश्रित उपयोग अथवा आवासों वाला क्षेत्र है जो या तो नगर और शहरी क्षेत्र का ही एक हिस्सा होता है अथवा शहर से अलग कुछ दूरी पर आवासीय समुदाय होता है (Hema Kumar and Rainis, 2015). अधिकतर देशों (जहां अंग्रेजी बोली जाती है) में उपनगरों को शहर के केन्द्रीय क्षेत्र या आंतरिक शहरी क्षेत्र के विपरीत माना जाता है, लेकिन आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अफ्रीका में इन्हें प्रतिवेश यानी पड़ोसी (Neighbourhood) कहा गया है। आस्ट्रेलिया, चीन, न्यूजीलैंड, ब्रिटेन और अमेरिका के कुछ राज्यों में नये उपनगर किसी बड़े शहर से जुड़े हुये होते हैं। सऊदी अरब, कनाडा, फ्रांस और अमेरिका के अधिकतर राज्यों में उपनगर अलग निकाय माने जाते हैं और यहां स्थानीय शासन ही किसी देश की तरह नियंत्रण करता है।

ऐतिहासिक रूप से उपनगर सबसे पहले 19वीं और 20वीं सदी में बड़े पैमाने पर उभरे, जिसका कारण रेल और सड़क परिवहन सुविधा में सुधार रहा, जिसने परिर्वन को बढ़ावा दिया (Mathew,2011). उपनगरों में महानगरों के आंतरिक क्षेत्रों के मुकाबले जनसंख्या घनत्व और व्यापारिक–व्यावसायिक केन्द्र कम होते हैं। हालांकि, ऐसे भी कई अपवाद हैं, जो औद्योगिक उपनगर, नियोजित समुदाय और कृत्रिम शहर होते हैं। उपनगर सामान्यतः नगरों के चारों ओर उन क्षेत्रों में विस्तारित होते हैं, जहां समतल भूमि का अभाव होता है (www.Wikipedia.com).

आमतौर पर माना जाता है कि उपनगरों में रहने वाली आबादी का सामाजिक–आर्थिक स्तर नगरों में रहने वाली आबादी के मुकाबले ऊंचा होता है। 1960 में अमेरिका के 200 शहरीकृत क्षेत्रों की जनगणना से यह तथ्य उजागर हुआ कि यह बड़े और पुराने क्षेत्रों से जुड़े व उपेक्षित इलाके हैं, लेकिन आकार में छोटे ये नये शहर आय, शिक्षा और व्यवसाय के लिहाज से संयोजित क्षेत्र से अधिक आगे हैं। बार–बार किये गये विश्लेषणों ने स्पष्ट किया कि आयु का कारक (Age Factor) शहरों के उपनगरीय क्षेत्रों में अंतर जानने का सबसे उपयुक्त माध्यम है। परिणामों ने स्पष्ट किया कि अमेरिकी शहरो का विभिन्न सामाजिक वर्गों के आवासीय वितरण के आधार पर निश्चित और पूर्वानुमानित दिशा में विकास हुआ है, जैसाकि बर्गीज मॉडल में भी स्पष्ट किया गया है।

बीते तीन दशकों में विमर्श का मसला शहरी उपनगरीय परिधि (Urban Periphery) के उदाहरण से वैश्विक उपनगरवाद (Global Suburbanism) एवं उत्तर उपनगरीय परिस्थितिवाद (Post Suburbia) में बदल गया है। यह हेनरी लीफेवर (Henry Lefebvre) के त्रिपदीय सिद्धांत, कल्पना, अनुभव और आवासस्थल (Conceived, Perceived and Lived Space) को बल देता है, जिसके जरिये वास्तविक शहरी रूपांतरण का विश्लेषण आसान होता है। वह बताते हैं कि नये मानकों की स्थापना शासन के नये स्वरूप, व्यवस्थाओं, विभिन्न निकायों के बीच सीमापार समन्वय के सशक्तीकरण की स्थिति को लागू करने और इनके विश्लेषण के लिये मापदंड का काम करते हैं। यह नये शहरी ढांचे की स्थापना में मदद करता है जो अधिक सघन तथा शहरीवाद को और अधिक ढंग से आत्मसात किये हुये होता है। इसकी शुरुआत आर्थिक मुख्यालयों और मध्यम वर्ग के लिये आवास उपलब्ध कराने से होती है। धीरे–धीरे इनमें नये सार्वजनिक स्थल जुड़ते जाते हैं और इन सबसे मिलकर नया शहरी वातावरण व छवि जन्म लेते हैं। इस तरह के प्रयास आंशिक रूप से सफल भी हुये। इस सन्दर्भ में पुरानी शहरी परिधि को विशिष्ट नगर के तौर पर परिभाषित किया जा सकता है। पारंपरिक परिभाषाओं और अवधारणाओं के जरिये शहरी स्वरूप को पूरी तरह समझ पाने में नाकाम रहे, इससे यह निष्कर्ष निकला कि नगरीय और उपनगरीय दुनिया का विभाजन शहरीकरण या नगरीकरण के विश्लेषण का उपयुक्त साधन नहीं रह गया है।

उपनगरों की स्थानिक उपस्थिति को किसी परजीवी (Parasite) की तरह भी देखा जाता है, जो मूल नगर की सामाजिक–आर्थिक गतिविधियों को अपनी ओर खींचने लगता है। उपनगरवाद की वैचारिक उपस्थिति ने बड़े पैमाने पर ऐसे अकादमिक साहित्य को भी आकार दिया है, जो उपनगरीय संक्रमण की निंदा करता है (Baxandall and Ewen,2000). आधुनिक शोधकर्ताओं ने इस अभियान को बढ़ावा दिया है हालांकि शहर के समुदायवादी पहलू को ध्यान में रखते हुये वे कई मामलों में उभयभावी (Ambivalent) भी नजर आते हैं। उपनगरीय क्षेत्रों में आवासीय सुविधा के विकास ने भी सामाजिक परिस्थितियों को स्थायित्व के बजाय गतिशील बने रहने पर जोर दिया। औद्योगिक उत्पादन, उपभोक्तावादी संस्कृति और उपनगरीय सामुदायिक विकास ने अमेरिका के लोगों को समुदाय के निर्माण

के बजाय समुदाय के चयन को प्रेरित किया। सामुदायिक स्थायित्व को ऐसी चीज माना गया, जिसे देखा–अनुभव किया जा सकता है, चयन किया जा सकता है और इसमें शामिल हुआ जा सकता है। पूर्व व्यवस्थित और लिपटे (Packaged) हुये ये समुदाय अन्यों को बेहतर अवसर और संभावनाओं के लिहाज से लुभाते हैं। मौजूदा अमेरिका में उपनगरों का अपने आसपास के नगरों से वियोजित होना एक ऐसी घटना है, जिसे शोधकर्ताओं ने अमेरिका का उपनगरीकरण (Suburbanization of United States) कहा है।

कई शोधकर्ता इस वियोजन या अलगाव को नये तेज और उग्र शहरी स्वरूप के विकास के तौर पर देखते हैं। हालांकि, यह वियोजन स्पष्ट करता है कि संबंधित उपनगर हाल में महत्वपूर्ण रूपांतरणों (Trnsformation) के दौर से गुजरा है। कई विमर्शों में यह भी बताया गया है कि उपनगरों का विकास असल में युद्धोपरांत अमेरिका में उपजी विशिष्ट परिस्थितियों का परिणाम था। उदाहरण के लिये, 1950 में यह माना जाता था कि घरों को गिरवी रखने की संघीय शासन की नीति उपनगरीकरण की जिम्मेदार थी। 1960 में अंतर्राज्यीय राजमार्गों और जातीय तनावों को विकेन्द्रीकरण का जिम्मेदार माना गया। लेकिन, वे सभी कारक जिन्होंने उपनगरीकरण को प्रेरित किया, युद्धोपरांत के घटनाक्रम थे और यह समस्या सिर्फ अमेरिका तक सीमित थी। वास्तव में उपनगरीकरण की प्रक्रिया युद्धपूर्व भी मौजूद थी और युद्धोपरांत भी साथ ही अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसे देखा जा सकता था।

## 6.4 महानगर (Metropolitan)

महानगरीय क्षेत्र (Metropolitan Region) स्पष्ट परिभाषित अवधारणा नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय (OECD, World Bank, etc.), यूरोपीयन (Sellers et al. 2013; Salet et al. 2003; Herrschel & Newman 2002; etc.) और जर्मन सन्दर्भों (Zimmermann & Heinelt 2012; BBSR 2010; Knieling 2009; etc.) में महानगरीय क्षेत्र को उच्च शहरीकृत, नगरीय इलाके के तौर पर वर्णित किया गया है, जहां जनसंख्या घनत्व उच्च होता है और आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियां यहां केन्द्रित होती हैं। यही नहीं, महानगरीय क्षेत्र वैश्विक नगरों के नेटवर्क का स्वरूप भी रखते हैं। विशिष्ट शासन ढांचा यहां की पहचान है जो केन्द्रीय नगरों और इसके आसपास के क्षेत्रों के बीच समन्वय, आंतरिक अधिकार क्षेत्र संबंधी तंत्र को नियंत्रित करता है। महानगरीय क्षेत्रों पर फोकस के लिये जरूरी है कि विश्लेषणात्मक और मानकीय दृष्टिकोण में विशेषज्ञता के साथ विभेद को समझा जाये। यहां यह उल्लेखनीय है कि इनमें से पहला पहलू जहां महानगरीय क्षेत्रों की परिभाषा और कार्यशैली को स्पष्ट करता है, वहीं दूसरा वस्तु, पूंजी, सूचना, पलायन प्रवाह आदि बिन्दुओं के लिहाज से उन केन्द्रों की पहचान करता है जो महानगरीय क्षेत्र हो सकते हैं और जो वैश्विक नेटवर्क में बुनियादी बिन्दु की तरह काम कर सकते हैं। यह वैश्विक क्रियाकलापों और स्थानीय आर्थिक एवं सामाजिक गतिविधियों के बीच समन्वय का काम करते हैं। महानगरीय क्षेत्रों को अन्य क्षेत्रों से अलग समझने के लिये स्थानिक नियोजन के निम्न चार पहलुओं को अहम माना जाता है:

- नवोन्मेषण एवं प्रतिस्पर्धा (Innovation and Competition)
- निर्णय क्षमता एवं नियंत्रण (decision-making and Control)
- मुख्य प्रवेशद्वार (Gateway)
- प्रतीक (Symbol)

इन पहलुओं के आधार पर महानगरीय क्षेत्रों के गुण और मापदंड तय किये गये हैं, जो विभिन्न श्रेणियों में अंतर करने में भी उपयोगी हैं।

वहीं, मानकीय दृष्टिकोण उन बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित करता है, जिनसे स्पष्ट हो कि स्थानिक विकास की चुनौतियों और मौजूद समस्याओं के समाधान के लिये महानगरीय क्षेत्र को किस तरह और क्या काम करना चाहिये। उदाहरण के लिये यूरोपियन देशों में महानगरों को स्थानिक विकास नीतियों के आधार पर परिभाषित किया गया है। इसका मकसद न सिर्फ उनमें स्वायत्त संगठन की स्थापना है, बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्धा भाव को सशक्त करना और राष्ट्रीय विकास में उनके योगदान की भूमिका तय करते हुये देश को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बेहतर छवि प्रदान करने में मदद करना भी है। लेकिन, मानकीय दृष्टिकोण की एक बुनियादी दिक्कत यह है कि यह विषय के तौर पर सिर्फ महानगरीय क्षेत्र के दायरे तक ही सीमित रह जाता है। इससे अवधारणा के गैरजरूरी उपयोग की संभावना बढ़ती है, जिसमें नकारात्मक प्रभावों की अनदेखी की जाती है। फ्रीडमैन (1986) ने इस दृष्टिकोण के आधार पर वैश्विक नगरों के तीन मुख्य कार्य बताये हैं (see also Derudder et al. 2012):

- मुख्यालय (Headquarters)
- आर्थिक–वित्तीय केन्द्र (Financial Centres)
- संयोजन क्षमता जो राष्ट्रीय या क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक अर्थव्यवस्था से जोड़े (Articulator cities that link national or regional economy to the global economy)

## महानगरीय प्रदेश (Metropolitan Region)

नगरीय शब्दावली और अवधारणाओं में अब तक महानगरीय प्रदेश को अंतर्राष्ट्रीय संवाद में पर्याप्त स्थान नहीं मिला है। इसके बजाय वृहद महानगरों और क्षेत्रों (Mega Cities and Mega Regions) के त्वरित विकास और इनसे जुड़ी समस्याओं के समाधान पर ध्यान अधिक केन्द्रित किया गया है। इसके परिणाम क्षेत्रीय, स्थानिक और राजनीतिक ढांचे में नजर आते हैं, जहां नगरीय और क्षेत्रीय अवस्थापना विकास के साथ आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय क्षेत्रों में कई चुनौतियां सामने आती हैं। महानगरीय प्रदेशों को सामान्यतः उन क्षेत्रों के तौर पर जाना जाता है, जो औपचारिक तौर पर स्थानीय शासन के अधिकार क्षेत्र में आने वाले नगरीय इलाके हों। सामान्यतः ये नगर सघन आबादी वाले होते हैं (कम से कम एक लाख आबादी)।

महानगरीय प्रदेश में आसपास के क्षेत्र भी शामिल हो जाते हैं, इनमें नजदीक के नगरीकृत आवासीय क्षेत्र और कम जनसंख्या घनत्व वाले वे क्षेत्र भी आते हैं, जो सड़कों, परिवहन आदि सुविधाओं से नगरों से जुड़ते हैं। महानगरीय प्रदेशों के उदाहरणों में ग्रेटर लंदन और मेट्रो मनीला शामिल हैं (UNICEF, 2012). यह परिभाषा पूर्ववर्ती नगर क्षेत्र वर्णन से मिलती–जुलती है (Neuman & Hull ,2011) जिसका फोकस मूल नगर और इसके आसपास के क्षेत्रों के कार्य संबंधों से है, जो एक से दस लाख तक की आबादी के नगर समूहों से संबद्ध हो। फिर भी महानगरीय प्रदेश (Metropolitan Region) शब्द का इस्तेमाल शायद ही कभी यूरोप से बाहर कहीं किया जाता है। इसके बजाय महानगरीय क्षेत्र (Metropolitan Areas) शब्द का अधिक इस्तेमाल किया जाता है (e.g. Demographia.com 2013) जो अर्जेंटीना, ब्राजील, कनाडा, अमेरिका जैसे देशों में पहले विकसित हुये हैं। यहां कनाडा का उदाहरण यह भी स्पष्ट करता है कि महानगरीय क्षेत्रों के संबंध में सोच–समझ में समय के साथ खासा

अंतर–परिवर्तन भी आया है (see excursus). सामाजिक लिहाज से देखें तो महानगरीय क्षेत्रों के गुण–विशिष्टताओं को निम्न चार आयामों के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता हैः

- विश्लेषणात्मक तरीके से देखें तो महानगरीय क्षेत्रों को महानगरीय सार्वजनिक एवं निजी सुविधाओं–सेवाओं के संग्रहीत स्वरूप के तौर पर परिभाषित किया जा सकता है
- कारकों और क्रियाओं के आधार पर देखें तो महानगरीय क्षेत्र क्षेत्रीय उद्देश्यों, रणनीति और आवश्यक संगठनात्मक ढांचे की पूर्ति के लिये बुनियादी क्षेत्रीय हितधारकों के साथ संयुक्त जानकारी–ज्ञान का आदान–प्रदान करते हैं
- स्थानिक विकास के सन्दर्भ में महानगरीय क्षेत्रों को मानकीय माना जाता है जो अन्वेषण, रचनात्मकता और आर्थिक विकास की दिशा में मार्गदर्शक का काम करते हैं
- नगरीय और क्षेत्रीय विकास के प्रतीक के तौर पर महानगरीय क्षेत्र उन नियमों, मानकों और मूल्यों के प्रतीकचिह्न हैं जो महानगरीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया के विभिन्न पहलुओं से संबद्ध होते हैं

## महानगरीय प्रदेशों में ढांचागत अंतर (Structural Differentiation of Metropolitan regions)

उपरोक्त अवधारणाओं को ध्यान में रखते हुये गहन विश्लेषण से ज्ञात होता है कि महानगरीय क्षेत्रों में न सिर्फ आकार, बल्कि सामाजिक स्थिति, क्षेत्रीय हितधारकों की भूमिका और महानगरीय शासन के अस्तित्व जैसे पहलू भी शामिल होते हैं। इस आधार पर महानगरीय क्षेत्रों में अंतर के निम्न बिन्दु हो सकते हैंः

- केन्द्रीयता, जो महानगरीय क्षेत्र के बहुकेन्द्रीय स्थानिक ढांचे से एककेन्द्रीयता को अलग करती है
- बहुकेन्द्रीयता की विशिष्टता जो बहुकेन्द्रीय अंतर्नगरीय आकार के अंतर को स्पष्ट करती है
- कारकसमूहों के सन्दर्भ में महानगरीय क्षेत्रों की स्व अवधारणा, यह सार्वजनिक नीति दृष्टिकोण से समन्वित क्षेत्रीय कार्यसंबंधों तक विस्तृत हो सकती है, जिससे निजी व्यवसाय से सहयोग के तरीके विकसित किये जाते हैं जो क्षेत्र को व्यावसायिक स्थान की पहचान दिलाता है
- प्रोत्साहन, संचार आधारित औपचारिक क्षेत्रीय संचालक साधन और सहायक अनौपचारिक साधन
- महानगरीय प्रदेशों में बहुकेन्द्रीय ढांचे की उपलब्धता विकास और प्रबंधन के लिये जटिल प्रयासों की जरूरत की वजह बनती है, ऐसे में आंतरिक तकनीकी और राजनीतिक संगठन को खासी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। तकनीकी रूप से देखें तो नीति निर्माताओं के आंतरिक मतभेद और विविधताएं बहुकेन्द्रित ढांचे की सबसे बड़ी चुनौती हैं। वहीं, राजनीतिक लिहाज से देखें तो शासन व्यवस्था की चुनौती तब बढ़ जाती है, जब प्रतिस्पर्धी शहर संयुक्त महानगरीय व्यवस्था चला रहे हों। फिर भी, बहुकेन्द्रीयता हमेशा समस्या भरी नहीं होती है। असल में यह स्थानिक विकास और कार्यसंबंधों का नियंत्रण करती है। इस लिहाज से बहुकेन्द्रीयता की विश्लेषणात्मक अवधारणा महानगरीय प्रदेशों में विकास प्रक्रिया के विश्लेषण का बेहतर ढांचा उपलब्ध कराने के साथ भावी आवश्यकताओं और विकास उद्देश्यों की पूर्ति का जरिया भी बनती है (उदाहरण के लिये सार्वजनिक परिवहन, तकनीकी अवस्थापना विकास या नगरों के मध्य श्रम विभाजन आदि)

नगरीय समूह अपेक्षाकृत नयी घटना है। 1950 में सिर्फ न्यूयॉर्क और टोक्यो ही ऐसे नगर थे, जहां 10 लाख के करीब आबादी रहती थी। 1970 के दशक तक शंघाई, मेक्सिको सिटी जैसे शहर भी इसमें जुड़ गये, जिसके बाद त्वरित नगरीय विकास देखा गया। 2004 तक दुनिया की करीब नौ प्रतिशत आबादी दुनिया के 22 मेगासिटी में रहने लगी थी (U.N.,2014). वर्ष 2020 तक मुंबई, दिल्ली, मेक्सिको,

साओपाओलो, ढाका, जकार्ता और लागोस जैसे शहरों में 20 लाख से अधिक आबादी के रहने की संभावना है। विभिन्न देशों में इस विकास ने नगरीय प्रबंधन के लिये अहम चुनौतियां पेश की हैं (Du,2016). इन परिवर्तनों को निम्नवत समझा जा सकता हैः

- यदि केन्द्रीय नगर का विकास क्षेत्रीय स्तर के नगरों पर निर्भर करता है तो परिदृश्य जटिल हो जाता है। विभिन्न विकासशील नगरीय समूहों में बहुकेन्द्रित महानगरों (जिन्हें वृहद् क्षेत्र यानी मेगा रीजन के नाम से भी जाना जाता है) ने बहुत विशाल प्रादेशिक अस्तित्व का निर्माण किया है। उदाहरण के लिये अमेरिका में बॉसवाश स्ट्रेच (Boston, Washington and New York) और चीन में चोंगचिन (Chongqing) (Yang 2009).
- महानगरीय प्रदेश मेगासिटी और मेगारीजन के लिये सहायक पैमानों का नियंत्रण करते हैं। दुनियाभर में नगरीय समूह राजनीतिक रुचि का विषय रहे हैं। मूल केन्द्रीय नगर और आसपास के क्षेत्रों के बीच आंतरिक कार्यसंबंधों के कारण पर्याप्त समन्वय और सहयोग के लिये विभिन्न समाधान तलाशे गये हैं। स्थान विशेष के विशिष्ट सन्दर्भों और कार्यढांचों के लिहाज से महानगरीय प्रदेशों में अंतर देखा जा सकता है। विभिनन देशों में महानगरीय क्षेत्रों को आर्थिक और राजनीतिक रूप से निर्णायक महत्व दिये जाने के बावजूद अकसर यह प्रश्न उठता है कि महानगरीय प्रदेशों को मूल प्रासंगिकता के अनुरूप किस तरह व्यवस्थित किया जाये। महानगरीय क्षेत्र सामाजिक और सांस्कृतिक नवोन्मेषण के केन्द्र बनकर उभरते हैं।
- कुछ देशों में महानगरीय प्रदेशों–क्षेत्रों से जुड़ी विशिष्ट नीतियां तय की गयी हैं। उदाहरण के लिये यूरोप में यूरोपीयन यूनियन रिसर्च प्रोग्राम ऑन स्पाशियल डेवलपमेंट (ESPON) महानगरीय क्षेत्रों से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर शोध का काम कर रहा है। इसका आधार यूरोपीयन स्पाशियल डेवलपमेंट पर्सपेक्टिव (ESDP) है, जिसकी स्थापना वर्ष 1999 में हुयी थी। यूरोपीयन यूनियन से जुड़े कुछ देशों (जैसे फ्रांस, जर्मनी और पोलैंड) ने महानगरीय क्षेत्रों को उनकी अपनी स्थानिक विकास नीतियों के हिसाब से एकीकृत किया है। दुनिया के अन्य क्षेत्रों, जैसे ब्राजील, भारत, दक्षिण अफ्रीका, तुर्की आदि में भी महानगरीय क्षेत्रों के लिये यह प्रासंगिक हो गया है।

## 6.5 निगम (Corporations)

भारत में नगरीय प्रशासन के सन्दर्भ में देखें तो सर्वाधिक बोझ नगर निकायों पर ही रहता है। यदि हम किसी महानगर में रहते हैं तो ये निगम खासे सशक्त और आर्थिक रूप से सक्षम दिखते हैं और उनके पास पर्याप्त बजट की भी व्यवस्था होती है। गलियों की सफाई करने वाले स्वच्छकारों से लेकर नगर निगम के मुख्य अधिकारी तक कर्मचारियों की लंबी श्रृंखला वहां होती है। भारत में मुंबई स्थित बृहन्मुंबई नगर निगम (बीएमसी) को देश का सबसे अमीर निगम माना जाता है।

नगर निगमों की स्थापना दिल्ली, मुंबई, चेन्नई, कोलकाता और इन जैसे बड़े नगरों में बेहतर प्रशासनिक प्रक्रियाओं के संचालन के लिये की जाती है। संबंधित राज्य की विधानसभा से प्रस्ताव पारित करने के बाद इनकी स्थापना की जाती है। केन्द्रशासित राज्यों में भारतीय संसद द्वारा पारित प्रस्तावों से निगम स्थापित होते हैं। नगर निगमों में तीन अधिकरण मुख्य होते हैं, परिषद (Council), स्थायी समिति (Standing Committee) और आयुक्त (Commissioner)। परिषद का गठन पार्षदों के समूह से होता है, जिनका सीधा निर्वाचन जनता करती है। परिषद के मुखिया को महापौर (Mayor) कहा जाता है। मेयर की सहायता के लिये उपमहापौर (Deputy Mayor) की भी व्यवस्था दी जाती है। परिषद की सभी बैठकों की अध्यक्षता मेयर ही करते हैं।

चूंकि पार्षदों की संख्या के लिहाज से परिषद का आकार बेहद बड़ा होता है, परिषदीय कार्यों के संचालन के लिये स्थायी समिति का गठन किया जाता है। स्थायी समिति ि"ाक्षा, स्वास्थ्य, कर व्यवस्था, सार्वजनिक कार्य आदि के संबंध में निर्णय ले सकती है। नगर आयुक्त (Municipal Commissioner) निगम के मुख्य कार्यकारी अधिकारी होते हैं और वह स्थायी समिति व परिषद द्वारा लिये जाने वाले फैसलों को लागू करवाने का काम करते हैं। नगर आयुक्त की नियुक्ति राज्य सरकार द्वारा की जाती है। सामान्यतः आईएएस अफसर को नगर आयुक्त के पद पर नियुक्ति दी जाती है।

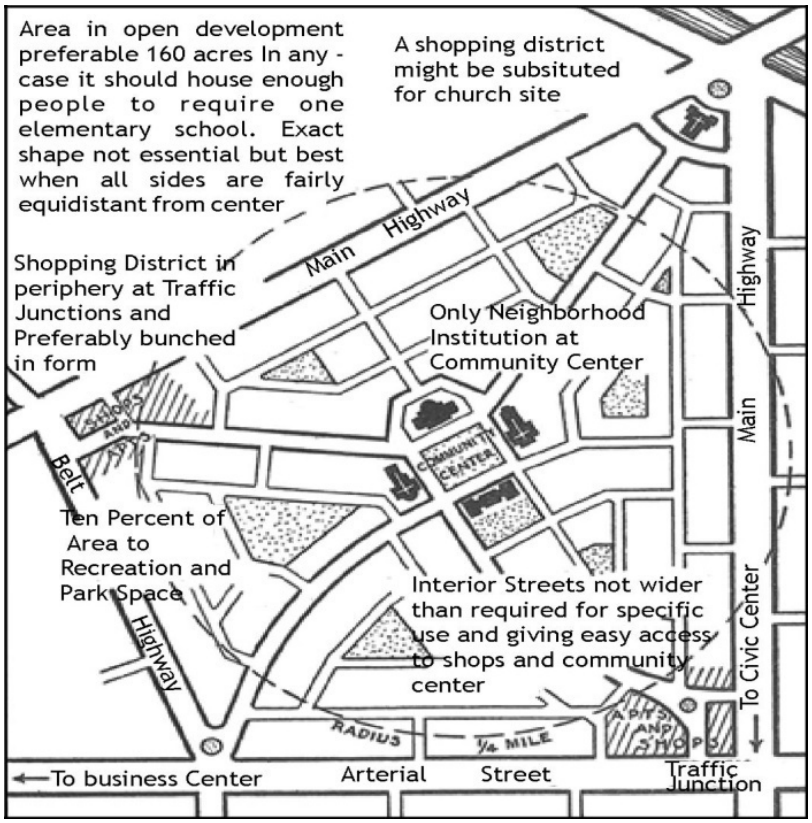


## 6.6 प्रतिवेष या आसपड़ोस (Neighborhood)

प्रतिवेश या पड़ोस शब्द का सामान्य अर्थ पारंपरिक और सामयिक आवासीय विकास के सन्दर्भ में लिया जाता है। वर्ष 1929 में सबसे पहले क्लेरेंस ए. पेरी ने प्रतिवेशी इकाई (Neighborhood Unit) शब्द का इस्तेमाल किया था, तब से यह नगरों के नियोजन का अहम हिस्सा बन गया है। विकास एवं नियोजन के प्रयासों के बेहतर परिणाम हासिल करने के लिये यह आवश्यक है कि प्रतिवेश या पड़ोस के सामाजिक और भौतिक अर्थों को बेहतर ढंग से समझा जाये। सामान्यतः पड़ोस का अर्थ नगरों से सटे उपभागों और ग्रामीण क्षेत्रों से लगाया जा सकता है। साधारण परिभाषा यह है कि प्रतिवेश किसी नगर के पड़ोस का वह स्थान है, जहां लोग रहते हैं। लुईस मम्फोर्ड ने प्रतिवेश को ऐसा प्राकृतिक तथ्य माना है, जो तब अस्तित्व में आता है जब कोई जनसमूह किसी क्षेत्र में रहने लगता है। मानवता के प्रारंभिक दौर से ही व्यावहारिक, आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारणों से लोग एक–दूसरे के समीप क्षेत्रों में रहते और समुदायों की स्थापना करते रहे हैं। इन वर्गों में कुछ विशेष भौतिक और सामाजिक गुण मिलते हैं जो इन्हें व्यवस्था के अन्य हिस्सों से अलग करते हैं। प्रतिवेशों के इन समूहों ने ही गांवों, नगरों और कस्बों का निर्माण किया। प्रतिवेश हर नगरीय या गैरनगरीय क्षेत्र में होने वाली देशव्यापी घटनाओं की एक इकाई है। अर्नोल्ड विटिक (1974) प्रतिवेश को नियोजित और एकीकृत नगरीय क्षेत्र के तौर पर परिभाषित करते हैं, जो विस्तृत समुदाय का हिस्सा होता है और जहां आवासीय

क्षेत्र, एक या अधिक स्कूल, बाजार, धार्मिक भवन, खुले स्थान और कई बार बेहतर सेवा–सुविधाएं भी हासिल होती हैं।

नियोजन अवधारणा में प्रतिवेशी इकाई का उभार 1900 के बाद प्रारंभिक दशकों में तब हुआ, जब औद्योगिक क्रान्ति के कारण पर्यावरण और सामाजिक परिस्थितियों को होने वाले नुकसान सामने आये। न्यूयॉर्क की नियोजन प्रक्रिया में शामिल रहे क्लेरेंस आर्थर पेरी (1872-1944) बताते हैं कि प्रतिवेशी इकाइयों की स्थापना की शुरुआत समुद्र से होने वाले नुकसानों से समुदाय को बचाने के साधन के तौर पर हुयी। पेरी ने अपनी इस अवधारणा को 1929 में लिखी पुस्तक 'Regional Plan of New York and Its Environs' में सर्वप्रथम स्पष्ट किया, जिसने बाद में इस दृष्टिकोण को नियोजन का उपयोगी और अहम साधन बना दिया। पेरी ने जनसंख्या के विशिष्ट आकार के हिसाब से प्रतिवेश की स्थापना की जरूरत और स्थापना के तरीकों का ठोस डायग्राम पेश किया। इस मॉडल ने नगरों और प्रतिवेशों में आवासों, सामुदायिक सेवाओं, गलियों, व्यवसायों आदि की स्थापना के संबंध में गाइडलाइन का काम किया।

## क्लेरेंस पेरी की अवधारणा (Clarence A. Perry's Conception)

पेरी ने प्रतिवेशी इकाई को आबादी वाला क्षेत्र बताया है, जिसे प्राथमिक स्कूल की आवश्यकता होती है, जिसमें 1000 से 1200 तक छात्र पढ़ सकें। इस लिहाज से प्रतिवेश की आबादी छह हजार से अधिक होनी चाहिये। निम्न सघन आवासीय क्षेत्र के तौर पर विकसित इस क्षेत्र में प्रति एकड़ दस परिवार रहते हैं, इस लिहाज से प्रतिवेश की स्थापना 160 एकड़ के कुल क्षेत्र में की जानी चाहिये। यहां यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि इसे इस तरह आकार दिया जाये कि बच्चों को स्कूल तक पहुंचने के लिये चौथाई मील से अधिक नहीं चलना पड़े। कुल क्षेत्र का दस फीसदी मनोरंजन गतिविधियों के लिये तय होना चाहिये। परिवहन सुविधाओं के लिये चारों ओर गलियां, आंतरिक सड़कें इस तरह हों कि यहां रहने वालों को बेहतर सुविधा मिल सकें। इकाई में बाजार, धर्मस्थल, पुस्तकालय, सामुदायिक केन्द्र होने चाहिये। सामुदायिक केन्द्रों की स्थापना स्कूलों के ही आसपास की जानी चाहिये। (Gallion, 1984).

पेरी ने अच्छे प्रतिवेश के डिजाइन के छह बुनियादी सिद्धान्त बताये हैं। विभिन्न संस्थानों, सामाजिक कार्यों में इन सिद्धान्तों का इस्तेमाल किया गया है:

- मुख्य मार्ग और इन पर होने वाला यातायात प्रतिवेश के आवासीय क्षेत्र से नहीं गुजरना चाहिये, इसके बजाय इन मार्गों को प्रतिवेश की सीमाओं की तरह काम करना चाहिये अर्थात मुख्य मार्ग प्रतिवेश के बाहर से निकलने चाहिये
- प्रतिवेश के भीतर आंतरिक गलियों का निर्माण किया जाना चाहिये, डिजाइन इस तरह होना चाहिये कि यहां शांत, सुरक्षित और कम मात्रा का यातायात हो, जो आवासीय क्षेत्र के परिवेश को संरक्षित करने में मददगार हों
- प्रतिवेश की आबादी इतनी होनी चाहिये कि वह प्राथमिक स्कूल की स्थापना के लिये आवश्यक संख्या के अनुकूल हो
- प्रतिवेश का केन्द्र बिन्दु प्राथमिक स्कूल होना चाहिये जो प्रतिवेश के बीच स्थित हो, इसके अलावा अन्य सेवा प्रदाता संस्थान भी प्रतिवेश की चहारदीवारी के भीतर होने चाहिये
- प्रतिवेश की त्रिज्या अधिकतम चौथाई मील होनी चाहिये, ताकि प्राथमिक स्कूल में पढ़ने के लिये चारों ओर से आने वाले बच्चे आसानी से चलकर यहां तक पहुंच सकें

- बाजारों की स्थापना प्रतिवेश के किनारों पर की जानी चाहिये, मुख्य सड़कों की क्रॉसिंग वाला स्थान इसके लिये सर्वथा उपयुक्त हो सकता है

प्रतिवेशी इकाइयों में हाईस्कूल और एक या दो बड़े व्यावसायिक केन्द्र होने चाहिये, जो प्रतिवेश के चारों ओर से अधिकतम एक मील त्रिज्या की दूरी पर अवस्थित हों। नियोजन की प्रक्रिया में प्रतिवेश को कई बार परिभाषित किया जाता रहा है। संशोधनों, सुधारों के बावजूद प्रतिवेश का सिद्धान्त किसी नगर के सामाजिक, राजनीतिक और भौतिक संगठन में अहम बना रहता है। यह आबादी की ऐसी इकाई का प्रतिनिधित्व करता है, जिसे शिक्षा, मनोरंजन और अन्य सेवाओं–सुविधाओं की आवश्यकता होती है और इन सुविधाओं के मानकों के हिसाब से ही प्रतिवेश का आकार और डिजाइन तय होता है।

प्रतिवेश की अवधारणा की खासी आलोचना भी हुयी है। कुछ आलोचकों ने यह तर्क दिया है कि प्रतिवेशों की स्थापना लोगों के समूहों की स्थापना करती है, जो आगे चलकर वर्गीय पहचान में बदल जाती है। कुछ का मानना है कि प्रतिवेश का सिद्धान्त इतना अधिक आदर्शवादी और कल्पनाधारित है कि आधुनिक शहरी जीवन में इसका व्यावहारिक होना संभव नहीं। प्रतिवेश के केन्द्र में स्कूल को रखे जाने की भी यह कहकर आलोचना की गयी है कि यह अव्यावहारिक और सिर्फ बच्चों पर केन्द्रित है, जबकि समुदाय के लिये जरूरी सुविधाओं की असमान अवस्थिति पर ध्यान नहीं दिया गया है जो समुदाय के कई लोगों के लिये बेहद दूर होते हैं। पार्कों और अन्य सार्वजनिक स्थानों की स्थापना में निर्माण और देखभाल–मरम्मत के लिहाज से खर्चीला हो सकता है। आलोचक पेरी के सार्वजनिक मिलन केन्द्र की स्थापना की अवधारणा पर भी सवाल खड़े करते हैं, उनका कहना है कि नगरीय क्षेत्रों में आमतौर पर अलग–अलग तरह के लोग–समुदाय होते हैं, ऐसे में इस तरह के केन्द्र औचित्यपूर्ण नहीं हैं। आलोचक यह भी सवाल उठाते हैं कि शहरी सुविधा और सेवा केन्द्र के तौर प्रतिवेशी इकाई किस तरह आर्थिक क्षमतावान हो सकती है? और यह भी कि प्रतिवेशी क्षेत्रों के स्कूल आकार में इतने छोटे होंगे कि वहां विशिष्ट गतिविधियों का संचालन कर पाना संभव नहीं होगा।

## 6.7 भारतीय सन्दर्भ में प्रतिवेश (Neighborhood in Indian Context)

पारंपरिक पर्यावरण एवं ग्रामीण व्यवस्थाओं में प्रतिवेशी इकाई की अवधारणा ने संबद्धता, पहचान, स्वीकार्यता की सशक्त भावना को विकसित किया। अधिकतर सामुदायिक सेवाओं और व्यापारिक गतिविधियों की यहां रहने वाले लोगों से समीपता ने सामाजिक संवाद को बढ़ावा दिया। लेकिन, नगरीय सन्दर्भ में देखें तो सामयिक नगरीय पर्यावरण में प्रतिवेशी भावना आम भागीदारी पर आधारित नहीं है। नगरीकरण के प्रभाव के चलते आधुनिकीकरण हुआ और समुदायों की संख्या में भी बढ़ोतरी हुयी साथ ही आंतरिक संयोजन में भी वृद्धि हुयी। इसके चलते प्रतिवेश में स्थानिक समुदाय की गतिशीलता में बढ़ोतरी ने प्रतिवेश को नुकसान पहुंचाया। गतिशीलता और परिवहन सुविधाओं में बढ़ोतरी के चलते प्रतिवेश में रहने वाले लोग नये अवसरों के लिये खुल गये, जिससे प्रतिवेश को मिलने वाले लाभों में कमी देखी गयी। ऐसे में बुनियादी गतिविधियां और निवासरत लोगों के जीवनस्तर में बदलाव ही सामाजिक पर्यावरण के निर्माण के अहम कारक बन गये (Berk, 2005). यह मुद्दा सामाजिक पर्यावरण को मौजूदा भौतिक पर्यावरण से अलग करने का कारण बनता है। स्वतंत्र भारत में विकास नियोजन प्रक्रिया की स्थापना और विस्तार का विचार प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने दिया। भारत की पुरानी सामाजिक परंपराओं के चलते प्रतिवेशी इकाई की अवधारणा काफी हद तक भारतीय सन्दर्भ के लिये उपयुक्त रही। चंडीगढ़, भुवनेश्वर, गांधीनगर जैसे प्रतिवेशी इकाइयों की स्थापना में

सफलता के बाद यह भारतीय नियोजन का अहम हिस्सा बन गया। नये नगरों और नगरीय विस्तारों की योजना के लिये यह उदाहरण के तौर पर उभरा। इसका बुनियादी सिद्धान्त नये नगरों की स्थापना के साथ संबद्ध प्रतिवेशी इकाई की भी स्थापना का रहा।

## सामयिक भारत में महानगर (Metropolis in contemporary india)

नगरीय भारत किस दिशा में जा रहा है? इस सवाल का विश्लेषण करते हुये दीपांकर गुप्ता ने 2011 के जनसांख्यिकीय आंकड़ों का गहन अध्ययन किया है। वह बताते हैं कि ये आंकड़े शहरी विकास, रुझान, तरीकों और विशिष्ट गतिविधियों की जानकारी देते हैं। गुप्ता के अनुसार, 'नगरीकरण के अलावा हमें इस तथ्य पर भी ध्यान देना चाहिये कि भारत की 70 फीसदी शहरी आबादी एक लाख या इससे अधिक आबादी वाले कस्बों में रहती है।' आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2001 में दस लाख से अधिक आबादी वाले शहरों में ही भारत की 68.7 प्रतिशत आबादी रहती थी, लेकिन वर्ष 2011 के आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि अब यह प्रतिशतता 42.6 प्रतिशत रह गयी है, जो पिछली जनगणना के मुकाबले 26 प्रतिशत की गिरावट है। यह प्रतिशतता साफ करती है कि शहरी विकास अब कहां हो रहा है और यह भी कि इसकी निरंतरता भी बनी हुयी है।

उदाहरण के लिये दिल्ली भारत का सबसे सघन आबादी वाला महानगर है। यहां रहने वाले लोग बेहद संकुचित स्थान में रहते हैं, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि दूसरे नगरों में स्थिति इससे बेहतर है। जनसंख्या रिपोर्ट शहरी भारत के कई अव्यवस्थित सत्यों को भी उभारती है। यह स्पष्ट करती है कि नगरीकरण की प्रक्रिया में नगरीय, महानगरीय मूल्यों को प्रोत्साहित नहीं किया गया। गुप्ता बताते हैं, 'भारत के वर्तमान में अतीत का प्रतिबिंब नजर आता है। इसका उदाहरण भारतीय नगरों में लिंगानुपात है। वर्ष 2011 का जनसंख्या आंकड़ा बताता है कि भारतीय नगरों, जिसमें देश की राजधानी दिल्ली भी शामिल है, प्रति एक हजार पुरुषों पर सिर्फ 868 महिलाएं ही हैं।' (Gupta,2012). दूसरी ओर, यह भी तथ्य है कि ग्रामीण आबादी आज भी अधिक है और पिछली जनगणना के मुकाबले 2011 की जनगणना में इसमें वृद्धि भी दर्ज की गयी है। ताजा आंकड़े बताते हैं कि 72.2 प्रतिशत भारतीय आबादी आज भी 6,41,000 गांवों में रह रही है (Bhagat,2012). ऐसे में जब यह सवाल उठता है कि कई ग्रामीण क्षेत्रों में शहरीकरण की होड़ लगी है, तब इसके जवाब में आंकड़ों की हकीकत से यह सवाल उठता है कि ऐसा है तो भारत में आज भी इतनी संख्या में ग्रामीण क्यों हैं?

भावी संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए गुप्ता कुछ बुनियादी सवाल उठाते हैं– क्या सभी लोगों का शहर से कस्बों और फिर वहां से गांव तक तेजी से लौट पाना संभव है? लेकिन, असल में ऐसा संभव नहीं है, क्योंकि नगरों से गांवों की ओर पलायन बेहद नगण्य है। 2001 के जनसंख्या आंकड़े बताते हैं कि सिर्फ 8.6 प्रतिशत पुरुषों का अंतर्राज्यीय पलायन दर्ज किया गया, इसमें भी सिर्फ 6.1 प्रतिशत लोग ही शहरों से गांवों की ओर लौटे। यहां ग्रामीण लघु–कुटीर उद्योगों की स्थिति का विश्लेषण भी करना जरूरी है। यह बताता है कि गांवों से गांवों की ओर पुरुषों का पलायन अंतर्राज्यीय (एक से दूसरे राज्य में) और आंतरिकराज्यीय (राज्य के ही भीतर) काफी अधिक है, यह क्रमशः 20.7 प्रतिशत और 41.6 प्रतिशत दर्ज किया गया (desinghkar and ferrington , 2009). दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि पलायन करने वाले का पलायनस्थान हमेशा शहर हो यह आवश्यक नहीं है। इस तरह यह कहा जा सकता है कि भारत महानगर की दिशा से भी कहीं आगे बढ़ रहा है।

## 6.8 निष्कर्ष (Conclusion)

विश्व बैंक की प्रख्यात अर्थशास्त्री तारा विश्वनाथ और उनकी टीम ने **"*Urbanization beyond Municipal Boundaries: Nurturing Metropolitan Economies and Connecting Peri-Urban Areas in India*"** में पाया कि भारत में अधिकतर विकास महानगरीय क्षेत्रों से बाहर हो रहा है। उनका शोध बताता है कि उपनगरीकरण वैश्विक घटनाक्रम है जो आमतौर पर विकास के मध्यवर्ती चरण में उभरता है। भारत में यह अपेक्षित काल से पहले ही तेजी से उभरा है। विश्वनाथ कहती हैं, 'समयपूर्व उपनगरीकरण सकारात्मक हो सकता है, क्योंकि इससे नीतियों के प्रभाव के अध्ययन और इनमें सुधार की गुंजाइश बनी रहती है। इसके जरिये विकासशील नगरों को पूरा लाभ दिलाने की दिशा में काम किया जा सकता है।' बीते दो वर्षों से विश्व बैंक की टीम भारत में सरकार, अकादमिक क्षेत्रों से जुड़े विद्वानों के साथ काम कर रही है, जो शहरी विकास में विशेषज्ञता रखते हैं। साथ ही निजी सेक्टर भी इनके साथ जुड़े हैं, जो भूमिसुधार, अवस्थापना विकास, परिवहन सुविधा आदि के विकास में गहरा प्रभाव डालते हैं।

कई अन्य शोधकर्ताओं ने भी इस विषय पर काम किया है। कुमार (2002) ने भारत में महानगरीय प्रक्रिया और शहरी समूहों पर विस्तृत अध्ययन किया है। वह बताते हैं कि भारत में नगरीकरण नगरों से बाहर तेजी से उभर रहा है। वह इसे परिवर्तनकारी घटनाक्रम मानते हैं और बताते हैं कि नगरीकरण की प्रक्रिया में शामिल हो चुके गांवों को शहरी गांव कहा जाना चाहिये। वह इन्हें भारतीय शहरी समूह का ही हिस्सा मानते हैं।

## 6.9 अभ्यास प्रश्न (Model Questions)

- उपनगर, महानगर, निगम और प्रतिवेश की अवधारणा को विस्तार से समझाएं।
- वैश्विक परिदृश्य में उपनगर, महानगर, निगम और प्रतिवेश की अवधारणा को परस्पर समन्वित करते हुये समझाएं।
- उपनगर, महानगर, प्रतिवेश और निगमों के भारतीय सन्दर्भ में आंतरिक संबंधों को स्पष्ट करें।

## 6.10 सहायक अध्ययन (Suggested Readings)


- David L. McKee , Yosra A. McKee(2003), "Edge Cities and the Viability of Metropolitan Economies: Contributions to Flexibility and External Linkages by New Urban Service Environments",https://doi.org/10.1111/1536-7150.00059
- Hemakumara, GPTS, & Rainis, Ruslan. (2015). Geo-statistical modeling to evaluate the socio-economic impacts of households in the context of low-lying areas conversion in Colombo metropolitan region-Sri Lanka.
- Hollow ,Matthew(2011).Suburban Ideals on England's Interwar council Estates",Retrieved 2012-12-29
- Rahel Nüssli ,Christian Schmid(2016),Beyond the Urban–Suburban Divide: Urbanization and the Production of the Urban in Zurich North, https://doi.org/10.1111/1468-2427.12390
- Locating the Suburb, Harvard Law Review, Vol. 117, No. 6 (Apr., 2004), pp. 2003-2022, The Harvard Law Review Association
- RongDu(2016),Urban growth: Changes, management, and problems in large cities of Southeast China,Frontiers of artichectual research ,vol.5,issue-3,p.229-300
- *Census of India* 2011 (provisional); R.P. Bhagat, 'Emerging Pattern of Urbanization in India', *Economic and Political Weekly* XLVI, 2011, p. 12.

- Priya Deshingkar and John Farrington (eds.), *Circulation, Migration and Multilocational Livelihood Strategies in Rural India*, Oxford University Press, Delhi, 2009, p. 15.


**ईकाई– 7**

## विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण
## Urbanization in Developed & Developing Countries

**इकाई की रुपरेखा**

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 विकसित समाज का अर्थ एवं परिभाषा

7.3 विकासशील समाज का अर्थ एवं परिभाषा

7.4 विकसित एवं विकासशील समाज की विशेषताएं

7.5 विकासशील समाज की प्रमुख समस्याएं

7.6 विकसित एवं विकासशील समाज में अंतर

7.7 विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण की प्रक्रिया

7.8 विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण से उत्पन्न समस्याएं

7.9 सारांश

7.10 बोध प्रश्न एवं लघु उत्तर प्रश्नावली

7.11 निबन्धानात्मक प्रश्न

7.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

## 7.0 उद्देश्य

इस ईकाई का मुख्य उद्देश्य है

- विकसित एंव विकासशील समाज की अवधारण को स्पष्ट करना ।
- विकासशील समाज के प्रमुख मापदण्ड तथा विशेषताओं की व्याख्या करना, विकासशील समाज की प्रमुख समस्याओं को स्पष्ट करना ।
- विकसित तथा विकासशील समाज में अंतर को स्पष्ट करना ।
- विकसित एवं विकाशील देशों में नगरीकरण की प्रक्रिया को स्पष्ट करना ।
- विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण की प्रक्रिया से उत्पन्न प्रमुख समस्याएं को स्पष्ट करना ।

## 7.1 प्रस्तावना

संपूर्ण विश्व के समाज प्रायः दो भागों में विभक्त रहते हैं। एक भाग में वे आधुनिक समाज आते हैं जहाँ विकास अपनी चरम सीमा में पहुँच जाता है, जिसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक तथा मानव संबंधी समस्त साधनों, पूंजी एवं प्रौद्योगिकीय साधनों का मानवीय विकास में अपना एक सर्वोच्च योगदान होता है। ऐसे अति व्यवस्थित तथा उच्च समाज को विकसित समाज कहा जाता है। दूसरे भाग में वे समाज आते हैं जो अभी पूर्ण विकास को प्राप्त नहीं हो पाते हैं तथा धीरे–धीरे विकास की ओर

उन्मुख होते हैं। अल्पविकसित समाज होने के कारण इन समाजों में निर्धनता, बेकारी, अशिक्षा तथा असुरक्षा जैसी कई समस्याएं व्याप्त होती हैं।

नगरीकरण की यदि बात करें तो विकसित एवं विकासशील समाज भी इस प्रक्रिया से अछूता नहीं रह गया है। इन दोनों ही समाजों में नगरीकरण की प्रक्रिया लगभग उन्नीसवी शताब्दी से प्रारंभ हो गई थी। किन्तु यह भी वास्तविकता है कि दोनों समाजों में नगरीकरण की प्रक्रिया समान रूप से विकसित हुई किंतु कई समानताएं होने के पश्चात् भी दोनों समाजों के नगरीकरण की प्रक्रिया में मौलिक अंतर पाए जाते हैं, यद्यपि दोनों समाजों में कई मौलिक असमानताएं होने के पश्चात् भी दोनों समाज एक ही तरह के नगरीकरण से उत्पन्न कई समस्याओं से जूझ रहा है, क्योंकि नगरीकरण की प्रक्रिया जहाँ एक ओर समाज को विकास की नई दिशा देता है वहीं दूसरी ओर कई अनगिनत समस्याओं को भी जन्म देता है।

## 7.2 विकसित समाज का अर्थ एवं परिभाषा

जिस समाज में औद्योगिकरण, नगरीकरण की प्रक्रिया तथा साक्षरता को अनुपात औसत से अधिक होता है। उस समाज को विकसित समाज कहा जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि विकसित समाज उन समाजों को कहा जाता है, जिसमें प्राकृतिक संसाधन प्रचुर मात्रा में औद्योगिकरण एवं प्रौद्योगीकरण का पर्याप्त उपयोग करके समाज को एक उच्चतर जीवनस्तर प्राप्त करने में अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करता है। प्रायः विकसित समाजों में औद्योगीकरण, आधुनिकीकरण तथा नगरीकरण तीव्र गति से होता है।

प्रमुख समाजशास्त्री विरेन्द्र सिंह का मानना है कि विकसित समाज को दो बड़े भागों में विभाजित किया जा सकता है। एक ओर वे विकसित समाज हैं, जिन्होंने विकास के लिए प्रजातांत्रिक मार्ग का अनुसरण किया है और प्रजातांत्रिक ढांचे के अंतर्गत अपने को विकसित किया है। इन श्रेणी में पश्चिमी यूरोप के देश, इग्लैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और आस्ट्रेलिया आदि आते हैं। इन सभी समाजों ने अपने यहाँ बड़ी सीमा तक स्वाधीन आर्थिक क्रिया और निजी अर्थव्यवस्था को स्थापित कर रखा है। इन समाजों में औद्योगिकरण, आधुनिकीकरण उपलब्धि– अभिविन्यास, सामाजिक गत्यात्मकता, राजनैतिक सामाजीकरण, सहभागिता एवं सहयोग का उच्च स्तर दिखाई पड़ता है। आर्थिक और भौतिक दृष्टिकोण से यह समाज समृद्ध एवं संपन्न समाज है। एरिक फ्राम के मतानुसार पूंजीवादी सभ्यता एवं समाज ने जहाँ एक ओर विकास का उच्चतर स्तर प्राप्त कर लिया है। वहीं दूसरी ओर मानवता के लिए मानसिक और भावनात्मक समस्याएं भी उत्पन्न कर दी हैं, जिनमें अलगाव की समस्या, मानसिक असंतोष भावनात्मक अस्थिरता, अर्थहीनता और आदर्शविहीनता की समस्या प्रमुख है। फ्राम ने लिखा है कि पश्चिमी पूंजीवादी समाजों में व्यक्ति ने

अपने व्यक्तित्व की वास्तविकता और मूर्तता को खो दिया है और जन समाज में उसकी स्थिति वैसी ही होकर रह गई है जैसे किसी बड़ी मशीन में एक छोटे पुर्जे की होती है।

## 7.3 विकासशील समाज की अवधारणा एवं परिभाषा

जैसा कि हम जानते हैं कि संपूर्ण विश्व प्रायः दो भागों में विभक्त होता है। विकसित तथा अल्पविकसित। अल्पविकसित समाजों को प्रायः निर्धन, पिछड़े, अविकसित तथा विकासशील देशों के नाम से जाना जाता है। मायर एवं बाल्डविन और बारबरा वार्ड ने प्रायः अल्पविकसित समाज को निर्धन कहा है, क्योंकि आपके मतानुसार अल्पविकसित शब्द अल्पविकास के बजाय निर्धन कहना ज्यादा उपयुक्त है, क्योंकि अल्पविकसित शब्द भी उपयुक्त नहीं है। क्योंकि पिछड़ा और आत्मगौरव को ठेस पहुँचाते हैं। प्रो0 गुन्नार मिर्डल ने इसी कारण एक अधिक गतिशील एवं व्यापक शब्द ''अल्पविकसित देशों के प्रयोग का समर्थन किया है। हमारी राय में यह अधिक उपयुक्त है क्योंकि यह शब्द विकास की दो चरम सीमाओं अविकसित और विकसित के मध्य में स्थित होने के कारण इन देशों को अगले छोर पर पहुँचने के लिए प्रेरित करता है।

**परिभाषायें**

1. जे0आर0हिक्स ने ''कन्ट्रीब्यूश[1]न टू दी थियरी ऑफ ट्रेड साइकिल्स में विकसशील समाज की व्याख्या करते हुए लिखा है कि ''एक विकासशील देश वह है, जिसमें प्राविधिक तथा मौद्रिक साधनों की मात्रा उत्पादन एवं बचत के वास्तविक स्तर के समान ही निम्न होती है। जिसका परिणाम यह होता है कि श्रमिक को पुरस्कार (वेतन) बहुत कम मिल पाता है।
2. प्रो0 सेम्युलसन ने आर्थिक आधान पर विकासशील समाज की व्याख्या की है। साधारणतया एक विकासशील राष्ट्र वह है, जिसकी प्रति व्यक्ति आय ऐसे राष्ट्रों जैसे कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, बिट्रेन, फ्रांस तथा पश्चिमी यूरोप के प्रति व्यक्ति आय की तुलना में कम हो। ऐसे राष्ट्रों के आय के स्तर में पर्याप्त सुधार करने की क्षमता होती है।
3. जैकब वाइनर ने विकासशील समाज के संदर्भ में लिखा है कि एक विकासशील राष्ट्र वह है जहाँ अधिक पूंजी अथवा श्रम अथवा अधिक उपलब्ध प्राकृतिक साधनों अथवा इन सभी का उचित उपयोग करने की संभावना हो, जिससे कि समाज अपनी जनसंख्या को ऊँचा जीवन स्तर प्रदान कर सके और यदि प्रति व्यक्ति आय पहले से ही अधिक है तो रहन–सहन के स्तर को कम किए बिना अधिक लोगों का भरण–पोषण किया जा सके।[5]
4. रेगनर नर्क्स ने लिखा है कि विकासशील समाज वो है जिसमें जनसंख्या और प्राकृतिक साधनों की तुलना में पूंजी कम होती है।

5. प्रमुख समाजशास्त्री विरेन्द्र सिंह ने विकासशील समाज को निम्नांकित रूप में परिभाषित किया है।
    1. विकसित राष्ट्रों की तुलना में प्रति व्यक्ति आय कम है।
    2. प्राकृतिक साधनों एवं मानवीय शक्ति का उचित उपयोग न हो।
    3. निर्धनता प्रत्यक्ष हो।
    4. धार्मिक विश्वासों एवं रूढ़ियों का प्रभाव अधिक हो।
    5. प्रत्येक पहलू में विकास की संभावनाएं दृष्टिगोचर हो।
    6. जनसाधारण का जीवन स्तर निम्न हो।[7]

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि विकासशील समाज ऐसे समाज को कहा जा सकता है जहाँ औद्योगिकरण की प्रक्रिया काफी धीमी हो तथा विकसित समाजों की अपेक्षा प्रति व्यक्ति आय निम्न हो, विकास के दृष्टिकोण से भी ये समाज बहुत पिछड़े हुए होते हैं तथा समाज में जीवन यापन कर रहे प्रत्येक व्यक्ति का जीवन स्तर निम्न होता है।

विकासशील समाज की परिभाषाएं :

**प्रो0 डब्ल्यू0 सिंगर** का मत है कि– अल्प–विकसित अर्थव्यवस्था को परिभाषित करने का कोई भी प्रयास, समय को बर्बाद करना है फिर भी किसी एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए यह आवश्यक होगा कि कुछ प्रचलित परिभाषाओं का अध्ययन कर लिया जाए।

संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O) की एक विज्ञप्ति के अनुसार– ''अल्प–विकसित देश वह है जिसकी प्रति व्यक्ति वास्तविक आय अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा पश्चिम यूरोपीय देशों की प्रति व्यक्ति वास्तविक आय की तुलना में कम है। प्रो0 सेम्युलसन (Samuelson) के विचार भी इस प्रकार के हैं।

प्रो0 मेकलियोड (A.N. Meleod) के मतानुसार– ''एक अल्प–विकसित देश अथवा क्षेत्र वह है, जिसमें उत्पत्ति के अन्य साधनों की तुलना में उद्यम एवं पूंजी का अपेक्षाकृत कम अनुपात है परंतु जहाँ विकास संभाव्यताएं विद्यमान हैं। अतिरिक्त पूंजी को लाभजनक कार्यों में विनियोजित किया जा सकता है।''

प्रो0 जे0 आर0 हिक्स (J.R. Hicks) के शब्दों में– ''एक अल्प–विकसित देश वह देश है जिसमें प्रौद्योगिकीय और मौद्रिक साधनों की मात्रा, उत्पादन एवं बचत की वास्तविक मात्रा की भांति कम होती है, जिसके फलस्वरूप प्रति–श्रमिक को औसत पुरस्कार उस राशि से बहुत कम मिलता है, जो प्राविधिक विकास की अवस्था में उसे प्राप्त हो पाता है।''

प्रो0 ऑस्कर लैंज (Oskar Lange) की दृष्टि में– ''एक अल्प–विकसित अर्थव्यवस्था वह अर्थव्यवस्था है जिसमें पूंजीगत वस्तुओं की उपलब्ध मात्रा देश की कुल श्रम–शक्ति को आधुनिक

तकनीक के आधार पर उपयोग करने के लिए पर्याप्त नहीं है।'' प्रो0 नर्कसे ने भी अल्पविकसित देश को इसी आधार पर परिभाषित किया है।

जैकब वाईनर (Jacob Viner) के अनुसार– ''अल्प–विकसित देश वह देश है जिसमें अधिक पूंजी अथवा अधिक श्रम–शक्ति अथवा अधिक उपलब्ध साधनों अथवा इन सबको उपयोग करने की पर्याप्त संभावनाएं हों जिससे कि वर्तमान जनसंख्या के रहन–सहन के स्तर को ऊँचा उठाया जा सके और यदि प्रति–व्यक्ति आय पहले से ही काफी अधिक है तो रहन–सहन के स्तर को कम किए बिना अधिक जनसंख्या का निर्वाह किया जा सके।''

यूजीन स्टाले (Eugene Steley) के विचारानुसार– ''अल्प विकसित देश वह देश है जहां जनसाधारण में दरिद्रता व्याप्त है जो (दरिद्रता) अत्यन्त स्थाई व पुरातन है जो किसी अस्थाई दुर्भाग्य का परिणाम नहीं है, बल्कि उत्पादन के घिसे–पिटे एवं परंपरागत तरीकों और अनुपयुक्त सामाजिक व्यवस्था के कारण है जिसका अभिप्राय यह है कि दरिद्रता केवल प्राकृतिक साधनों की कमी के कारण नहीं होती है और उसे अन्य देशों में श्रेष्ठता के आधार पर परखे तरीकों द्वारा संभवतः कम किया जा सकता है।

भारतीय योजना आयोग के अनुसार एक अल्पविकसित देश वह देश है जहां पर एक अप्रयुक्त मानवीय शक्ति और दूसरी ओर अवशोषित प्राकृति साधनों का कम या अधिक मात्रा में, सह–अस्तित्व पाया जाता है।''

सामान्यतः एक अल्प–विकसित देश वह है जहाँ जनसंख्या की वृद्धि की दर अपेक्षाकृत अधिक हो, पर्याप्त मात्रा में प्राकृतिक साधन उपलब्ध हो परंतु उनका पूर्णरूपेण विदोहन न हो पाने के कारण उत्पादकता व आय का स्तर नीचा हो। सरल शब्दों में, वह देश अल्प–विकसित देश माना जाएगा जिसका आर्थिक विकास संभव हो किंतु अपूर्ण हो।

## 7.4 विकसित एवं विकासशील समाज की विशेषताएं

**विकसित समाज की विशेषताएं**– विकसित समाज की विशेषताओं की निम्नांकित आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है।

1. औद्योगीकरण की तीव्र गति
2. नगरीकरण की तीव्र गति
3. साक्षरता की उच्च दर
4. प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि
5. धन का समान वितरण
6. प्रौद्योगिकीय विकास
7. संचार एवं यातायात की प्रचुर मात्रा

8. बैकिंग सुविधाएं
9. जीवन स्तर उच्च होना
10. आर्थिक विकास का स्तर उच्च होना
11. भौतिक सुख एवं समृद्धि का उच्च स्तर
12. स्वास्थ्य सेवाओं की पर्याप्त एवं प्रचुर उपलब्धियाँ
13. रोजगार के अवसरों की प्रचुरता
14. प्रजातांत्रिक संस्थाओं का सुदृढ़ होना
15. प्रत्याशाओं एवं सामान्यताओं के प्रति जनता का जागरूक होना
16. आधुनिक दृष्टिकोण
17. अंधविश्वास एवं रुढ़िवादिता का पूर्णरूप से अभाव
18. सामाजिक गतिशीलता एवं सामाजिक गत्यात्मकता में वृद्धि
19. राजनैतिक सुदृणीकरण
20. जीवन प्रत्याशाओं का उच्च स्तर

1. **विकासशील समाजों की विशेषताएं** :– विकासशील समाजों की विशेषताओं को निम्नांकित आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है।
   1. निम्न प्रति व्यक्ति आय या वास्तविक आय का कम होना।
   2. कृषि अर्थव्यवस्था अथवा कृषि की प्रधानता
   3. कृषि संबंधी सुविधाओं एवं साधनों का अभाव
   4. अल्प–शोषित प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता
   5. बैंक संबंधी सुविधाओं एवं साधनों का अभाव
   6. बेरोजगारी
   7. आय का असमान वितरण
   8. प्रौद्योगीकरण एवं नगरीकरण का अभाव
   9. औद्योगीकरण एवं नगरीकरण का अभाव
   10. जन्म और मृत्यु दर का उच्च होना
   11. जनसंख्या का आधिक्य
   12. साक्षरता का निम्न स्तर
   13. परंपरा, रीति–रिवाज, अंधविश्वास एवं धार्मिक विश्वासों की प्रधानता
   14. संचार एवं यातायात के साधनों का विकास न होना
   15. आधुनिक उत्पादन क्षमता एवं विधियों का अभाव
   16. प्रौद्योगिकरण एवं नवीन यंत्रों की जानकारी का अभाव

17. राजनैतिक अस्थिरता की स्थिति
18. सामाजिक एवं आर्थिक चेतना का आभाव
19. महिलाओं की निम्न स्थिति
20. आयात एवं नियति में असमानता
21. उत्पादन क्षमता में परंपरागत विधियों की प्रचुरता

## 4.5 विकासशील समाज की प्रमुख समस्याएं

विकासशील समाज की अनेकों समस्याएं हैं, जिसमें विकास संबंधी समस्याएं प्रमुख है। अनेक समाजशास्त्रियों ने विकासशील समाजों की समस्याओं को स्पष्ट करने का प्रयास किया है जो निम्नांकित हैं।

1. यूजीन स्टैली के अनुसार– आर्थिक एवं प्राकृति साधन संबंधी समस्याओं के अतिरिक्त कुछ सामाजिक समस्याओं की ओर यूजीन स्टैली ने संकेत किया है, इन समस्याओं ने विकासशील देशों ने विकास की प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। स्टैली ने जिन समस्याओं की ओर संकेत किया है उनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं–

   (क) पुरानी आदतें, विचार पद्धतियाँ एवं संस्थाएँ– स्टैली ने इस तथ्य की ओर संकेत किया है कि विचारशील देशों में विद्यमान पुरानी आदतें, विचार पद्धतियाँ और संस्थाएँ विकास में बाधक सिद्ध हो रही है। इसके परिणामस्वरूप एक और वैज्ञानिक, प्रत्यक्षवादी एवं तार्किक दृष्टिकोण का प्रसार नहीं हो पा रहा है जिसके कारण इन देशों ने अनेक प्रकार के अंधविश्वास तथा अतार्किक विचार प्रचलित हैं जिन्होंने इन देशों की जनसंख्या की इच्छा और क्रिया की क्षमता को दुर्बल करके उसमें एक प्रकार की निष्क्रियता उत्पन्न कर दी है। दूसरी ओर, इन देशों के जनसाधारण में परिवर्तन का भय भी उत्पन्न कर दिया है जिसके फलस्वरूप विकास में बाधा पड़ रही है। विकसित तथा विकासशील देशों के अंतर के लिए उत्तरदायी कारकों को स्टैली ने न तो जलवायु से संबंधित किया है और न ही प्रजाति से बल्कि इन कारकों को सामाजिक एवं सांस्कृति मानते हुए इनको आदत, विचार पद्धति एवं आचार से संबंधित किया है।

   (ख) अप्रभावशाली, अप्रशिक्षित, अयोग्य तथा भ्रष्ट प्रशासन– स्टैली ने गारनर के इस मत से सहमति प्रकट की है कि अप्रभावशाली, अप्रशिक्षित, अयोग्य तथा भ्रष्ट प्रशासन विकासशील देशों में प्रबल समस्याएं उत्पन्न कर रहा है। विकास प्रगतिवादी नीतियों के अनुसरण तथा विवेकपूर्ण योजनाओं के क्रियान्वयन पर आधारित होता है और यह कार्य अधिकांशतः प्रशासन पर निर्भर करता है। अगर प्रशासन अयोग्य और भ्रष्ट है तो तीव्र विकास सहानुभूति का अभाव (Lack of Sympathy), आचारिकतावाद

(Ritualism), संभ्रान्तवर्गवाद (Elitism), लालफीताशाही (Red Tapism), नैत्यवाद (Routinism), शासकीय आलस्य (Official lethargy) इत्यादि। कर्मचारीतंत्र के ये दोष विकास के प्रति न तो जागरूक हैं और न उत्तरदायी। प्रशासन का यह स्तर जनसाधारण से कटकर रह गया है और इस पर वास्तविक प्रजातांत्रिक नियंत्रण नहीं है। स्वयं सत्ताधारी वर्ग भी निहित स्वार्थों के कारण इस पर अंकुश लगाने पर असमर्थ रहा है।

(ग) उच्चतर भौतिक तथा सामाजिक प्रौद्योगिकी का अभाव– स्टैली ने विकासशील देशों में उच्चतर भौतिक तथा सामाजिक प्रौद्योगिकी के अभाव को विकास में एक बाधा बताया है। प्रौद्योगिकी की विज्ञान का व्यावहारिक तथा उपयोगी पक्ष माना जाता है। विकास की गति तभी तेज हो सकती है जब आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक आदि क्षेत्रों में उच्चतर अथवा विकसित प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाए। आर्थिक विकास के लिए उच्चतर भौतिक प्रौद्योगिकी की आवश्यकता होती है। भौतिक प्रौद्योगिकी से अभिप्राय कल–पुर्जों तथा यंत्रों आदि से है और सामाजिक प्रौद्योगिकी से अभिप्राय सामाजिक परिवर्तन व पुनर्निर्माण के लिए रची गई विधियों, उपायों और पद्धतियों से है। उच्चतर भौतिक प्रौद्योगिकी के उपयोग से उत्पादन क्षेत्र में ऊर्जा और समय की बचत होती है तथा उत्पादन की मात्रा में वृद्धि एवं स्तर में सुधार होता है। इसी प्रकार उच्चतर सामाजिक प्रौद्योगिकी के उपयोग से प्रकार्य विरोधी संस्थाओं, हानिकारक प्रथाओं तथा दूसरी सामाजिक बुराइयों को समाज से दूर करने में सहायता मिलती है। अगर किसी देश में उच्चतर भौतिक एवं सामाजिक प्रौद्योगिकी का अभाव है तो यह तत्व भी विकास में बाधक सिद्ध होता है।

(घ) विकास की प्रबल प्रेरणा और इच्छा का अभाव– किसी देश के नागरिकों में विकास की प्रबल प्रेरणा और इच्छा का विद्यमान होना विकास के लिए आवश्यक दशा का स्थान रखता है। जैसाकि इस कथन से स्पष्ट है कि जहाँ इच्छा होती है, वहाँ मार्ग भी निकल आता है। अगर किसी देश के जनसाधारण में स्वयं विकास की प्रेरणा और इच्छा है तो सरकार के द्वारा विकास के लिए कितने ही प्रयत्न क्यों न किए जाएं, तीव्र विकास नहीं हो सकता। अगर किसी देश के साधारण नागरिकों में अपनी दरिद्र एवं हीन दशा को बदलने और सुधारने की चेतना तथा इच्छा नहीं है, अगर उनकी प्रत्याशाओं का स्तर नीचा है, अगर वे परिवर्तन से डरते हैं और नवीनता से घबराते हैं, अगर उनकी प्रथाएं तथा परम्पराएं विकास विरोधी हैं, अगर उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विरोध की प्रवृत्ति पाई जाती है, तो ये सभी तत्व विकास में कठोर बांधा उत्पन्न कर सकते हैं। भारत में

विकास की मंदगति के लिए अन्य कारकों के साथ–साथ यह कारक भी बड़ी सीमा तक उत्तरदायी रहा है।

(ड़) सहयोग की क्षमता का अभाव– सामूहिक प्रयत्न और परिश्रम विकास के लिए आवश्यक परिस्थिति का स्थान रखते हैं और यह तभी संभव हो सकता है जब किसी समाज के सदस्यों में सहयोग एवं सहकारिता की भावना एवं क्षमता मौजूद हो। जिन समाजों में जाति, प्रजाति एवं वर्ग के आधार पर कठोर संस्तरण पाया जाता है, वहाँ विभिन्न सामाजिक श्रेणियों के बीच पूर्वाग्रह, पक्षपात, और सामाजिक दूरी भी तीव्रतर पाई जाती है। ये तत्व सहकारिता एवं सहयोग की क्षमता के विकास में बाधक सिद्ध होते हैं जिसके फलस्वरूप सामूहिक प्रयत्न एवं परिश्रम संभव नहीं हो पाता और विकास में बाधा पड़ती है। भारत में विद्यमान जाति व्यवस्था ने पिछले हजारों वर्षों से सहकारिता, सहयोग और सामूहिक परिश्रम को कठिन बनाए रखा है जिससे विकास की गति मंद रही है।

2. कीनलेसाइड के मतानुसार (According to Kenleyside)–

जी हैम्बिग (G. Hambidge) द्वारा संपादित पुस्तक "Dynamic of Development" में कीनलेसाइड ने अपने एक लेख में विकासशील समाजों में विद्यमान विकास संबंधी समस्याओं का विश्लेषण किया है। कीनलेसाइड ने निम्नलिखित बाधाओं की ओर संकेत किया है–

1. जलवायु (Climate)
2. बीमारी (Disease)
3. सीमित साधन (Limited Resources)
4. साम्राज्यवादी विरासत (Colonial Heritage)
5. अत्यधिक जनसंख्या (Excess Population)
6. प्रतिकूल सामाजिक परंपराएं (Adeverse Social Traditions)
7. एक प्रभावशाली मध्यवर्ग की अनुपस्थिति (Absence of an Effective Middle Class)
8. पूँजी की कमी (Lack of Capital)
9. कुशल श्रम का अभाव (Lack of Skilled Labour)
10. अक्षय प्रशासन (Incompetent Administration)

2. संयुक्त राष्ट्र संघ की समीक्षानुसार–

सन् 1959 में प्रकाशित समीक्षा(Review), जिल्द सं0 5 में "What is Economic Development" शीर्षक के अन्तर्गत संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O) द्वारा निम्नलिखित समस्याओं की ओर संकेत किया गया है–

1. अपर्याप्त कृषि उत्पादन।
2. अपर्याप्त आर्थिक संरचना तथा उत्पादन एवं वितरण संबंधी कारकों का अभाव।
3. जन प्रशासन में दोष एवं निर्बलता।
4. विकासशील देश की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के कारण सीमाबद्धता।
5. जनांककीय एवं सामाजिक समस्याएं।
6. बढ़ती हुई जनसंख्या की समस्या।
7. सामाजिक अभिवृत्तियाँ।

3. डी एस0 नाग के अनुसार–

नाग ने अपनी पुस्तक "Problem of Undeveloped Economy" में भारत के विशेष प्रसंग में विकास संबंधी सामाजिक समस्याओं पर प्रकाश डाला है। नाग ने जिन समस्याओं की ओर संकेत किया है, वे निम्नलिखित हैं–

1. कठोर धार्मिक अभिवृत्ति
2. जाति व्यवस्था
3. संयुक्त परिवार
4. प्राचीन संस्थाओं के प्रति रूढ़िवादी दृष्टिकोण।

5. गुन्नार मिर्डर के अनुसार–

गुन्नार मिर्डल ने अपनी पुस्तक में दक्षिण एशिया के देशों में विद्यमान विकास संबंधी बाधाओं एवं समस्याओं का विश्लेषण किया है। मिर्डल ने इस क्षेत्र, विशेषतया भारत में धर्म को विकास में सबसे बड़ी बाधा माना है। मिर्डल का मत है कि दक्षिणी, पूर्वी एशिया में धार्मिक अभिवृत्ति इतनी कठोर है कि इसने समाजिक परिवर्तन, आधुनिकीकरण एवं विकास में एक प्रतिकूल और नकारात्मक कारक का कार्य किया है। मिर्डल ने इस तथ्य की ओर संकेत किया है कि विश्व के इस क्षेत्र में जो परंपरागत और धर्म द्वारा स्वीकृत विश्वास प्रचलित हैं, वह सामान्यतया अतार्किक हैं। इसलिए इन विश्वासों ने न तो सामाजिक परिवर्तन को प्रोत्साहन दिया है और नही आधुनिकता संबधी आदर्शों एवं मूल्यों को प्रतिस्थापित होने दिया है। मिर्डाल ने लिखा है कि भारत में सामाजिक संस्तरण जो समाज की मूलभूत विशेषता है, के पीछे धार्मिक स्वीकृति रही है। इस संस्तरण ने एक ओर आर्थिक विषमता

को बढ़ावा दिया है और दूसरी ओर पंचवर्षीय योजनाओं के पर्याप्त क्रियान्वयन में समस्या करके विकास की गति को मंद कर दिया है।

विकासशील समाज की समस्याओं को मुख्य रूप से चार भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. आर्थिक समस्याएँ
2. सामाजिक समस्याएँ
3. राजनैतिक एवं प्रशासनिक समस्याएँ
4. अन्य–इसी के अंतर्गत अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को भी सम्मिलित किया जाता है

प्रस्तुत अध्ययन में हम इन समस्याओं का विस्तृत वर्णन करेंगे जिसमें विकासशील समाज जैसे भारत आदि देश विशेष रूप से त्रस्त हैं।

1. निर्धनता की समस्या
2. बेरोजगारी की समस्याएँ
3. भिक्षावृत्ति की समस्याएँ
4. जनसंख्या विस्फोट की समस्या
5. जातिवाद की समस्याएँ
6. साम्प्रदायिकता
7. लोक जीवन में भ्रष्टाचार
8. क्षेत्रवाद
9. कृषि और भूमि संबंधी समस्याएँ
10. रूढ़ियाँ तथा धार्मिक नियोजन
11. नियोजन के प्रति उदासीनता
12. श्रम समस्याएँ

जैसा कि उपरोक्त विवेचना के आधार पर स्पष्ट है कि अनेक समाजशास्त्रियों एवं विद्वानों ने विकासशील समाज की समस्याओं की स्पष्ट व्याख्या की है। संक्षेप में विकासशील समाजों की समस्याओं को निम्नांकित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है।

1. बेराजगारी की समस्या
2. निर्धनता या गरीबी की समस्या
3. जनसंख्या आधिक्य या जनसंख्या विस्फोट की समस्या
4. भिक्षावृत्ति का विकराल स्वरूप
5. कृषि योग्य भूमि की कमी
6. सांप्रदायिकता एवं जातिवाद की समस्याएं

7. वैचारिक स्वतंत्रता की कमी या अभाव
8. राजनैतिक तथा प्रशासनिक समस्याएं
9. जनता का विकास एवं नियोजन के प्रति उदासीनता
10. आय एवं श्रम का असमान वितरण
11. जीवन स्तर अथवा रहन–सहन का निम्न स्तर
12. शिक्षा के प्रचार–प्रसार की कमी
13. क्षेत्रवाद की समस्या
14. नियति की समस्या
15. नवीन अविष्कार के प्रयोगों के प्रति उदासीनता
16. रूढ़िवादी दृष्टिकोण
17. उच्च स्तरीय मशीनों, यंत्रों एवं प्रौद्योगिकी का अभाव
18. प्रशिक्षण एवं कुशल श्रम का अभाव
19. असमानतावादी दृष्टिकोण
20. हम की भावना का अभाव

## 7.6 विकसित एवं विकासशील समाज में अंतर

विकसित एवं विकासशील समाज के अंतर को पार्सन्स ने क्रिया संबंध सिद्धांत के अन्तर्गत निश्चित संरूप विकल्प के आधार पर विकसित किया है। पार्सन्स का मानना है कि किसी भ परिस्थिति में कर्ता के सामने दो विकल्प होते हैं, जिसमें से वह एक को स्वीकार करता है तथा दूसरे को अस्वीकार करता है। यदि कर्ता ऐसा निर्णय न करें तो वह लक्ष्य को नहीं प्राप्त करता है। वैसे ये विकल्प समाज विशेष की संस्कृति द्वारा स्वीकार अथवा अस्वीकार किए जाते हैं। प्रत्येक सांस्कृतिक व्यवस्था में ये विकल्प आदर्शमूलक पहलू से संबंधित होते हैं। संरूप विकल्प पार्सन्स के अनुसार पाँच प्रकार के होते हैं।

1. परिणाम पक्षीय अथवा तात्कालिक संतुष्टि संबंध
2. स्वहित अथवा सामूहिक हित संबंधी
3. सार्वभौमिक अथवा विशेष पक्षीय
4. गुणात्मक अथवा परिणाम पक्षीय
5. विशिष्ट पक्षीय अथवा व्यापक पक्षीय

हासलिट ने पार्सन्स का संदर्भ देते हुए लिखा है कि विकासशील समाजों में आर्थिक समानो तथा सामाजिक लक्ष्यों के निर्धारण में प्रदत्त संबंध व्यवहार अपनाया जाता है। लोग अर्जन संबंधी व्यवहार नहीं अपनाते यही कारण है कि विकासशील समाज में प्रदत्त प्रास्थिति की प्रधानता है। विकासशील

समाज में विशिष्ट पक्षीय संबंधी विशेषता पाई जाती है, जबकि विकसित समाज में सार्वभौमिक पक्ष प्रधान होता है। विकासशील समाजों में लोगों का आर्थिक कृत्य व्यापक पक्षीय होता है जबकि विकसित समाजों में विशिष्ट हुआ करता है।

एस0एच0 फ्रैकिल ने अपनी पुस्तक "The Economic Impact on Underdeveloped Countries" में स्पष्ट किया है कि विकासशील समाजों के जनसाधारण की इच्छाओं एवं प्रत्याशाओं पर विकसित देशों की आय तथा उपभाग के स्तर का उल्लेखनीय प्रभाव पड़ रहा है और विकासशील समाजों का जनसाधारण उसी जीवन स्तर की मनोकामना कर रहा है जो पाश्चात्य समाजों में प्राप्त किया जा चुका है। विकसित एवं विकासशील समाज में अंतर को निम्नांकित आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है।

1. विकसित समाज की अधिकांश जनसंख्या विभिन्न प्रकार के औद्योगिक कारखानों एवं उद्योग धंधों पर कार्यरत होते हैं जबकि विकासशील समाज में जनसंख्या का अधिकांश भाग कृषि कार्यों पर आधारित होते हैं।
2. विकसित समाज में जनसंख्या घनत्व कम पाया जाता है जबकि विकासशील समाज में जनसंख्या के घनत्व में असमानता पाई जाती है।
3. विकसित समाज में प्रति व्यक्ति आय अधिक होती है जबकि विकासशील समाज में प्रति व्यक्ति आय निम्न होती है या काफी कम होती है।
4. विकसित समाज में प्रति व्यक्ति आय की दर उच्च होने के कारण व्यक्ति के जीवन स्तर का ढंग प्रायः उच्च होता है, जबकि विकासशील समाज में प्रति व्यक्ति आय कम तथा असमान होने के कारण जनसंख्या का जीवन स्तर प्रायः निम्न पाया जाता है।
5. विकसित समाज में नियोजन की प्रक्रिया काफी तीव्र होती है, जिससे उत्पादन क्षमता में तीव्रता से बढ़ोत्तरी होती है जबकि विकासशील समाज में नियोजन की प्रक्रिया की गति धीमी होने की वजह से विकास की प्रक्रिया तथा उत्पादन क्षमता भी धीमी गति से होती है।
6. विकसित समाज में नित नए उपकरणों तथा नए अविष्कारों के कारण कृषि में उत्पादन क्षमता में निरंतर वृद्धि होती रहती है जबकि विकासशील समाजों में परंपरागत कृषि शैली के कारण उत्पादन क्षमता में वृद्धि नहीं हो पाती।
7. विकसित समाजों में सुदृढ़ शिक्षा व्यवस्था पाई जाती है जिससे इन समाजों में साक्षरता की उच्च दर पाई जाती है जबकि विकासशील समाज में शिक्षा व्यवस्था उचित न होने के कारण साक्षरता–दर का प्रतिशत भी काफी कम पाया जाता है।
8. विकसित समाज में उत्पादित वस्तुओं के आयात एवं नियति की प्रक्रिया उच्च होती है जबकि विकासशील समाजों में आयात–निर्यात की प्रक्रिया काफी निम्न होती है।

9. विकसित समाज में महिलाओं की प्रास्थिति काफी उच्च पाई जाती है। जबकि विकसशील समाज में परंपरागत जीवन शैली होने के कारण महिलाओं की प्रास्थिति निम्न पाई जाती है।

10. विकसित समाज में नियंत्रण के साधन कठोर एवं सुदृढ़ होने के कारण कानून को विशेष महत्व दिया जाता है जबकि विकासशील समाज में नियंत्रण के औपचारित साधन जैसे धर्म, परंपराएं तथा रीति–रिवाज का महत्व अधिक होने के कारण कानूनों की महत्ता प्रायः कम पाई जाती है।

11. विकसित समाज में कर्म को विशेष महत्व दिया जाता है। जिसके परिणामस्वरूप अर्जित प्रास्थिति का विशेष महत्व होता है जबकि विकासशील समाज में आज भी प्रदत्त प्रास्थिति का विशेष महत्व होता है।

12. विकसित समाज वास्तव में प्रौद्योगिकीय समाज माना जाता है जबकि विकासशील समाज में प्रौद्योगीकरण इसे अविकसित एवं अप्राप्त माना जाता है।

## 7.7 विकसित एवं विकासशील देश में नगरीकरण की प्रक्रिया

नगरीकरण का तात्पर्य नगर निर्माण एवं नगरों की वृद्धि की एक प्रक्रिया है। वास्तव में नगरीकरण को अगर सरल शब्दों में परिभाषित किया जाए तो ग्रामीण जनसंख्या का नगरीय क्षेत्रों में जाना तथा नगरीय विशेषताओं को धारण करना ही नगरीकरण है। थामसन वारन ने इस संबंध में कहा है कि ''यह ऐसे समुदायों के व्यक्तियों का जो प्रमुख रूप से या पूर्णरूप से कृषि से जुड़े हुए हैं। उन समुदायों में जाना है जो साधारणतया (आकार) में उनसे बड़े हैं और जिनकी गतिविधियाँ मुख्य रूप से सरकार, व्यापार उत्पादन या इनसे संबंद्ध कारोबारों पर केन्द्रित हैं।

इसी प्रकार एन्डरर्सन का मानना है कि नगरीकरण एक तरफा प्रक्रिया न होकर दुररफा प्रक्रिया है। इसमें केवल गाँवों से शहरों में जाना नहीं होता परंतु इसमें प्रवासी के दृष्टिकोणों, विश्वासों, मूल्यों और व्यवहारों के स्वरूपों में भी परिवर्तन होता है।

उन्होनें नगरीकरण की पाँच विशेषताओं का उल्लेख किया है।[17]

1. मुद्राअव्यवस्था
2. सरकारी प्रशासन
3. सांस्कृतिक परिवर्तन
4. लिखित अभिलेख
5. अभिनव परिवर्तन

नगरीकरण के परिणामस्वरूप भारतीय सामाजिक संस्थाओं का स्वरूप भी बदल रहा है। इसके कारण संस्थाएं अनौपचारिक स्वरूप धारण कर रही हैं। नगरीकरण की प्रक्रिया आधुनिकीकरण के लिए आवश्यक है। यही कारण है कि विकासशील देश आज आधुनिकीकरण की प्राप्ति के लिए नगरीकरण को प्रश्रय दे रहे हैं।

**नेल्सन एडरसन** का मानना है कि जीवन के मार्ग के रूप में शहरीपन केवल शहरों एवं कस्बों तक ही सीमित नहीं हैं। यद्यपि दूसरा विकास विशाल नगर केद्रों में भी होता है। यह व्यवहार का ढंग है। जिसका अर्थ है कि कोई भी अपने विचारों तथा आचरण से शहर बन सकता है। भले ही निवास एक गाँव में करता है। दूसरी ओर एक अत्यंत अशहरीकृति शक्ति शहर के एक अति नगरीकृत क्षेत्र में निवास कर सकता है।

प्रमुख समाजशास्त्री **विरेन्द्र सिंह** का मानना है कि विकासशील देशों (जैसे भारत आदि) की यह विशेषता है कि वहाँ कभी–कभी या तो तीव्र गति से अथवा धीमी गति से नगरीकरण की प्रक्रिया कार्य करती है, जिसके कारण समाज का एक पहलू प्रभावित होता है तो अन्य पूर्ववत बने रहते हैं। ऐसा भी अनुभव किया जाता है कि वह भाग जो परिवर्तित हो रहा था। स्थिर अवस्था में तब तक बना रहता है। जब तक कि अन्य भाग उसकी बराबरी में नहीं आ पाते। अविकसित राष्ट्र जहाँ नगरीकरण की प्रक्रिया को अब कार्यशील माना जाता है। उसकी तुलना पश्चिमी देशों में हो रहे नगरीकरण से की जाती है भारत वर्ष में नगरीकरण की प्रक्रिया के कारण केवल नगरों में जनसंख्या की वृद्धि हो। विशेष उल्लेखनीय नहीं है अपितु नए–नए स्थान भी नगरीय विशेषताओं को धारण कर लेते हैं। आज इस ब्रह्मांड में जो विश्वव्यापी नगरीकरण की प्रक्रिया कार्यशील है उसकी कई विशेषताएँ होनी चाहिए। संभवतः इन्हीं विशेषताओं की प्राप्ति के लिए विकासशील देश नगरीकरण की प्रक्रिया को अपना रहे हैं। दूसरी ओर विकासशील राष्ट्रों को विदित है कि इन विशेषताओं की प्राप्ति व पश्चिमी देशों की नगरीकरण के कारण ही संभव हो सकती है।

विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण की प्रक्रिया विकास की मौजूदा प्रवृत्तियों पर निर्भर करती है। किंतु यह भी वास्तविकता है कि विकसित देशों की तुलनात्मक रूप में विकासशील देशों की अपेक्षा विकास की प्रक्रिया कम है ऐसा माना जाता है कि नगरीकरण का स्तर विकसित और विकासशील देश में एक बहुत बड़ अंतर आय वृद्धि है। 1960 के दशक में 35 देशों में लगभग प्रति व्यक्ति आय 2 डालर प्रति दिन थी जबकि नगरीकरण 15% था जबकि 2010 के दशक में 254 देशों की आय लगभग समान ही थी। जबकि नगरीकरण की दर लगभग 30% थी। अतः स्पष्ट होता है कि राजस्व तो स्थित है परंतु नगरीकरण की प्रक्रिया में वृद्धि हो रही है।

विकासशील देशों के यदि बड़े नगरों को देखा जाए तो यहाँ की आबादी न्यूयार्क या पेरिस के बड़े नगरों के समान ही है किंतु आय के स्तर में काफी असमानता पाई जाती है, जिसका प्रमुख कारण ग्रामीण जनता का शहरी प्रवजन प्रमुख है। विकासशील देशों में वर्तमान समय में कई नगर तीव्र गति से विकास कर रहे हैं तथा उत्पाद का स्तर भी उच्च है, किंतु ग्रामीण प्रवजन इस विकास की दर में असमानता लाने में एक प्रमुख भूमिका का निर्वहन कर रहा है, क्योंकि नगरों में प्रवजन के पश्चात् इन ग्रामीण जनता का एक रूप समूह नहीं होता जो नगरीय जीवन में कई समस्याओं को जन्म देता है। 2006 से 2011 के पाँच सालों के आंकड़ों को यदि देखा जाए तो लगभग 20 लाख से अधिक ग्रामीण जनसंख्या नगरों की ओर प्रवजन करते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि नगरीकरण की प्रक्रिया ने विकसित एवं विकासशील दोनों समाजों को एक नए स्वरूप में ढालने का प्रयास किया है, जिसमें एक ओर विकास की दर एवं प्रति व्यक्ति आय को तो बढ़ावा मिला है। वही दूसरी ओर असमानताओं के बावजूद प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि हुई है।

## 7.8 विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण उत्पन्न प्रमुख समस्याएं

विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण की समस्या को निम्नांकित आधार पर समझा जा सकता है।

1. **मलिन बस्तियों में वृद्धि–** विकासशील देशों में प्रमुख समस्या उभर कर सामने आती है वह है प्रवजन के द्वारा जनसांख्यिकीय बदलावों का आाना ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवजन के दौरान प्रायः युवा पुरुष नगरों की ओर रोजगार के अवसरों की तलाश में आते हैं। नगरीय जीवन के सीमित साधन नए प्रवासियों का सामना प्रायः नहीं कर पाते जिससे आवास एवं सुख–सुविधाओं की कमी के कारण झुग्गी–झोपड़ियों एवं मलिन बस्तियों का तीव्रता से निर्माण होने लगता है जो कई नई समस्याओं को जन्म देती है। जैसे अपराध, आत्महत्या, नशाखोरी, ड्रग्स, मृत्यु दर और शिशु दर की अधिकता आदि।
2. **बेरोजगारी–** विकसित एवं विकासशील देशों की आर्थिक समस्याओं में बेरोजगारी एक प्रमुख समस्या मानी जाती है। इन दोनों क्षेत्रों में काम की अनियमितता तथा आय असमानता प्रमुख है। कई विकसित देशों को असुरक्षित आर्थिक वृद्धि से एक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, जिससे उद्योगों में विशेषकर पारंपरिक उद्योगों में भारी गिरावअ देखने को मिलती है। जिससे मंदी के दौर में कर्मचारियों की संख्या कम करने से कई बार बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न होने लगती है।
3. **पर्यावरणीय समस्या–** विकसित देशों में पर्यावरणीय समस्याएं विकासशील देशों की तुलना में सर्वाधिक पाई जाती हैं, अनेक उद्योग–धंधों, उच्च यंत्रों से सुसज्जित कारखानों, यातायात के साधन आदि से पर्यावरणीय प्रदूषण को सर्वाधिक बढ़ावा मिला है, जिससे स्वास्थ्य संबंधी कई प्रकार की समस्याओं का जन्म हुआ है। जिसे परिणामस्वरूप श्वसन, हृदय संबंधी बीमारियाँ तथा फेफड़े के कैंसर में तीव्रता से वृद्धि हुई है, अतः यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होती कि नगरीकरण की प्रक्रिया ने जल, वायु, ध्वनि तथा जलवायु प्रदूषण को बढ़ाने में एक प्रमुख भूमिका का निर्वहन किया है।
4. **पेयजल की समस्या–** नगरीकरण के कारण विकसित एवं विकासशील देशों में एक प्रमुख समस्या पीने के पानी की कमी है। कारखानों से निकलने वाले औद्योगिक अपशिष्ट को प्रायः नदी, नालों एवं समुद्र में विसर्जित कर दिया जाता है जिससे प्रायः नदी का जल दूषित हो जाता है। तत्पश्चात् वही जल आपूर्ति की जाती है। जो वर्तमान में कई देशों की जनता के स्वास्थ्य के लिए एक प्रमुख खतरा बन गया है।
5. **जलवायु परिवर्तन–** नगरीकरण तथा औद्योगीकरण ने विकसित एवं विकासशील दोनों देशों के जलवायु को परिवर्तित कर दिया है। औद्योगिक क्षेत्रों की वहुलता के कारण वायुमंडल का ताप अत्यधिक बढ़ गया है जो तीव्रता से बढ़ता जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुंचने वाली अधिकांश सौर ऊर्जा वनस्पति एवं मिट्टी के पानी को वाष्पीकरण कर देती है। शहरों में जहाँ कम वनस्पति और मिट्टी होती है अधिकांश सूर्य की ऊर्जा को इमारतों और डामर द्वारा अवशोषित कर लेती है। उच्च सतह के तापमान के लिए अग्रणी वाहन कारखानों और औद्योगिकरण और घरेलू ताप ओर कूलिंग इकाइयाँ भी अधिक गर्मी जारी करती हैं।
6. **खाद्य असुरक्षा–** जुलाई 2013 की संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक एवं सामाजिक मामलों की एक रिपोर्ट के अनुसार जलवायु एवं पर्यावरणीय परिवर्तन से 2050 तक 2.4 बिलियन से अधिक लोगों को खाद्य असुरक्षा का सामना करना पड़ सकता है। संयुक्त राष्ट्र के विशेषज्ञों के मुताबिक पर्यावरणीय परिस्थितियों में बदलाव और शहरी क्षेत्रों की बढ़ती आबादी का मिश्रण बुनियादी स्वच्छता प्रणालियों और स्वास्थ्य देखभाल पर रोग लगाएगा और संभवतः एक मानवीय और पर्यावरणीय आपदा पैदा करेगा।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि विकास एक ऐसे परिवर्तन को लक्षित करता है जो प्रगति की ओर सदैव उन्मुख होते हैं, किंतु यह भी सत्य है कि विकास किसी समाज में सकारात्मक भी हो सकता है और नकारात्मक भी। नगरीकरण की प्रक्रिया के संदर्भ में भी कहा जा सकता है कि चाहे विकसित देश हो या विकासशील देश दोनों ही समाजों में नगरीकरण ने जहाँ पर विकास के कई नवीन मार्गों को प्रशस्त करके समाज को एक नई दिशा प्रदान की है वही दूसरी ओर कई प्रकार की समस्याओं को भी जन्म दिया है।

## 7.9 सारांश

संपूर्ण विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि नगरीकरण की प्रक्रिया से समस्त विश्व अछूता नहीं है। चाहे वह विकसित समाज या देश हो या विकासशील समाज या देश। दोनों ही देश नगरीकरण की प्रक्रिया तथा विशेषताओं को अपना रहे हैं। वास्तव में नगरीकरण आर्थिक विकास से जुड़ी हुई एक प्रक्रिया है, जो उत्पादक क्षमता को बढ़ाकर उद्योगों एवं सेवाओं की हिस्सेदारी को भी बढ़ावा देता है, नगरीकरण की प्रक्रिया ने विकसित एवं विकासशील दोनों देशों में विकास की वृद्धि दर को तो तीव्र किया है किंतु कई समानताओं के बावजूद मौलिक अंतर को भी स्पष्ट किया है। जिससे प्रमुख रूप से प्रति व्यक्ति आय में असमानता, जीवन प्रत्याशाओं में मौलिक असमानता तथा समाज के प्रत्येक क्षेत्र में मौलिक असमानताएँ आदि प्रमुख हैं।

विकसित एवं विकासशील इन दोनों ही देशों में नगरीकरण की प्रक्रिया ने प्रगति, विकास एवं उन्नति की दिषा को उन्नत किया है वहीं दूसरी ओर कई प्रकार की समस्याओं को भी जन्म दिया है, जिसमें प्रमुख रूप से मलिन बस्तियों का निर्माण, वेतन असंगतियाँ, स्वास्थ्य से संबंधित कई गंभीर बीमारियाँ, बेराजगारी, अपराध, बाल अपराध, वेश्यावृत्ति, ड्रग्स, नशाखोरी, मद्यपान, पर्यायावरणीय प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, जल प्रदूषण तथा खाद्य असुरक्षा आदि प्रमुख हैं।

## 7.10 बोध प्रश्न एवं लघु प्रश्नावली

### 1. बोध प्रश्न

सत्य/असत्य

1. विकसित समाज में साक्षरता दर अधिक होती है– सत्य/असत्य
2. विकसित एवं विकासशील दोनों देशों में नगरीकरण की प्रक्रिया समान रूप से होती है– सत्य/असत्य
3. विकासशील देश में जनसंख्या को आधिक्य होता है– सत्य/असत्य
4. विकासशील समाज में रोजगार के अवसरों की प्रचुरता होती है– सत्य/असत्य
5. विकसित समाज में प्रत्याशाओं का उच्च स्तर होता है– सत्य/असत्य

**उत्तर**

**1. सत्य, 2. सत्य 3. सत्य, 4. असत्य, 5. सत्य।**

### लघु प्रश्नावली

1. विसित समाज किसे कहते हैं।
2. विकासशील समाज किसे कहते हैं।
3. विकासशील समाज की परिभाषाएं लिखिए।
4. विकसित एवं विकासशील समाज में अंतर।

5. एन्डरर्सन द्वारा लिखित नगरीकरण की पाँच विशेषताओं का उल्लेख करिए।
6. विकसित एवं विकासशील समाज की विशेषताए।

## 7.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. विकसित एवं विकासशील समाज को परिभाषित कीजिए?
2. विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण की प्रक्रिया?
3. विकसित एवं विकासशील देशों में नगरीकरण से उत्पन्न समस्याओं का सविस्तार उल्लेख कीजिए?
4. विकासशील समाज की प्रमुख समस्याओं को अलग–अलग समाजशास्त्रियों के विचारों के अनुसार परिभाषित कीजिए?
5. विकसित समाजों में नगरीकरण की प्रक्रिया का उल्लेख करिए?

ईकाई– **8**

# पूर्व औद्योगिक, औद्योगिक, उत्तर औद्योगिक एवं औपनिवेशिक नगर
# (PRE-INDUSTRIAL, INDUSTRIAL, POST-INDUSTRIAL AND COLONIAL CITY)

इकाई की रुपरेखा

8.0 उद्देश्य
8.1 प्रस्तावना
8.2 पूर्व औद्योगिक नगरीय वर्गीकरण
    8.2.1 पारिस्थितिकीय व्यवस्था
    8.2.2 राजनीतिक व्यवस्था
    8.2.3 अर्थव्यवस्था का ढांचा
    8.2.4 निष्कर्ष
8.3 औद्योगिक नगर
    8.3.1 कार्य के तरीके
    8.3.2 गतिशीलता एवं भंगुरता
    8.3.3 अवैयक्तिक सामाजिक संवाद
    8.3.4 समय एवं गति का दबाव
    8.3.5 पारिवारिक जीवन एवं व्यक्ति
    8.3.6 मानवनिर्मित शहरी पर्यावरण
    8.3.7 उद्योगवाद का अर्थ
    8.3.8 औद्योगिक नगरों की विशेषताएं
    8.3.9 निष्कर्ष
8.4 उत्तर औद्योगिक नगर
8.5 औपनिवेशिक नगर
8.6 नव औपनिवेशिक नगर
8.7 अभ्यास प्रश्न
8.8 संदर्भ ग्रन्थ

## 8.0 उद्देश्य (Objectives)

यह अध्ययन आपको पूर्व औद्योगिक नगर (Pre-industrial City), औद्योगिक नगर (Industrial City), उत्तर औद्योगिक नगर (Post-industrial ) औपनिवेशिक नगर (Colonial City) अर्थ और अंतर समझने में सहायता करेगा।

## 8.1 प्रस्तावना (Introduction)

शहरों की सामाजिक संरचना को समझने के लिए हमें नगरीय स्वरूपों के विकास, पूर्व औद्योगिक नगरों में समय के साथ आए बदलावों पर नजर डालना आवश्यक होता है। इसके बाद हम यूरोप में नगरीकरण की ओर बढ़ते हैं और औद्योगिक क्रांति का मूल्यांकन कर पाते हैं। औद्योगिक क्रांति के कारण ही औद्योगिक नगरों का विकास हुआ है। औद्योगिक नगर सामाजिक संरचनाओं में भी बदलाव लाते हैं। उदाहरण के लिए श्रम का वर्गीकरण, सामाजिक स्तरों का विभाजन, संस्कृति आदि। पूर्व औद्योगिक एवं औद्योगिक क्षेत्रों में परिवर्तन का विस्तार नये शहरी केंद्रों की तरफ होना लोगों के अनुभवों, जीवनशैली और परिस्थितियों में बदलाव के लिहाज से निस्संदेह क्रांतिकारी था। यह इकाई आपको उत्तर औद्योगिक और औपनिवेशिक नगरों के बारे में भी जानकारी उपलब्ध करा सकेगा। उत्तर औद्योगिक नगर शहरीकरण के मौजूदा पैटर्न से संबद्ध हैं। वर्तमान में शहरीकरण का सर्वाधिक विकास दक्षिणी गोलार्द्ध के निर्धन देशों में और भारत व चीन जैसी उभरती वैश्विक शक्तियों में नजर आता है। अध्याय के अंत में हम औपनिवेशिक नगरों पर भी चर्चा करेंगे। इसके अंतर्गत शहरीकरण की प्रक्रिया पर उपनिवेश काल के प्रभाव को भी समझेंगे।

## 8.2 पूर्व औद्योगिक नगरीय वर्गीकरण (The Pre-Industrial City Typology)

गिडियन होबर्ग ने शहरों का वर्गीकरण किया है, जिसमें पूर्व औद्योगिक नगरों को एक प्रकार बताया गया है। वह किसी नगर में औद्योगीकरण के बाद आए बदलावों से पूर्व की विशेषताओं का उल्लेख करते हैं। होबर्ग स्पष्ट करते हैं कि दुनियाभर के वे नगर जो पूर्व औद्योगिक दायरे में आते हैं, एकसमान विशेषता और कारकों वाले होते हैं। इनमें सर्वप्रथम है तकनीक का मनुष्य और पशुओं पर आधारित होना। दूसरा, अवैयक्तिकता का नहीं होना और जन्मजात पहचान की सामाजिक व्यवस्था। तीसरी पहचान यह थी कि इन शहरों में शासक अभिजात्य वर्ग और शेष आबादी के बीच विभाजन स्पष्ट नजर में आता है। होबर्ग पूर्व औद्योगिक नगरों की अलग तरीके से तस्वीर पेश करते हैं। वह बताते हैं कि ये नगर प्राथमिक तौर पर राजकीय और धार्मिक केंद्रों के तौर पर पहचान रखते थे, व्यापारिक गतिविधियां इसके बाद आती थीं। कार्यों में विशेषज्ञता बेहद सीमित थी और वस्तुओं का उत्पादन पशुओं एवं मनुष्यों की शक्ति ( Animat) पर निर्भर करता था। श्रम का विभाजन बेहद सीमित होता है और दस्तकार उत्पादन के हर चरण में स्थान रखते थे। कार्यों का निष्पादन पारंपरिक तरीकों से ही करने की अवधारणा मजबूत थी, जबकि सामाजिक व्यवस्था आविष्कारों को बढ़ावा देने की पक्षधर नहीं थी। उपलब्धियों के बजाय जन्मजात गुणों को महत्व दिया जाता था, इसके तहत किसी व्यक्ति के लिए वही कार्य निहित था, जिस कर्म को करने वाले परिवार में उसका जन्म हुआ हो। इससे कोई व्यक्ति नगर के विशेष निर्धारित हिस्से में ही अपना काम और जीवनयापन करता था और ऐसा कम ही देखा जाता था कि कोई व्यक्ति सामाजिक नियंत्रण के इस दायरे से बाहर निकलता हो। लोग एक दूसरे से भलीभांति परिचित होते थे और मजबूत सगोत्रीय, सजातीय नियंत्रण से बंधे रहते थे। परिणामतः सार्वभौमिकता के स्थान पर स्थानीयता या व्यक्ति को अधिक महत्व दिया जाता था। पूर्व औद्योगिक नगरों में न्याय भी इस पर निर्भर नहीं करता था कि किसी ने क्या किया है,

बल्कि इससे तय होता था कि उसकी पहचान, परिवार क्या है। संक्षेप में पूर्व औद्योगिक नगरों में जन्मजात महत्व को उपलब्धियों पर और व्यक्तित्व या स्थानीयता को वैश्विकवाद पर अधिक महत्व दिया जाता था। वर्ग और जातीय व्यवस्था लचीली नहीं थी, जबकि शिक्षा अमीरों का विशेषाधिकार थी।

### 8.2.1 पारिस्थितिकी व्यवस्था (Ecological Organization)

होबर्ग बताते हैं कि पूर्व औद्योगिक नगरों का अस्तित्व भोजन एवं अन्य कच्चे माल पर निर्भर था, जिसके लिए वहां छोटे बाजार थे। उन्होंने पाया कि सभी पूर्व औद्योगिक नगरों में पारंपरिक समूहों और पृथक्कृत समूहों के बीच कड़ा विभाजन था। कई जगह तो ऐसे समूहों को चहारदीवारी के बाहर या गेटों पर ताले लगाकर रखा जाता था, ताकि वे पारंपरिक समाज तक न पहुंच सकें। औपनिवेशिक नगरों में भी साथ रहने वाले अलग–अलग समूहों के बीच परस्पर घृणा–द्वेष रहता था। व्यवसाय उस परंपरा का परिणाम था, जिसमें जन्म के आधार पर ही व्यक्ति का कर्म तय कर लिया जाता था। सामाजिक वर्गीकृत ढांचे और मान्यताओं के कारण इन नगरों में पारिस्थितिकी विभाजन के विभिन्न पहलू सामने आते हैं। इस वजह से समाज में मुख्यतः दो श्रेणियां उभरती हैं, पहली शिक्षित अभिजात्य वर्ग जो सभी मुख्य शक्तियों पर अधिकार रखते हैं और दूसरा अशिक्षित आबादी। पूर्व औद्योगिक नगरों में मध्यमवर्ग की कोई अवधारणा नहीं थी, क्योंकि उस दौर में ऐसे कोई पद, कार्य थे ही नहीं, जिनमें यह वर्ग आगे बढ़ पाता। इन नगरों में लोगों को मालूम था कि उनका स्थान, पहचान क्या है और वे उसी हिसाब से जीवन जीते थे। होबर्ग बताते हैं कि वंश परंपरा में संबंध आयु और लिंग के आधार पर तय किए जाते थे। कम उम्र के बच्चे, किशोर–युवा माता–पिता और अन्य वयस्कों से संबद्ध रहते थे। शक्ति और आयु का महत्व जातीय व्यवस्था से भी जुड़ा था, क्योंकि अधिकतर मामलों में देखा जाता था कि किसी परिवार–वंश में अधिकार पिता से पुत्र को –विशेषतः सबसे बड़े पुत्र को– हस्तांतरित होते थे। महिलाओं की भूमिका सहायक के तौर पर ही थी, वे पहले पिता और बाद में पति के साथ इसका निर्वहन किया करती थीं।

### 8.2.2 राजनीतिक व्यवस्था (Political Organization)

पूर्व औद्योगिक नगरों में परंपरागत रूप से समान कर्म वाले लोगों –उदाहरण के लिए बुनकर, लोहार आदि शिल्पी– के संघों और वित्तीय संस्थाओं का राजनीतिक असर रहता था। होबर्ग पाते हैं कि भिखारी और चोर भी सामूहिक रूप से व्यवस्थित रहा करते थे। इन समूहों का मूल्यों के निर्धारण, किसी व्यवसाय पर आधिपत्य रखने का एकाधिकार सा चलता था। ऐतिहासिक रूप से इन समूहों (Guilds) को आधुनिक राजनीतिक दलों का पूर्ववर्ती स्वरूप माना जा सकता है। पूर्व औद्योगिक नगरों में ये समूह ऐसे कार्यों से भी जुड़े रहते थे, जो वित्तीय गतिविधियों से संबद्ध न हों। उदाहरण के लिए उनके अपने पैतृक, पारंपरिक संत, देव हुआ करते थे जिनके लिए वे धार्मिक पर्वों का आयोजन करते थे।

### 8.2.3 अर्थव्यवस्था का ढांचा (The Economic Organization)

पूर्व औद्योगिक नगर सामाजिक व्यवस्था के परिणामस्वरूप विकसित होते थे, जिनें न तो तकनीक का समावेश था, न ही आर्थिक उत्पादन बढ़ाने के कोई मानक। लोगों और सामान के परिवहन का साधन या तो पैदल ही चलना था या फिर घोड़ागाड़ी और इसी तरह के अन्य साधन। शासकों, धर्म और जाति के नियमों का पालन करना सबका दायित्व सा था। नगर दरअसल, राजनीतिक, प्रशासकीय और धार्मिक केंद्रों

के तौर पर किलों के रूप में विकसित हुए थे। बाजार और हस्तशिल्प ही व्यापार एवं उद्योग के परिचायक थे। होबर्ग बताते हैं कि पूर्व औद्योगिक नगरों की संरचना कुछ ऐसी थीः

1. नगर का केंद्रीय इलाका सार्वजनिक भवन या धार्मिक केंद्रों के लिए उपलब्ध कराया जाता था। मुख्य बाजार भी यहां होता था, लेकिन उसका स्थान शहर के केंद्र या ऐसी जगह नहीं था, जिसे भूभाग के लिहाज से बेहतर माना जा सके।
2. नगर पारंपरिक और जातीय समूहों के आधार पर कार्य के लिहाज से विभाजित था। अधिकतर व्यापारी और हस्तशिल्पी अपने घरों में रहकर ही काम किया करते थे।
3. पूर्व औद्योगिक नगरों में भूउपयोग को अधिक महत्व नहीं दिया जाता था। इसके चलते वित्तीय, शिल्प और आवासीय सुविधाएं जहां–तहां अवस्थित थीं।

**बॉक्स 1: होबर्ग के अनुसार पूर्व औद्योगिक नगरों के गुण**

**1. शक्ति का निर्जीव आधार 2. दासों, श्रमिकों पर निर्भरता 3. नगरों की कम आबादी 4. कुल जनसंख्या के हिसाब से नगरों का बहद छोटा अनुपात 5. नगरों का चहारदीवारी के भीतर होना 6. नगरों में आंतरिक दीवारों का निर्माण 7. अभिजात्य जागीरदारों का आधिपत्य 8. अभिजात्यों की जीवनशैली में अंतर 9. अभिजात्य वर्ग में दखलंदाजी नहीं कर पाने की व्यवस्था 9. अभिजात्यों के बेहद बड़े घर और भूखंड 10. अभिजात्य वर्ग सुविधाभोगी था और उद्योग, वित्त से अधिक संबंधित नहीं रहता था 11. अभिजात्य वर्ग की महिलाएं कामकाज से दूर रहती थीं, सुस्त–आलसी थीं 12. शिक्षा अभिजात्य वर्ग तक ही सीमि थी 13. व्यापारी वर्ग को अभिजात्य से अलग रखा जाता था 14. व्यापारियों को विदेशी माना जाता था और उन पर विधर्मी विचारों को बढ़ाने का संदेह किया जाता था 15. सफल व्यापारी अपने धन का उपयोग अभिजात्य पहचान हासिल करने में करते थे 16. नगर की तीन श्रेणियां थीं 17. समाज का एक मुख्य शासक था 17. ठोस जातीय ढांचा 18. कपड़े पहनने, बातचीत का तरीका और अन्य व्यवहार वर्गीकरण के हिसाब से तय होते थे 19. शिल्पियों और व्यापारियों के संघों की मौजूदगी 20. समय का निर्धारण अनियमित था 21. विश्वास करने, श्रेय देने की व्यवस्था नहीं थी 22. केंद्र से दूर आवासीय व्यवस्था घटती जाती थी 23. अभिजात्य वर्ग नगर के केंद्र पर अधिकार रखते थे 24. नगर के केंद्रों को विशेष प्रतीकों से पहचाना जा सकता था 25. बहिष्कृत समाज शहर से बाहर, जबकि पारंपरिक केंद्र के भीतर रहता था 26. काम के आधार पर आवासीय क्षेत्रों का निर्धारण 27. भू उपयोग के विशेषज्ञ वर्गीकरण का अभाव**

**स्रोतः होबर्ग (1960), रेडफोर्ड (1979)**

()

❖ Existence of an outcast group City centre has symbolic sites ❖ Outcasts are located on the urban periphery ❖ Part-time farmers on the periphery ❖ Ethnic quarters within the city ❖ Residential areas are differentiated by occupation ❖ Lack of functional specialization of land use ❖ Lack of functional specialization of land use

## 8.2.4 निष्कर्ष (Conclusion)

पश्चिमी और अन्य देशों के पूर्व औद्योगिक पुराने और नये नगरों के अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि इन नगरों में सामाजिक विभाजन, परिवार–जातीय संबंध, राजनीतिक व्यवस्थाओं, धर्म, शिक्षा–संचार का अलग गुणात्मक सिस्टम था। व्यक्तिगत और वित्तीय गतिविधियों को इन नगरों में कम महत्व दिया जाता था, इसके चलते

उत्पादन संबंधी क्रियाकलापों को सामाजिक स्तर पर बेहद कम ही प्रोत्साहन मिलता था। धार्मिक और राजनीतिक गतिविधियों को नियंत्रित करने वाले अभिजात्य वर्ग के लिए वित्तीय कार्यों से जुड़ना सीमाओं से बाहर जाने जैसा माना जाता था। धार्मिक और राजनीतिक व्यवस्था परंपराओं, रीतियों के संरक्षण को समर्पित थी। राजनीतिक व्यवहार वंश–पद के अनुक्रम में चलता था और परिवार व सामाजिक स्थिति के आधार पर तय होता था। जादू–टोना जैसे विश्वासों पर आधारित धार्मिक मान्यताओं की आम जीवन में गहरी पैठ थी। संक्षेप में, पूर्व औद्योगिक सामाजिक व्यवस्था दृढ़, परंपराबद्ध और वित्तीय उत्पादन कार्यों से विलग थी। यद्यपि पूर्व औद्योगिक नगरों में वैश्विक व्यवस्था का अभाव था, फिर भी इनके स्वतंत्र इकाइयों के रूप में पहचान थी। ऐसे नगरों का एक–दूसरे से सामीप्य होने के बावजूद सामाजिक संवाद की स्थिति अधिक बेहतर नहीं थी। पूरा नगर विविधतापूर्ण भले ही हो सकता था, लेकिन इसमें रहने वाले समूहों के बीच सामाजिक संवाद और संपर्क का सर्वथा अभाव था।

## 8.3 औद्योगिक नगर (The Industrial Cities)

किसी नगर की नगर के तौर पर पहचान की वजह सिर्फ साथ रहने वाली आबादी की विविधता से ही नहीं होती, बल्कि काम के अधिक मौके और विभिन्न तरह के कार्यों की उपलब्धता भी इसका बड़ा कारक है। जनसंख्या घनत्व किसी नगर को नहीं बनाता है, बल्कि जनसंख्या का अर्थपूर्ण ढांचे में व्यवस्थित होना नगर का परिचायक है (Anderson, N. 1964 : pp.134)। नगर के गुणों को हम निम्नवत समझेंगेः

### 8.3.1 कार्य के तरीके (Ways of Work)

नगरों में कार्य का सीधा अर्थ औद्योगिक कार्यों से लगाया जाता है, लेकिन यह सिर्फ फैक्ट्री के कार्यों से ही संबंधित नहीं होता। वित्त, परिवहन, यातायात, संचार और कई अन्य सेवाएं भी इसमें शामिल होती हैं। मुख्यतः खेती से इतर सभी कार्य नगरीय कार्यों के विभिन्न प्रकारों में शामिल किए जा सकते हैं। इन नगरों में स्थित कार्यक्षेत्रों में काम करने वालों की क्षमता में बढ़ावे के लिए मशीनों के उपयोग और तकनीकी तरीकों के इस्तेमाल की अवधारणा है।

### 8.3.2 गतिशीलता एवं भंगुरता (Mobility and Transiency)

नगरों में लोगों का आना–जाना लगातार बना रहता है। इसके अलावा एक शहर से दूसरे शहर के बीच भी लोगों के आने–जाने का सिलसिला रहता है। इस आवागमन की बड़ी वजह लोगों में धन, शक्ति और रचनात्मकता के बेहतर अवसर तलाश करने की उम्मीद होती है। लोगों की यह गतिशीलता नगरों के अधिक से अधिक औद्योगिक होने की वजह बनती हैं, जबकि नगरों का औद्योगीकरण भी शहरों के बीच गतिशीलता को बढ़ावा देता है। इसके अलावा एक ही नगर में गतिशीलता का एक उदाहरण लोगों को बेहतरी की आस में अपनी नौकरी में बदलाव करना है। इस तरह की गतिशीलता व्यावसायिक गतिशीलता कहलाती है। यह गतिशीलता किसी व्यक्ति के निचले पद से उच्च पद पर शिफ्ट होने के तौर पर भी सामने आती है।

### 8.3.3 अवैयक्तिक सामाजिक संवाद (Impersonal Social Interaction)

नगरों में सामाजिक संवाद प्रायः अवैयक्तिक होता है। नगरीय जीवन में गुप्त रहने या अपरिचित होने का तत्व शामिल होता है। फिर भी नगरों में पारिवारिक सदस्यों, दोस्तों और पड़ोसियों के बीच सामूहिक संवाद की स्थिति उपलब्ध होती है। सहयोग की भावना के पैटर्न में समुदाय की व्यवस्था यहां कम दिखती है, लेकिन इस तरह की नयी व्यवस्थाओं को नेटवर्क के तौर पर जाना जाता है। इससे बड़े–संयुक्त परिवारों, पड़ोसियों की पुरानी व्यवस्था जरूर कम होती है, लेकिन मित्रता का नेटवर्क बना रहता है।

### 8.3.4 समय एवं गति का दबाव (Time and Tempo Compulsions)

औद्योगिक कार्यों की प्रकृति के कारण शहरी समाज का जीवन समयबद्ध हो जाता है। नियमितता और पाबंदी को लेकर शहरी लोगों को कई व्यवस्थागत नियमों का पालन करना अनिवार्य हो जाता है। दूसरी ओर, ग्रामीण जीवन प्राकृतिक चक्र पर निर्भर करता है, लेकिन शहरी जीवन घड़ी की सुइयों पर चलता है। उदाहरण के लिए उद्योगों में काम करने वाले लोगों के कार्य के घंटे तय होते हैं, इसी तरह परिवहन का समय तय होता है आदि।

### 8.3.5 पारिवारिक जीवन एवं व्यक्ति (Family Living and the Individual)

पारंपरिक रूप से परिवार उत्पादन और उपभोग (Production and Consumption) की इकाई है। इस इकाई में (मुख्यतः संयुक्त परिवारों में) किसी व्यक्ति की स्थिति (Status) परिवार में उसकी सदस्यता से तय होती है। औद्योगिक नगरों में संयुक्त परिवारों की व्यवस्था धीरे–धीरे ढह जाती है और एकल परिवार उभरते हैं। इसके चलते परिवार अपने कुछ पुराने कार्यों से दूर हो जाती है, जिसका असर शैक्षिक और वित्तीय स्थिति पर नजर आता है। ऐसे नगरों में प्ले स्कूल, क्रैश, डे–केयर सेंटर जैसे संस्थान संयुक्त परिवारों में निभाई जाने वाली भूमिकाओं का निर्वहन करते नजर आते हैं।

### 8.3.6 मानवनिर्मित शहरी पर्यावरण (The Man-Made Urban Environment)

शहरी पर्यावरण यांत्रिक (Mechanical) और मानवनिर्मित होता है। नगरों को अप्राकृतिक माना जाता है, क्योंकि यहां रास्ते, बाग–बगीचे, गलियां आदि जीवनोपयोगी साधनों का निर्माण और रचना मानव द्वारा ही की जाती है। पेयजल लाइनों, सीवर, बिजली सप्लाई, गैस पाइपलाइन आदि कार्यों के चलते नगरों में जनसुविधाएं जुटाने के लिए पर्यावरण में कई परिवर्तन किए जाते हैं। उदाहरण के लिए नगरों में परिवहन सुविधा भूमि पर उपलब्ध होने के अलावा भूमिगत और जमीन से ऊपर भी उपलब्ध होती है। गलियों में लोगों के सुविधाजनक तरीके से आने–जाने के लिए बिजली से रोशनी की व्यवस्था होती है, जबकि फोन लाइनें पुराने किसी भी तरीके से बेहतर संचार सुविधा मुहैया कराती हैं।

### 8.3.7 उद्योगवाद का अर्थ (Meaning of Industrialism)

उद्योगवाद का संबंध उन कार्यों से है जो किसी शहर में संपन्न किए जाते हैं। मानवीय हाथों से किया जाने वाला श्रम मशीनों की ओर स्थानांतरित हो जाता है। समय के साथ ये मशीनें भी और अधिक आधुनिक व

दक्ष मशीनों से बदल ली जाती हैं। कार्यशैली को बेहतर बनाने के लिए रचनात्मक तरीकों का विकास किया जाता है। उद्योगों में अकुशल श्रम (Unskilled Labour) धीरे–धीरे समाप्त होता जाता है।

### 8.3.8 औद्योगिक शहरों की विशेषताएं (**The Features of an Industrial City**)

1. शहरों में बाजार की नयी भूमिका उभरी है। नगरों में एक ही तरह के सामान एक बाजार में बेचने की बाध्यता नहीं है, बल्कि यहां हर वस्तु और हर सेवा के लिए स्पेशल मार्केट विकसित होते हैं। इन बाजारों में ग्राहक स्वयं आ सकते हैं या अपनी जरूरत का सामान उपलब्ध कराने के लिए ऑर्डर बुक करा सकते हैं। नगर कई विशेष सेवाओं का भी बाजार उपलब्ध कराता है, उदाहरण के लिए प्रकाशन, वित्त–बीमा, मशीनरी और उपकरणों के विक्रय केंद्र आदि। ये सभी सेवाएं एक–दूसरे से अलग होती हैं, लेकिन एक–दूसरे से संबद्ध भी रहती हैं।
2. औद्योगीकरण के बढ़ावे से नगरों में परस्पर निर्भरता बढ़ जाती है, लेकिन इसके साथ ही परस्पर प्रतिद्वंद्विता का भाव भी उभरता है। बड़े शहरों और छोटे शहरों में कई सेवाओं–कार्यों को लेकर जुड़ाव बना रहता है।
3. नगरों में रहने वाले लोग सामान्यतः औद्योगिक कार्यों से ही संबद्ध रहते हैं। यहां कार्य विशेष हो जाते हैं, जिसके चलते कार्य को संपन्न करने के लिए विशेषज्ञता अनिवार्यता बन जाती है। ऐसे में किसी व्यक्ति का महत्व उसके कार्य के आधार पर तय होता है, लेकिन यह अवैयक्तिक नहीं होता। इसकी वजह यह है कि उस व्यक्ति के कार्य पर दूसरे श्रमिक निर्भर करते हैं, जबकि वह स्वयं दूसरे लोगों के कार्यों पर निर्भर करता है।
4. नगरों में ग्राहक और विक्रेता के बीच होने वाले सौदों को नियमित करने के लिए विनियमन प्राधिकरण (Regulating Authority) की जरूरत होती है। प्राधिकरण की आवश्यकता वजन, माप, मुद्रा नियमन, विवादों के निस्तारण और बाजारों की स्थापना के लिए हुई। ये प्राधिकरण कार्यों को संतुलन में रखता है और सरकार की तरह व्यवस्थित रहता है। यूं तो हर स्तर पर सरकार रहती है, लेकिन मुख्य सामाजिक प्राधिकरण को स्थानीय सरकार माना जा सकता है।
5. औद्योगिक नगर सामान्यतः नियोजित होते हैं। इस योजना में गलियों के पैटर्न, पार्क, आवासीय क्षेत्र आदि विकसित किए जाते हैं। इसके अलावा औद्योगिक क्षेत्रों और सुविधाओं का विकास भी इसके तहत किया जाता है। नगरों में ऐसे लोग भी होते हैं जो बस्तियों के पुनर्वास और आवासीय कार्यक्रमों को लेकर काम करते हैं।

### 8.3.9 निष्कर्ष (**Conclusion**)

औद्योगिक नगरों का अर्थ ऐसे नगरों से है जो औद्योगीकरण की प्रक्रिया से जुड़े हुए हैं। पूर्व औद्योगिक नगर वे हैं, जहां औद्योगीकरण की प्रक्रिया का विकास नहीं हुआ, लेकिन उनकी व्यवस्था में कुछ दूसरे कारकों का योगदान रहा।

## 8.4 उत्तर औद्योगिक समाज (**Post Industrial Society**)

उत्तर औद्योगिक नगर नगरीय व्यवस्था और कारकों का उभरता हुआ सेट है जो औद्योगिक नगरों के करीब दो सदियों की कार्यशैली से इसे अलग करता है। दूसरी ओर, यह नगर पर्याप्त रूप से इतने व्यक्त नहीं हैं

कि ये अपना खुद का कोई ना स्थापित या परिभाषित कर सकें। ऐसे में उत्तर औद्योगिक शब्द बताता है कि हमने विकास की कई सीमाओं को पार किया है, जबकि अब भी कई ऐसे रास्ते बाकी हैं, जो अपरिचित हैं और जिन पर आगे बढ़ना है।

उत्तर औद्योगिक शब्द का प्रयोग सबसे पहले वर्ष 1919 में भारतीय सांस्कृतिक सुधारक एके कुमारस्वामी (Gappert, 1979: 31) ने किया, लेकिन इसे लोकप्रियता हार्वर्ड के समाजविज्ञानी डेनियल बेल के 'The Coming of Post-Industrial Society:A Venture in Social Forecasting (1973)' से मिली। बेल के अनुसार उत्तर औद्योगिक समाज की अवधारणा सामान्यीकरण की है। डेनियल बेल बताते हैं कि इसके तात्पर्य को पांच कारकों या घटकों में इस समाज की कार्यशैली के जरिये सरलतापूर्वक समझा जा सकता है। ये पांचों कारक निम्नवत हैं (Bell, 1973: 14):

1. **वित्तीय सेक्टर (Economic sector)**: वस्तुओं के उत्पादन से सेवा–सुविधाओं की वित्तीय व्यवस्था की ओर बदलाव।
2. **कार्य विभाजन (Occupational Distribution)**: पेशेवर (Professional) और तकनीकी वर्ग की श्रेष्ठता
3. **ध्रुवीय सिद्धांत (Axial principle)**: सैद्धांतिक ज्ञान ही आविष्कार और नवोन्मेषण का स्रोत और समाज के लिए नीति निर्धारण का केंद्र या धुरी।
4. **भविष्योन्मुखता (Future Orientation)**: तकनीक का नियंत्रण और तकनीक आधारित मूल्यांकन।
5. **निर्णय क्षमता (Decision Making)**: नयी बौद्धिक तकनीक (Intellectual Technology) की रचना।

बेल बताते हैं कि अमेरिका में औद्योगिक सभ्यता के इतिहास में पहली बार वर्ष 1956 में श्रम व्यवस्था बेहद विकट स्थिति में पहुंच गई थी। तब अधिकारी वर्ग की संख्या श्रमिक, कर्मचारियों की संख्या से अधिक हो गई। उन्होंने पाया कि 1950–1960 के दशक में अधिकारी वर्ग यानी व्हाइट कॉलर वर्कर्स की श्रेणी में जबर्दस्त उछाल आया क्योंकि व्यावसायिक और तकनीकी नौकरियों के लिए उच्चशिक्षित लोगों की आवश्यकता महसूस हुई। इसके तहत वैज्ञानिकों, इंजीनियरों के पद सर्वाधिक विकसित हुए। वह बताते हैं कि इसका परिणाम इन टेक्नोक्रेट के ज्ञान के आधार पर विकसित भविष्य के समाज के रूप में सामने आएगा। इस आधार पर वह औद्योगिक और उत्तर औद्योगिक नगरों के अंतर को भी समझाते हैं। बेल बताते हैं कि औद्योगिक नगर मशीनों और मानव के संयोजन से वस्तुओं के उत्पादन का माध्यम था। वहीं, उत्तर औद्योगिक नगर ज्ञान के आधार पर व्यवस्थित हैं, जिसका उपयोग सामाजिक नियंत्रण, परिवर्तन और नवोन्मेषण के मार्गदर्शन में किया जाता है। इस सबसे नये सामाजिक संबंधों और ढांचों का विकास होता है, जिन्हें राजनीतिक रूप से प्रबंधन किया जाता है। (Bell, 1973: 20)

हालांकि बेल की अवधारणा को बिना आलोचना के मुश्किल से ही स्वीकार किया जाता रहा है (Gappert, 1979: 31–7), लेकिन उत्तर औद्योगिक शब्द का सामान्य बोलचाल में निरंतर करीब तीन दशक से सामाजिक और आर्थिक स्थिति को समझने में होने वाला उपयोग बेल की 1973 में की गई सामाजिक संबंधों और वित्तीय संगठनों की प्रकृति में बदलावों के उभरने की भविष्यवाणी को दृढ़ करता है। डगलस वी शॉ बताते हैं कि उत्तर मध्ययुगीन के अंत और आधुनिक युग के प्रारंभ में उत्पादन के तरीकों में गुणवत्ता

और मात्रात्मक लिहाज से खासा सुधार आया। शिल्पकला को छोड़कर अधिकतर बुनियादी उत्पादन नगरों के बाहर होने लगा। इसके अलावा पारंपरिक व्यवस्था से इतर भी नगरों में आर्थिक कार्यशैली का विकास हुआ। 18वीं सदी के अंत में कोयले और भाप की शक्ति के उपयोग के जरिये उत्पादन के तरीकों में बदलाव और बढ़ोतरी दर्ज की गई। इससे उत्पादन श्रम की प्रकृति में भी परिवर्तन परिलक्षित हुआ। श्रम की विस्तृत आवश्यकता ओर संयोजन की आवश्यकता के साथ फैक्ट्रियां शहरी विकास के इंजन के तौर पर उभरीं और इनकी वजह से नगरीय ढांचों में पर्याप्त बदलाव भी आया। कामयाब उत्तर औद्योगिक नगर अभूतपूर्व गति से विकसित हुए और औद्योगिक विकास के जरिये वित्तीय लाभ के जो नये संसाधन विकसित हुए, उन्होंने पारंपरिक तरीकों के समर्थकों को अचंभित सा कर दिया। इसके साथ ही सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर क्षेत्रों की वृद्धि ने इन समर्थकों को और निराश किया। (Chudacoff and Smith, 1994: 78–107; Cowen, 1998: 3–31; Hohenberg and Lees, 1985: 179–214). विश्लेषणात्मक उद्देश्य से बेल ने समाज को तीन श्रेणियों में बांटा है– सामाजिक ढांचा, संस्कृति और राजनीति। उत्तर औद्योगिक नगरों की अवधारणा बुनियादी सामाजिक ढांचे में बदलाव पर आधारित है, जिसका तात्पर्य अर्थव्यवस्था, तकनीकी, व्यावसायिक ढांचे में बदलाव से भी है। यद्यपि सामाजिक ढांचा, राजनीति और संस्कृति एक–दूसरे को प्रभावित कर सकते हैं, लेकिन यह नही माना जाता है कि इन तीनों के मध्य बेहद सामंजस्यपूर्ण संबंध रहते हैं। वास्तव में इन तीनों में से किसी भी एक में होने वाला परिवर्तन बाकी दोनों के लिए परेशानियों का सबब बन सकता है (Bell 1976).

**बॉक्स 2: उत्तर औद्योगिक नगर**

**आर्थिक संपन्न और पूर्ण विकसित देशों में अपेक्षाकृत नये तरह के नगर उभर रहे हैं। ऐसे उत्तर औद्योगिक नगर, जिनकी वित्तीय व्यवस्था उत्पादन आधारित (Manufacturing Base) नहीं है, सेवा क्षेत्र (Service Sector) में बड़ी संख्या में रोजगार उपलब्ध कराते हैं। उदाहरण के लिए कुछ नगरों की पहचान कारपोरेट्स के मुख्यालय होते हैं तो कुछ को सरकारी, गैर सरकारी संस्थानों की मौजूदगी से जाना जाता है। इसी तरह शोध एवं विकास (R&D), स्वास्थ्य सेवाएं, पर्यटन से कई नगर पहचान बनाते हैं। इस तरह आरएंडडी, पर्यटन, स्वास्थ्य सेवाओं, शिक्षा, वित्त, टेलीकम्यूनिकेशन और सरकारी संस्थान आदि क्षेत्रों में लोगों को रोजगार मिलता है। इससे ये नगर उन नगरों से बुनियादी तौर पर अलग हो जाते हैं, जिनका वित्तीय आधार औद्योगिक व्यवस्था रही है।**

## 8.5 औपनिवेशिक नगर (Colonial Cities)

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका (Encyclopaedia Britannica) में रिचर्ड जी फॉक्स ने औपनिवेशिक नगरों को वह नगर बताया है जो पूंजीवादी वैश्विक व्यवस्था के विस्तारवादी दौर में यूरोप और उत्तरी अमेरिका के प्रभुत्व या शासन क्षेत्र में शामिल हो गए। औपनिवेशिक व्यवस्था के तहत उपनिवेश के तौर पर स्थापित समाज के लिए अपनी उत्पादकता में इस तरह फेरबदल करना आवश्यक हो गया कि इससे मिलने वाला धन मूल देश यानी प्रभुत्ता वाले देश को पहुंचाया जा सके, जबकि इसके लिए निष्पादित किए जाने वाले सभी कार्यों का केंद्र उपनिवेश ही हो। इन उपनिवेशों की मुख्य सांस्कृतिक भूमिका इस गैरबराबरी के रिश्ते

में प्रभुत्वसंपन्न राष्ट्र की संस्थाओं को अपने यहां स्थान और सुविधाएं उपलब्ध कराना ही थी। उपनिवेशों में राजनीतिक व्यवस्था के नाम पर ऐसी ब्यूरोक्रेसी, पुलिस और सेना थी, जिसके जरिये प्रभुत्वसंपन्न देश उपनिवेश पर अपनी सत्ता कायम रखते थे। बैंक, कारोबारी और साहूकारों की अर्थव्यवस्था का मकसद भी उपनिवेशों से धनसंपदा को शासक देश तक पहुंचाना था।

18वीं सदी से 20वीं सदी के मध्य तक भारत में ब्रिटिशाधीन बांबे और कलकत्ता, चीन और पश्चिमी अफ्रीका में यूरोपियन व्यापारिक केंद्र तथा ईस्ट अफ्रीकन व डच ईस्ट इंडियन जैसी व्यवस्थाएं उपनिवेशिक नगरीय व्यवस्थाओं का प्रकार थीं। मूल पूंजीवादी देशों ने औपनिवेशिक नगरों को दुनिया के कई क्षेत्रों में स्थित पूर्व पूंजीवादी देशों, समाजों में अपने लाभ के लिए विकसित किया। लेकिन मूल शासक देश और इन उपनिवेशों के बीच गैरबराबरी का ऐसा सिस्टम भी उन्होंने बनाए रखा, जिससे औपनिवेशिक देश वैश्विक पूंजीवादी व्यवस्था में खुद को स्थापित नहीं कर सकें। इस तरह विकसित हुई नगरीय सभ्यताओं में शासक और शासित देशों के मिश्रण का ऐसा घालमेल सा विकसित हुआ, जिसके गुण दोनों –यानी शासक और शासित– में से किसी से भी पूरी तरह मेल नहीं खाते थे। इस तरह के नये सामाजिक बदलाव मुख्यतः औपनिवेशिक देशों के अभिजात्य वर्ग में दिखाई देते थे। उदाहरण के लिए मूल स्थानीय आबादी के बीच ही बिल्कुल नये तरह की जीवनशैली वाले वर्ग विकसित होने लगे। औपनिवेशिक नगरों का मूल उद्देश्य ऐसे निम्न मध्यमवर्ग लोगों, कारोबारियों, साहूकारों, नौकरीपेशा लोगों को तैयार करना था, जो शासक वर्ग के औपनिवेशिक राजनीतिक लक्ष्यों और आर्थिक मकसदों को पूरा करने में मदद कर सकें।

उदाहरण के लिए 19वीं सदी के मध्य में भारत में रहे एक ब्रिटिश प्रशासक थॉमस बेबिंगटन मैकॉले ने भारत में पश्चिमी शिक्षा के माध्यम से ऐसे अभिजात्य वर्ग की स्थापना की रूपरेखा तैयार की, जो उसके ही कथन में 'जन्म और रंग से भारतीय हो, लेकिन विचार, शिक्षा और बुद्धि से अंग्रेज हो।' औपनिवेशिक शिक्षित निम्न मध्यम वर्ग के लोग अकसर अपनी संस्कृति में उन तरीकों से सुधार के प्रयास करने लगे, जैसा शासक वर्ग चाहता था। इसके लिए वे नये नगरीय संस्थानों के विकास की मांग करते, जिनमें स्कूल, जनकल्याणकारी संस्थाएं, सांप्रदायिक या धर्मनिरपेक्ष सुधार समूह शामिल होते। लेकिन एक या दो पीढ़ी के बाद ही यह वर्ग राष्ट्रवादी नेतृत्व, उपनिवेशविरोधी आंदोलनों का प्रमुख अंग बन गया। इस तरह औपनिवेशिक नगर जो शासक वर्ग के शोषण का एक माध्यम बन गए थे, वे ही उपनिवेशविरोधी अभियान के अगुआ बन गए। यहां सबसे विशेष बात यह थी कि इन आंदोलनों के नेता वही निम्न मध्यम वर्ग के लोग थे, जिन्हें शासक वर्ग ने विकसित किया था, जबकि इन लोगों के जागरण का जरिया भी वे ही स्कूल, अखबार और अन्य नगरीय सांस्कृतिक सुधार कार्यक्रम बने, जिनकी शुरुआत शासक वर्ग ने ही अपने लाभ के लिए की थी।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एशिया और अफ्रीका के कई देश स्वतंत्र हो गए। हालांकि, इसके बाद इन देशों में पश्चिमी शासक वर्ग का राजनीतिक हस्तक्षेप नहीं रह गया, लेकिन इन देशों ने वित्तीय रूप से औद्योगिक तौर पर सक्षम देशों से संबंध बनाए रखा। यूरोपियन देशों की औपनिवेशिक परंपरा ने इन देशों को वित्तीय और व्यापारिक रूप से उच्च स्तर दिलाया। उदाहरण के लिए ब्रिटिश शासन सदियों तक अमेरिका से खाद्यान्न और अफ्रीका से खनिजसंपदा का लाभ लेता रहा, जिसके बूते लंदन अंतर्राष्ट्रीय कारोबारी केंद्र बन गया। इसी तरह डच, फ्रेंच, स्पेनिश और पुर्तगाली नगर भी औपनिवेशिक परंपरा की बदौलत व्यापार के वैश्विक क्षेत्र, बंदरगाहों के तौर पर विकसित हो गए। दूसरी ओर, उत्तर–दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका और

अन्य जगहों पर नगर जहां औपनिवेशिक प्रशासकीय केंद्रों के तौर पर उभर रहे थे, वहीं उनमें यह भाव भी विकसित हो रहा था कि उनके यहां का जो उत्पादन शासक देशों को भेजा जा रहा है, उसे रोका जाए।

**1. स्पेनिश–अमेरिकन उपनिवेशः** लैटिन अमेरिका में स्पेनिश औपनिवेशिक नगरों का विकास 16वीं सदी में हुआ। स्पेनिश औपनिवेशिक नीतियों के चलते इन नगरों में उत्पादन और खनिजकर्म को स्थानीय लोगों की पहुंच से बाहर रखा गया, जिससे यहां का सारा धन स्पेन में चला गया। यहां औपनिवेशिक केंद्र दो स्थानों पर विकसित किए गए। पहला समुद्रतटीय क्षेत्रों में ऐसे स्थानों पर जो बंदरगाह (जैसे मेक्सिको का वेरा क्रूज) के लिए उपयुक्त हों, ताकि स्पेन से जलमार्ग के जरिये संपर्क बना रहे। दूसरा देश के भीतर ऐसे स्थान, जहां स्पेनिश आधिपत्य हो (जैसे पेरू का लीमा)। दोनों तरह के नगर मूलतः एकसमान थे, लेकिन दोनों जगह बाजारों का अभाव था, जबकि वहां भारी संख्या में सेना तैनात रखी जाती थी। स्मिथ अपने अध्ययन में पाते हैं कि देश के भीतरी हिस्सों में स्थापित उपनिवेश परिवहन की बेहतर सुविधा से भी वंचित रखे जाते थे। कोशिश यह थी कि इन तक किसी बाहरी की पहुंच न हो सके और इस तरह ये स्पेनिश उपनिवेश यूरोपियन नगरों से बिल्कुल अलग थे, जहां व्यापारिक मार्ग स्थापित किए जा चुके थे। 20वीं सदी तक लैटिन अमेरिकी देशों पर स्पेनिश उपनिवेश के दौरान उभरा पिछड़ापन हावी रहा। इसके बाद ही वहां सामाजिक और वित्तीय क्रियाकलापों में आधुनिक तौरतरीकों के समावेश की दिशा में प्रयास शुरू किए गए।

**2. उत्तरी अमेरिकी उपनिवेशः** ब्रिटिश शासनकाल में उत्तर अमेरिकी उपनिवेश प्रारंभ में सैन्य छावनियों और बाजार दोनों के तौर पर विकसित किए गए। हालांकि, नाइजीरिया और टिवलैंड में ब्रिटिश उपनिवेश का असर बाजारों के विकास से अधिक सांस्कृतिक प्रभावों पर नजर आया। बोहन्ना के अनुसार ब्रिटिश के आगमन के बाद इन क्षेत्रों में जनजातियों, कबीलों के मध्य होने वाली लड़ाइयां समाप्त हो गई, जबकि सुरक्षा और नयी सड़कों के नेटवर्क से यहां बाजार और व्यापार के नये रास्ते खुले। उत्तरी नाइजीरिया पहुंची कारोबारी कंपनियों ने टिवलैंड को वैश्विक वित्तीय व्यवस्था की मुख्यधारा से जोड़ा। टिव संस्कृति पर इसका जो सबसे बड़ा असर हुआ, वह था यूरोपियन मुद्रा से इसका परिचय।

मुद्रा का मूल गुण यह है कि यह हर तरह के विनिमय का मानक माध्यम है। टिवलैंड के लोगों ने इस विनिमय व्यवस्था को तीन भागों में बांट दिया, पहला सामान की खरीद, दूसरा प्रतिष्ठा से जुड़ी चीजें लेना और तीसरा महिलाओं पर अधिकार। बोहन्ना बताते हैं कि जब तक मुद्रा से टिव लोग परिचित नहीं थे, उनके लिए विनिमय की तीनों जरूरतों को आपस में बदल पाना संभव नहीं था, लेकिन मुद्रा के बारे में जानने के बाद उन्होंने एक अलग ही तरीका अपना लिया। मुद्रा व्यवस्था से जुड़ने के बाद टिव लोग पैसे देकर पत्नियां खरीदने लगे तो पैसे के लिए बेटियों को बेचने लगे। मुद्रा के अपने तरीके होते हैं, विनिमय व्यवस्था जाति या स्टेटस के बजाय व्यक्ति के आधार पर चलती है। ऐसे में टिवलैंड में मुद्रा बहुकेंद्रित वित्तीय व्यवस्था के बजाय एकल बनती गई, लेकिन इस सबके चलते टिव संस्कृति का काफी ह्रास हुआ। टिव लोगों को पैसे के लिए पत्नी–बेटी को बेचना अपमानजनक तो लगता था, लेकिन मुद्रा व्यवस्था ने उनकी संस्कृति को इतना प्रभावित कर दिया था कि उनके पास इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं बचा था। संक्षेप में मुद्रा एकल आधारित बाजार को विकसित तो कर सकती है, लेकिन इस बाजार के बदलने की संभावना बेहद क्षीण होती है। इसी तरह बाजार पारंपरिक संस्कृति में अलग तरह का मनोविज्ञान पैदा करता है, इसके चलते ही टिवलैंड के वैवाहिक बाजारों में महिलाओं का मोलभाव करना संभव हो सका।

**3. अफ्रीकन उपनिवेशः** यद्यपि अफ्रीका ने प्रत्यक्ष यूरोपियन शासन से पूर्व ही क्रमागत विकास और ऐतिहासिक परिवर्तनों का अनुभव किया था, लेकिन औपनिवेशिक अनुभव इन सबमें ऐसा रहा, जिसका असर लंबे समय तक बना रहा। वस्तुतः 19वीं सदी के उत्तरार्ध, यहां तक कि 1960 तक अफ्रीका का बड़ा हिस्सा उपनिवेश बना रहा। इसकी चार बड़ी वजहें उभरकर आती हैं। पहली यह कि उपनिवेशकाल में अफ्रीका में नैरोबी, जोहान्सबर्ग, अबीदजान जैसे बड़े नगरों का विकास हुआ, जिनका उपनिवेशकाल से पहले कोई अस्तित्व नहीं था। इन समेत कोटोनू, लिब्रविले, बांगुई, बोके, टमाले, इनुगु, लुबुमाशी, वांजा जैसे नगर उपनिवेशकाल में व्यापार और प्रशासकीय गतिविधियों के केंद्र के तौर पर विकसित हुए। ये सभी नगर समुद्रतटों या जलमार्गों पर स्थित थे और इनके विकास का एकमात्र लक्ष्य शासक देश से इनकी सीधी पहुंच बनाए रखना था।

उपनिवेशकाल का सबसे अधिक प्रभाव अफ्रीका की वित्तीय व्यवस्थागत ढांचे पर नजर आता है। ब्रिटिश, फ्रेंच, बेल्जियन, पुर्तगाली उपनिवेश के अनुभवों की अमिट छाप अफ्रीकी वित्तीय व्यवस्था के घटकों में साफ देखी जा सकती है। हालांकि, औपनिवेशिक वित्तीय कार्यशैली का सीधे तौर पर सामान्यीकरण करना संभव नहीं, लेकिन खनन, कृषि, उत्पादन, प्लांटेशन, परिवहन और संचारिक गतिविधियों में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का पालन औपनिवेशिक असर को परिलक्षित करता है। अफ्रीका को पिछले दो–तीन दशकों में दुनिया के बाकी देशों से पिछड़ जाने, अलग–थलग पड़ने और गरीब हो जाने का डर सताता रहा है। फिर भी छोटे अभिजात्यों, पूंजीपतियों ने अफ्रीका के नगरों पर ध्यान केंद्रित किया और अपनी कार्यकुशलता, नियंत्रण, संसाधनों और संबंधों के जरिये खुद को समृद्ध बनाया है। (Simon, 1992: 34–5). इस तरह उच्च आय के छोटे क्षेत्रों की मौजूदगी के बावजूद बेहद बड़ी आबादी के कारण अफ्रीकन नगर गरीबी और विकासहीनता में फंस गए हैं। औपनिवेशिक काल से इतर सहारा अफ्रीकी नगर नयी वैश्विक अर्थव्यवस्था में हाशिये पर जा पहुंचे हैं (Paddison, 2001).

## 8.6 नव औपनिवेशिक नगर (The Neocolonial City)

शहरी विकास का सबसे नया स्वरूप नव औपनिवेशिक नगरों का है। इन नगरों का विकास वैश्विक पूंजीवादी व्यवस्था के दायरे से बाहर हुआ है, जिसे अकसर तीसरी दुनिया भी कहा जाता है। इन नगरों का विकास पूंजीवादी एकाधिकार और जनसंचार के मूल के आधार पर हुआ है। तीसरी दुनिया के नगरों में अग्रणी औद्योगिक देशों ने औद्योगिक उत्पादन में अपनी पूंजी का निवेश किया है। ऐसे नगरों में कई सांस्कृतिक भूमिकाओं का निर्वहन निवेश करने वाले देश करते हैं।

**बॉक्स 3**

**औपनिवेशिक नगर 19वीं सदी और 20वीं सदी के प्रारंभिक दौर में यूरोपियन साम्राज्यवादी के वैश्विक आधिपत्य की कोशिशों का परिणाम हैं। औपनिवेशिक नगर अपनी व्यापारिक गतिविधियों, निजी जरूरतों–स्थितियों और पश्चिमी नगरीय गुणों व स्थानीय पारंपरिक मान्यताओं के मिश्रण से अद्वितीय बन जाते हैं।**

नव औपनिवेशिक नगरों में शहरी फैक्ट्रियां, वेतनभोगी श्रम, आवासीय सुविधा, विकासशील अवस्थापना ढांचा, नगरीय परिवहन और संचार सुविधाएं उपलब्ध होती हैं। आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों से इन नगरों में भारी

मात्रा में पलायन दर्ज किया जाता है। इसके बावजूद ये नगर औद्योगिक नगरों से संबंध के चलते सांस्कृतिक रूप से औद्योगिक नगरों से भिन्न नहीं होते हैं। एक प्रमुख अंतर यह है कि नव औपनिवेशिक नगरों में वस्तुओं का उत्पादन अपने उपभोग के लिए नहीं, बल्कि निर्यात के लिए किया जाता है। हालांकि, बहुत छोटी मात्रा में स्थानीय अभिजात्य वर्ग को उत्पादन के उपभोग का लाभ दिया जाता है। नव औपनिवेशिक नगर स्थानीय आंतरिक क्षेत्रों के लिए सुविधाप्रदाता नहीं होता, बल्कि यह विस्तृत वैश्विक अर्थव्यवस्था का हिस्सा बन जाता है। इन नगरों से जुड़े ग्रामीण क्षेत्र इसलिए महत्वपूर्ण होते हैं कि वे भारी मात्रा में और आसानी से श्रमिक उपलब्ध कराते हैं।

नव औपनिवेशिक नगरों में बड़े पैमाने पर होने वाला शहरीकरण औद्योगिक नगरों के शहरीकरण से भिन्न होता है। इन नगरों में एक अनौपचारिक अर्थव्यवस्था भी पनपती है, जिसके उत्पादक इन नगरों की निर्धन आबादी, छोटे फेरीवाले, घरों में कामकाज करने वाले, कचरा बीनने वाले आदि होते हैं जो उत्पादन, विक्रेता और ग्राहक की भूमिकाओं में रहते हैं। सामान्यतः इन लोगों की छवि बेहद तुच्छहोती है, जिनकी नगरीय व्यवस्थाओं में भूमिका हाशिये पर रहती है। इनमें से अधिकतर लाग बेरोजगार होते हैं जो अकसर प्रेरणा के अभाव में शहरी जीवनशैली में पिछड़कर आपराधिक गतिविधियों में भी शामिल हो जाते हैं, इसके बावजूद नगरीय व्यवस्था इनके अनुपयोगी होने के बावजूद उन्हें व्यवस्था में मौजूद रहने देता है, इसे गरीबी की संस्कृति कहते हैं। यह माना जाता है कि ये लोग नगरों से बाहर सार्वजनिक जमीनों पर कब्जा कर बस्तियां बसा लेते हैं, जिनसे नगर को नुकसान होता है। जेनिस पर्लमैन (The Myth of Marginality, 1976) इस धारणा को अस्पष्ट करार देते हैं। वह कहते हैं कि इसके चलते नव औपनिवेशिक नगरों की प्रकृति में मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों का महत्व ठीक से पता नहीं चल पाता है।

वैश्विक बाजार से प्रतिस्पर्धा के लिए यह आवश्यक होता है कि तीसरी दुनिया के नगरों में उत्पादित वस्तुएं निवेश करने वाले विकसित, औद्योगिक नगरों की तुलना में सस्ती हों। इन नगरों में श्रम का भुगतान काफी सस्ता होता है, क्योंकि श्रमिकों के लिए उपयोगी कई सेवाएं और छोटी वस्तुएं अनौपचारिक अर्थव्यवस्था से उपलब्ध हो जाती हैं। लैरिसा लोम्निट्ज 'Networks and Marginality: Life in a Mexican Shantytown (1977)' में बताती हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों से इन नगरों में आने वाले लोग और बस्तियों के निवासी मेड, माली, घरेलू सहायक के तौर पर औद्योगिक कर्मियों और मध्यमवर्गीय परिवारों में काम करते हैं। इसके लिए वे इन सेवाओं के औपचारिक सेक्टर से काफी कम भुगतान लेते हैं (तुलनात्मक रूप से औद्योगिक नगरों में घरेलू कामकाज और दाई के कार्यों का भी न्यूनतम श्रम मूल्य तय रहता है)।

अनौपचारिक नगरीय अर्थव्यवस्था सुरक्षा प्रदान नहीं करती है। ऐसे में नव औपनिवेशिक नगरों की बस्तियों में रहने वाले लोगों को आर्थिक संकटों से निपटकर खुद को बचाए रखने के लिए नये सांस्कृतिक, सामाजिक तरीकों का विकास करना पड़ता है। बस्तियों में अलगाव के बजाय लोग संबंधों और परस्पर निर्भरता के मजबूत ताने–बाने से जुड़े हुए होते हैं। इसका आधार सजातीय, पारंपरिक व्यवस्था और मित्रता, समान मतों का मजबूत नेटवर्क होता है। यह नेटवर्क ही बस्ती में रहने वाले बेरोजगारों, आर्थिक रूप से कमजोर लोगों को अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में उनके योगदान के बदले सहायता और सहारा देता है। इस तरह ये नेटवर्क नव औपनिवेशिक नगरों के लिए आवश्यक बन जाते हैं और व्यवस्था में इन लोगों के हाशिये पर होने की धारणा को दरकिनार करते हैं। ग्रामीण और किसान पृष्ठभूमि से निकलकर बस्तियों में रहकर नगरीय व्यवस्था में खुद को स्थापित रखने वाले लोगों को 'Peasant Urbanites' कहा जाता है।

अफ्रीकी नगरों में जनजातीय, आदिवासी आबादी का मूल स्थानों से पलायन बड़ी मात्रा में हुआ है और ये जनजातियां नव औपनिवेशिक नगरों में खुद को पारंपरिक तरीकों–मान्यताओं के आधार पर परस्पर सहायता, निर्भरता के नेटवर्क के जरिये शहरी परिवेश में नये सिरे से स्थापित कर रहे हैं, इस प्रक्रिया को 'Retribalization' कहा जाता है। इसी तरह मैक्सिको की बस्तियों में संयुक्त परिवारों की अवधारणा समाप्त होने के बजाय मजबूत और विस्तृत हुई है। ब्रायन रॉबर्ट्स बताते हैं कि शहरी विकास में ये नयी समान मत–पंथ, संप्रदाय आधारित व्यवस्था भी अहम भूमिका निभाती है (Cities of Peasants: 1978)। वह बताते हैं कि ग्वाटेमाला में यहूदी लोगों (Pentecostal) और अन्य प्रोटेस्टेंट (Protestant) समूहों के नेटवर्क न सिर्फ अपने समूहों के लोगों की सहायता करते हैं, बल्कि उनकी भी मदद करते हैं जो मत, जातीय रूप से उनसे भिन्न हैं। फिर भी यह सुनिश्चित नहीं हो पाता कि बस्तियों की अनौपचारिक अर्थव्यवस्था से जुड़े लोग असुरक्षा और गरीबी के कारण शहरी जीवन परिस्थितियों में पूरी तरह व्यवस्थित हो सकेंगे, जबकि औद्योगिक नगरों में श्रकि वर्ग ऐसा कर पाने में सफल रहा है। हालांकि, कुछ शोधकर्ता मानते हैं कि इस वर्ग में क्रांति की संभावनाएं और क्षमताएं मौजूद हैं, लेकिन अधिकतर का मत यह है कि निम्नतम श्रमिक वर्ग होने के कारण इन लोगों का इस तरह के किसी क्रांतिकारी गतिविधि में शामिल होने की उम्मीद लगभग नगण्य रहती है। बस्तियों में रहने वाले अधिकत लोग स्वरोजगार करते हैं और श्रममूल्य, वेतन की व्यवस्था में शामिल नहीं होने के कारण उन नगरीय लोगों से अलग होते हैं, जिन्हें वे सेवाएं उपलब्ध कराते हैं। यह अनौपचारिक व्यवस्था दरअसल, वर्गों के बीच प्रतिद्वंद्विता के भाव को कम करती है।

करने में मददगार होती है। इसके बजाय मध्यम वर्ग और बस्ती में रहने वाले लोग अपने वास्तविक शत्रु या प्रतिद्वंद्वी के रूप में पश्चिमी साम्राज्यवादी देशों और अंतर्राष्ट्रीय पूंजीवादी व्यवस्था से समझौता करके चलने वाली अपने ही देश की सरकार को देखते हैं। इससे यह बात उभरकर सामने आती है कि नव औपनिवेशिक नगरों में वर्गशोषण के बजाय हर वर्ग के लोगों के दुःखों, खराब परिस्थितियों को दूर करने के लिए वैश्विक अर्थव्यवस्था के तहत बाहरी आर्थिक संबंधों को लेकर बहुत अधिक काम करने की जरूरत है।

## 8.7 अभ्यास प्रश्न (Model Questions)

1. पूर्व औद्योगिक नगरों और औद्योगिक नगरों से आप क्या समझते हैं? इनके अंतर भी स्पष्ट करें।
2. क्या आप मानते हैं कि भारत एक औपनिवेशिक देश है? यदि हां तो इसे स्पष्ट करें।
3. हम उत्तर आधुनिक नगरों के युग में रहते हैं या औद्योगिक नगरों के? विस्तार से समझाएं। (अपने उत्तरों को पर्याप्त उदाहरणों से स्पष्ट करें)

## 8.8 संदर्भ ग्रन्थ (References)


1- Abrahamson, Mark, 1976. Urban Sociology, Prentice Hall, Inc., Englewood Cliffs, New Jersey.
2- Bell, D. 1974. The Coming of Post Industrial Society : A Venture in Social Forecasting, London: Heinemans.
3- Bell, D. 1974. The Cultural Contradictions of Capitalism, London: Heinemann.
4- Bell, D. 1980, 'The Social Framework of the Information Society in T. Forester (ed.) The Microelectronies Revolution, Oxford : Blackwell.

5- Bell, Daniel 1989 ‘‘The Third Technological Revolution.’’ Dissent 36:164–176.
6- B.D.S.O.W.F.J, Z.P.S., 2003. Cities of the World, U.S.A.: Rowman & Littlefield Publishers.
7- Castells, M.B. 2000, The Rise of the Network Society. Oxford. Blackwell Publishing.
8- Gist, N.P., Fawa S.F. 1964. Urban Society. New York: Thomas Y. Grewell Company.
9- Knox, Paul and Pinch, Steven. 2010. Urban Social Geography. New Delhi: Pearson.
10- Paddison, Ronan. 2001. Handbook of Urban Studies.New Delhi: Sage Publications.
11- Pallen, J.J. 1975. The Urban World. USA: McGrew Hill.
12- Sjoberg, Gideon 1960. The Pre-Industrial City. The Free Press.

ईकाई– 9

# नगरों का आंतरिक ढांचाः केंद्रीय क्षेत्र सिद्धांत, वर्गीकृत क्षेत्र, बहुल केंद्र सिद्धांत, स्टार सिद्धांत
# (INTERNAL STRUCTURE OF CITIES: CONCENTRIC ZONE THEORY, SECTOR THEORY, MULTIPLE NUCLEI THEORY, STAR THEORY)

इकाई की संरचना

9.0 उद्देश्य

9.1 परिचय

9.2 नगरीय पारिस्थितिकीय प्रक्रियाएं

9.3 केन्द्रीय व्यावसायिक क्षेत्र

9.4 संकेन्द्रित क्षेत्र मॉडल

9.5 सेक्टर मॉडल

9.6 बहुल केंद्र मॉडल

9.7 तारा सिद्धांत

9.8 समीक्षा

9.9 निष्कर्ष

9.10 अभ्यास प्रश्न

9.11 अध्ययन सामग्री

## 9.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई में हम विभिन्न सिद्धांतों के अध्ययन के जरिये नगरों के आंतरिक ढांचे को समझने का प्रयास करेंगे।

## 9.1 परिचय (Introduction)

समाज/समुदाय (The Community) और नगर अमेरिकी समाजशास्त्र की शुरुआत से ही अध्ययन के दो मुख्य घटक रहे हैं। वर्ष 1920 में रॉबर्ट ई. पार्क और अर्नेस्ट डब्ल्यू. बर्गेस के नेतृत्व में शिकागो विश्वविद्यालय में मानव पारिस्थितिकी का अध्ययन विकसित हुआ। प्रारंभिक मानव पारिस्थितिकी विशेषज्ञ वनस्पतियों और पशुओं की पारिस्थितिकी के मूल सिद्धांतों के जरिये ही मानव समुदाय के अध्ययन कर रहे थे। पार्क, बर्गेस और शिकागो स्कूल ऑफ सोशियोलॉजिस्ट्स ने नगरों के आंतरिक ढांचे के आधार पर अध्ययन प्रारंभ किया, जिसे उन्होंने नगरीय समूहों के पारिस्थितिक पैटर्न (Ecological Pattern) कहा है।

## 9.2 नगरीय पारिस्थितिक पैटर्न (Urban Ecological Pattern)

प्रारंभिक नगरीय समाजविज्ञानियों ने नगरीय विकास और भूउपयोग में आने वाले परिवर्तनों के संबंध में पांच पारिस्थितिकी प्रक्रियाओं की पहचान की। ये प्रक्रियाएं हैं केंद्रीकरण (Centralisation), विकेंद्रीकरण (Decentralisation), आक्रमण/घुसपैठ (Invasion), उत्तराधिकार/वंशानुक्रम (Succession) और पृथक्कीकरण (Segregation). केंद्रीकरण मानव प्रवृत्ति से जुड़ी प्रक्रिया है। स्वाभाविक तौर पर लोग किसी सामाजिक, आर्थिक क्रियाकलाप के लिए एक केंद्रीय स्थान पर जुटते हैं। नगरीय क्षेत्रों में केंद्रीय व्यवसाय क्षेत्र (Centralised Business Districts: CBD) लोगों के बीच परस्पर संबंध, विश्वास और संचार का बेहतरीन उदाहरण है। विकेंद्रीकरण का तात्पर्य उन कार्यों के निष्पादन के स्वभाव से है, जिन्हें केंद्रीय बिंदु से अलग रहकर किया जाता है। इसे उपनगरीय क्षेत्रों में शॉपिंग सेंटर के तेजी से विकास से समझा जा सकता है। यह प्रक्रिया बताती है कि विकेंद्रीकरण के जरिये व्यावसायिक गतिविधियां केंद्र बिंदु यानी सीबीडी से नगरों के कई अन्य क्षेत्रों की तरफ विस्तारित हुई हैं।

पृथक्कीकरण नगरीय निवासियों की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है, जिसके तहत समान सामाजिक, पारंपरिक और जातीय गुणों के आधार पर लोग एक–दूसरे के निकट रहना अधिक पसंद करते हैं। अमेरिका में यहूदी, कैथोलिक या काले लोगों के विशेष सामाजिक मान्यताओं, अभिलक्षणों के चलते समीप रहना पृथक्कीकरण की प्रक्रिया का उदाहरण है। किसी समूह के साथ रहने की इच्छा के आधार पर पृथक्कीकरण स्वैच्छिक हो सकता है या फिर सामाजिक और आर्थिक भेद के आधार पर अनैच्छिक। आक्रमण या घुसपैठ की प्रक्रिया तब सामने आती है, जब कोई समूह अपने पुराने क्षेत्र को छोड़कर सामाजिक और आर्थिक आधार पर भिन्न विचारों, गुणों वाले दूसरे समूहों के क्षेत्र में प्रवेश करता है। इस प्रक्रिया के पश्चात यदि संबंधित क्षेत्र में घुसे नये लोग पुराने लोगों को हटा देते हैं या क्षेत्र में अपना आधिपत्य स्थापित कर लेते हैं तो इसे उत्तराधिकार की प्रक्रिया कहा जाता है।

## 9.3 केंद्रीय व्यावसायिक क्षेत्र (The Central Business District)

केंद्रीय व्यावसायिक क्षेत्र (सीबीडी) की अवधारणा का शास्त्रीय वर्णन सर्वप्रथम वर्ष 1942 में अर्ल एस. जॉनसन ने किया। उन्होंने केंद्रीय व्यावसायिक क्षेत्र को नगरीय क्षेत्रों के ऐसे पारिस्थितिक (Ecological)

और बिंदु के तौर पर स्थापित किया, जो समय और आर्थिकी के लिहाज से आसानी से सबकी पहुंच में हो। सीबीडी भौगोलिक रूप से भी प्रायः नगरीय क्षेत्र का केंद्र रहता था, इसके चलते यहीं बाजार स्थापित होते जो विक्रय के लिए आसपास के क्षेत्रीय बाजारों (Regional Market) पर निर्भर रहते थे।यह प्रमुख नगरों/राजधानी (Metropolis) का वह क्षेत्र होता था, जहां उच्च शिक्षित, विशेषज्ञ व्यक्ति और संस्थान (विशेषकर वित्तीय संस्थान) मौजूद रहकर पूरे इलाके की बाजारी गतिविधियों को अपने निर्देशन और समन्वय के जरिये प्रभावित करते थे।

सभी अन्य क्षेत्रों से आने वाला जमीनी यातायात (Ground Transportation) सीबीडी पर ही समाप्त होता था और 1930–40 में हवाई यातायात भी इनसे जुड़ गया। परिवहन सुविधा के इन समापन बिंदुओं को शहरी समाजशास्त्रियों ने यातायात सुविधा में विराम के तौर पर प्रस्तुत किया है। यातायात–परिवहन में विराम का अर्थ उस व्यवस्था से है, जिसमें सामान को परिवहन सुविधा के एक माध्यम से ढुलान करने के बाद दूसरे माध्यम में लदान किया जाता है। उदाहरण के लिए सड़क मार्ग पर ट्रकों के जरिये लाया जाने वाला माल ट्रेनों पर लादा जाता है और फिर पानी के जहाजों तक पहुंचता है। इसी तरह जहाज जिस माल को लाते हैं, उसे ट्रेनों और ट्रकों के माध्यम से पहुंचाया जाता है। इस आधार पर यह संकल्पना विकसित हुई कि यातायात सुविधा के इन्हीं विराम बिंदुओं पर नगरों–शहरों का विकास होता गया।

चूंकि सीबीडी परिवहन सुविधा का केंद्र था, यह संचार (Communication) व्यवस्था का भी केंद्र बना, जहां किसी भी अन्य क्षेत्र के मुकाबले कहीं अधिक फोन कॉल्स होती थीं। अखबारों, रेडियो स्टेशनों के दफ्तरों की मौजूदगी से सीबीडी सूचनाओं (Information) का भी केंद्र बन गया। पैदल आवाजाही और वाहनों के भारी संचालन के चलते सीबीडी किसी नगर का सबसे अधिक यातायात वाला क्षेत्र था, जबकि नगर की आर्थिक गतिविधियों वाला क्षेत्र होने से यहीं बैंकों, वित्तीय संस्थानों, स्टॉक मार्केट की भी स्थापना हुई।

हालांकि, औद्योगिक इकाइयों की स्थापना इससे दूर की जाती थी, लेकिन संबंधित कंपनियों के मुख्यालय भी सीबीडी में ही होते थे। इसकी वजह सीबीडी में वित्तीय संस्थानों की नजदीकी और संचार व सूचनाओं की प्रचुर उपलब्धता थी। इसके अलावा वित्तीय संस्थानों और इनमें कार्य करने वाले लोगों की जरूरत के मुताबिक यहां कानूनी, कार्यालयी, भोजन, चौकीदारी समेत तमाम व्यक्तिगत सेवाओं की भी पर्याप्त सुविधा मौजूद थी। सीबीडी रिटेल शॉपिंग सेंटर के तौर पर भी काम करता था, जहां बड़े डिपार्टमेंटल स्टोर, सामग्री विशेष की खास दुकानें, लक्जरी शॉप आदि विकसित हुईं। इसके अलावा क्षेत्रीय और राष्ट्रीय थोक विक्रेताओं–ग्राहकों, दूसरे शहरों के उपभोक्ताओं, पर्यटकों और अन्य लोगों की सुविधाओं के लिए यहां होटल भी बने। सीबीडी में मनोरंजन की भी सुविधा थिएटर आदि के तौर पर मौजूद थीं, जबकि धार्मिक क्रियाकलापों के लिए यहां चर्च भी थे।

1942 में जॉनसन की बताई सीबीडी की इस अवधारणा में समय के साथ कई परिवर्तन भी सामने आए। औद्योगिक क्षेत्रों और शॉपिंग सेंटरों का उपनगरीय क्षेत्रों में विकसित होना, लक्जरी होटलों का सीबीडी से निकलकर नगरीय क्षेत्रों से बाहर हाईवे के किनारे और एयरपोर्ट के आसपास स्थापित होना और रिटेल विक्रय केंद्रों का उपनगरीय क्षेत्रों में बढ़ना जैसे परिवर्तन बाद में सामने आए। इसके बावजूद आर्थिक क्रियाओं के निष्पादन का सीबीडी का प्राथमिक कार्य आज भी विद्यमान है। विकेंद्रीकरण

(Decentralization) ने सीबीडी के लिए चुनौती पेश की है, लेकिन अब भी नगरीय व्यवस्थाओं की मूलभूत गतिविधियों को बाहरी क्षेत्रों में पूरी तरह विस्थापित नहीं किया गया है।

सीबीडी का भविष्य वर्तमान में आशंकाओं के घेरे में है। अमेरिका में शहरी नागरिकों के पास अब भी सीबीडी को लेकर आशान्वित रहने के कई कारण मौजूद हैं और कुछ नगरों में सीबीडी की अवधारणा को पूरी तरह नष्ट होने से बचाया भी गया है, लेकिन संकट से उबरने की ऐसी सफलताओं की संख्या काफी कम है। इस तरह का नुकसान सीबीडी की नियति सा नजर आता है। कुछ शहरी समाजशास्त्री मानते हैं कि सीबीडी की अवधारणा पूरी तरह खत्म होने के कगार पर है, लेकिन कुछ मानते हैं कि रिटेल बाजार सीबीडी से दूसरे वैकल्पिक क्षेत्रों में विकसित होंगे और सीबीडी का महत्व सिर्फ इसकी वित्तीय और संचारिक सुविधाओं के लिए रह जाएगा। अधिकतर यह मानते हैं कि शहरों में सीबीडी का एकाधिकार और वर्चस्व कम होगा, लेकिन इस तरह के केंद्र बने रहेंगे। सरकारी नीतियों और शहरी विकास के परिणामस्वरूप हाल में कुछ सीबीडी में नये दफ्तरों, भवनों और सम्मेलन केंद्रों के निर्माण से तस्वीर कुछ बदली है। ऐसे में सीबीडी के अस्तित्व को लेकर भविष्यवाणी करना अभी जल्दबाजी माना जा सकता है।

## 9.4 केंद्रीकृत क्षेत्र मॉडल (The Concentric Zone Model)

**जोन 1:** 1920 में शिकागो विश्वविद्यालय के अर्नेस्ट डब्ल्यू बर्गेस और रॉबर्ट टी पार्क ने केंद्रीकृत क्षेत्र मॉडल प्रस्तुत किया। इस मॉडल में किसी शहर के ढांचे को पांच केंद्रीकृत वृत्तों के जरिये दर्शाया गया है जिसका केंद्र सीबीडी यानी जोन 1 होता है **(देखें चित्र)**।

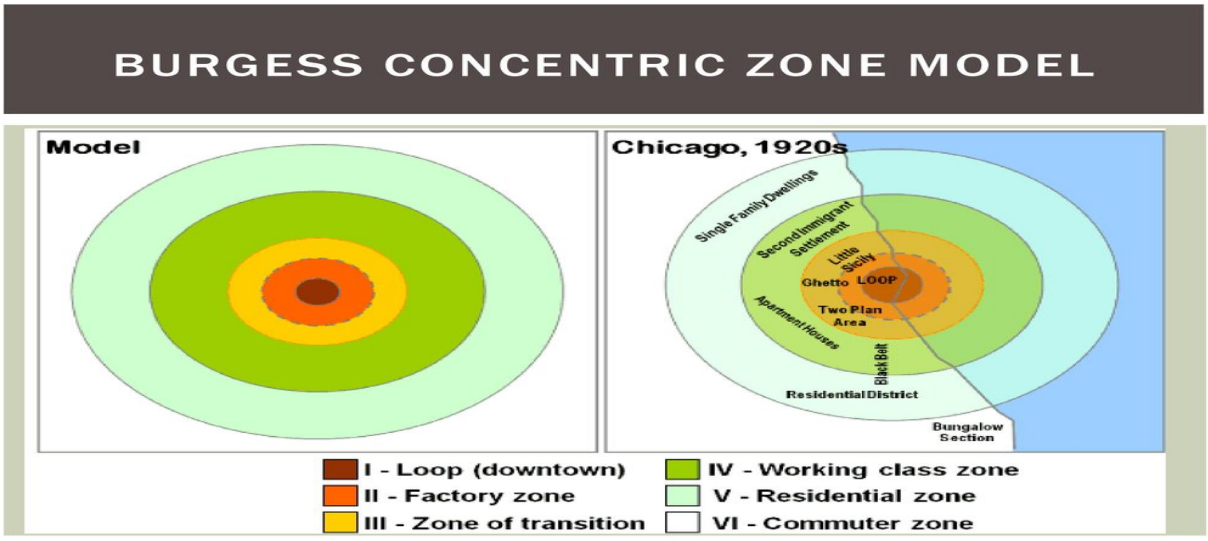


**जोन 2:** चित्र के अनुसार बर्गेस ने समझाया कि सभी वृत्तों का केंद्रबिंदु सीबीडी है। सीबीडी के चारों ओर अगला यानी दूसरा जोन संक्रमणकालिक क्षेत्र (Transitional Zone) कहलाता है। इसकी वजह यह है कि यह क्षेत्र लगातार परिवर्तनशीलता के दायरे में रहता है, क्योंकि केंद्र में स्थित सीबीडी इस क्षेत्र को अपनी भूमिकाओं के हिसाब से प्रभावित कर अपना दायरा बढ़ाने की कोशिश करता रहता है। इस जोन की आंतरिक सीमा हल्के उत्पादन कारखानों और गोदामों की होती है। इस क्षेत्र में आवासीय भवन किसी शहरी

इलाके के सबसे पुराने घर होते हैं, जिन्हें लगातार उपयोग किया जा रहा है। वास्तव में ये आवास इतने बड़े थे कि व्यावसायिक गतिविधियों के लिए इन्हें छोटे कमरों, अपार्टमेंट में परिवर्तित किया जा सके। इनमें से कई घर दरअसल गरीबों को छोटे अपार्टमेंट उपलब्ध करने के लिए बनाए गए थे।

इस जोन के आवासीय भवनों का किराया शहर के अन्य क्षेत्रों के मुकाबले काफी कम था, लिहाजा इस क्षेत्र में ऐसे लोगों को आसानी से रहने की सुविधा उपलब्ध होती थी, जो महंगा किराया चुका पाने में सक्षम नहीं थे। हालांकि, पृथक्कृत समाज के लोगों (विशेषतः शरणार्थियों) को आवास के बदले में बेहद कम और गुणवत्ता के लिहाज से निम्नतम सुविधाएं ही उपलब्ध हो पाती थीं। मकान मालिक रखरखाव यानी मेंटेनेंस के मानकों से इसलिए समझौता करते थे कि उन्हें खर्च किए बिना लाभ मिलता रहे। इस तरह इस जोन में स्थित पुराने आवासीय भवन संबंधित लोगों के लिए मुनाफे का जरिया थे। दूसरी ओर, चूंकि जमीन की अपनी काफी कीमत होती थी, लिहाजा मकान मालिक अकसर पुराने भवनों के पूरी तरह नष्ट हो जाने तक का इंतजार किया करते थे। इस प्रवृत्ति को टैक्स के उन नियमों ने भी बढ़ावा दिया, जिसके तहत संपत्ति पर मार्केट वैल्यू के बजाय उसके उपयोग और स्थिति के आधार पर कर वसूला जाता था। ट्रांजिशनल जोन किसी शहरी इलाके की वह जगह है, जहां मुख्य बस्ती होती है। इस बस्ती में अप्रवासी लोग रहा करते हैं। इस जोन के हर ब्लॉक, हर कमरे में रहने वाले लोगों की संख्या शहर के दूसरे इलाकों के मुकाबले कहीं अधिक होती है। यही नहीं, इस क्षेत्र में आपराधिक गतिविधियों, शिशु मृत्यु दर, यौनरोग और अन्य संक्रामक बीमारियों का खतरा भी अन्य क्षेत्रों से कहीं अधिक होता है। प्रति व्यक्ति आय की सबसे कम दर, बेरोजगारी की सर्वोच्च दर और मनोरोगियों की बड़ी तादाद भी इसी क्षेत्र में पाई जाती है।

**जोन 3:** शहर का तीसरा जोन वह हिस्सा है, जहां अधिकतर औद्योगिक इकाइयों और दफ्तरों के कामकाजी लोगों (Blue Collar Class) के आवास होते हैं। शरणार्थियों की दूसरी–तीसरी पीढ़ी के वे लोग, जो रोजगार के बेहतर अवसर हासिल कर पाते हैं बस्तियों से निकलकर इस क्षेत्र में घर खरीद लेते हैं। इस क्षेत्र में छोटे भूभाग पर बने घरों के दाम अधिक होते हैं, जबकि मकानों की मरम्मत–रखरखाव की बेहतर व्यवस्था और समुचित साफ–सफाई भी रहती है। इस क्षेत्र में स्वस्थ सामाजिक व्यवस्था, क्लब, पारंपरिक चर्च और स्थापत्य कला भी नजर आती है। इस क्षेत्र में चार परिवारों के रहने लायक फ्लैट्स वाले भवन, डुप्लेक्स आदि निर्मित होते हैं। इस क्षेत्र के आसपास ही शॉपिंग ब्लॉक्स होते हैं, जो सीबीडी को इस क्षेत्र से जोड़ने वाली सड़कों पर स्थित रहते हैं। समकालीन अमेरिकी शहरों में यह जोन अक्सर पक्षियों के पानी पीने, स्नान के लिए रखे जाने वाले खास पात्रों (Birdbaths), मडोना (Madonna) यानी ईसा की मां की प्रतिमाएं, रॉट आयरन से तैयार कलाकृतियों से अलंकृत किए नजर आते हैं। इस क्षेत्र में लोगों की औसत आयु अधिक होती है। यहां ऐसे बुजुर्ग अधिक रहते हैं जो अपने घर, आसपड़ोस को छोड़कर नहीं जाना चाहते। हालांकि, इनमें से कुछ क्षेत्रों में नवयुगल भी रहने लगे हैं।

**जोन 4:** बर्गेस के अनुसार शहर का जोन 4 आवासीय क्षेत्र है, जहां काफी महंगे आवास होते हैं। इस क्षेत्र में अमेरिका में ही जन्मे श्वेत (White) लोग और वहां की सामाजिक व्यवस्था में आत्मसात कर लिए गए बाहरी सजातीय लोग घर बनाते हैं। यहां आवासीय भूभाग पिछले जोन से कहीं बड़े होते हैं और घर गलियों से काफी दूरी पर बनाए जाते हैं। हरे लॉन, पेड़–पौधे आदि भी इस क्षेत्र में बहुतायत में रहते हैं। इसके अलावा यहां उच्च किराये वाले अपार्टमेंट, रेजीडेंशियल होटलों में शहरी मध्यमवर्गीय परिवार रहते हैं, जो अपना खुद का मकान नहीं खरीदते हैं। यहां रहने वाले लोग मध्यमवर्ग का उच्चशिक्षित तबका है, जो

दफ्तरों में काम करते हैं, सेल्स पर्सनल होते हैं और इनमें से कुछ छोटे कारोबारी भी होते हैं। ये लोग बहुत सुविधाजनक तो नहीं, लेकिन आराम से जीवन जीते हैं। इस क्षेत्र में सड़कें, गलियां सुंदर, साफसुथरी नजर आती हैं, जबकि यहां स्थापित शॉपिंग सेंटरों की वास्तुकला आकर्षक थीम आधारित होती है। आवासीय कॉलोनियों के पैटर्न में सामाजिक संस्थाओं, सम्मेलन स्थलों, चर्चों आदि की भी व्यवस्था यहां होती है।

**जोन 5:** इस क्षेत्र को कम्यूटर जोन कहा जाता है, क्योंकि यहां अधिकतर ऐसे लोगों की आवाजाही लगी रहती है जो यात्री होते हैं या जिनके आवास स्थिर न हों। इस क्षेत्र में आवासीय और सामाजिक पैटर्न और व्यवस्थाओं का मॉडल अस्पष्ट रहता है। यह ऐसा क्षेत्र है, जिसे अकसर वाहनचालक सीबीडी तक सीधे पहुंचने के लिए इस्तेमाल करते हैं। इस क्षेत्र से गुजरकर वे शहरी सड़कों, गलियों में व्यस्त यातायात से बच जाते हैं। इस क्षेत्र में विकास असमान नजर आता है। एकसमान वास्तुशैली और दाम वाले आवासों का क्लस्टर बस्तियों और व्यावसायिक क्षेत्रों के बीच दिखता है। इस क्षेत्र में अक्सर उपनगरीय क्षेत्रों से सटे रहने वाले इलाके में ही ग्रामीण बस्तियां या अलग–थलग रहने वाले समुदाय ही आवास बनाते हैं।

पांचों जोन के अध्ययन से हम यह समझ पाते हैं कि केंद्रीकृत मॉडल के अनुसार कोई शहर पानी में उठने वाली लहर की तरह विकसित होता है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि किसी जोन में बदलाव तब संपन्न होता है, जब दूसरे जोन की आबादी उसमें प्रवेश करे और फिर धीरे–धीरे उस जोन की पुरानी आबादी को स्थानांतरित कर दे। सीबीडी का विकास अंतर राष्ट्रीय जोन में हर अगले सटे जोन के आंतरिक किनारे में आबादी और व्यवस्था के प्रवेश से होता है। केंद्रीकृत मॉडल का सिर्फ कम्यूटर जोन खुले भूभाग के चलते बाहर की ओर विकास के लिए स्वतंत्र होता है।

## 9.5 सेक्टर मॉडल (The Sector Model)

शहरी विकास के सेक्टर मॉडल की अवधारणा होमर हॉइट ने वर्ष 1934 में अमेरिका के 64 नगरों के अध्ययन से सामने आई जानकारियों, डाटा के आधार पर की थी। इनमें से अधिकतर शहर मध्यम या छोटे आकार के थे, लेकिन न्यूयॉर्क, शिकागो, डेट्रॉइट, वॉशिंगटन और फिलाडेल्फिया जैसे नगरों का अध्ययन विस्तृत डाटा का पूरक बना। हॉइट ने सबसे पहले औसत किराये और अन्य जानकारियों का नक्शा तैयार किया। इनके आधार पर उन्होंने नगरों के पारिस्थितिकीय ढांचे के पैटर्न को समझने और सामान्यीकरण का काम किया। एक बार पैटर्न साफ हो जाने के बाद उन्होंने ढांचे में आए बदलावों और विविधता पर फोकस किया। इस अध्ययन से हॉइट ने साफ किया कि किराये में विविधता सामान्य तौर पर किसी एक इलाके की विशेष पहचान या गुण के तौर पर सामने आती है। इसके अलावा उन्होंने केंद्रीकृत मॉडल के बजाय मैप को किराये के पैटर्न पर तैयार किया, जो किसी पाई (Pie) के अलग–अलग आकार में कटे हुए टुकड़ों की तरह नजर आता है (देखें चित्र)।

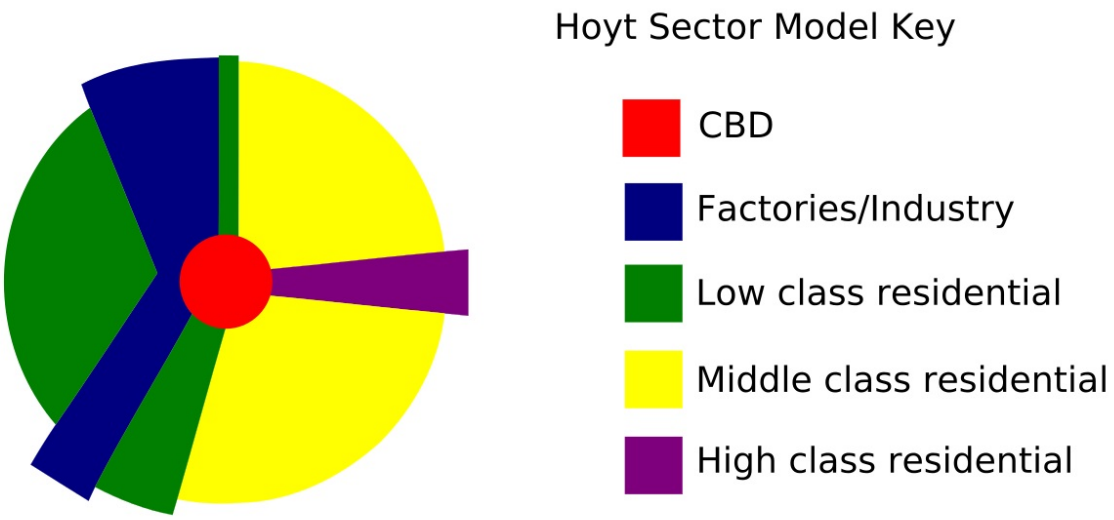


चित्र से स्पष्ट होता है कि हर सेक्टर में भूउपयोग और किराये का मूल्य समान हैं। हॉइट बताते हैं कि किराये का मूल्य किसी क्षेत्र के भूउपयोग का निर्धारण करता है और भूउपयोग किसी शहर में मुनाफे का प्रत्यक्ष या परोक्ष माध्यम है। इसका उदाहरण यह है कि सीबीडी में गैर आवासीय भूमि को वाणिज्यिक, औद्योगिक प्रयोग के लिए इस्तेमाल किया जाने लगता है या फिर कुछ ऐसा किया जाता है कि यह भूमि मुनाफे का माध्यम बने। इस प्रक्रिया से हर उद्देश्य के लिए बाजार मूल्य तय करने की प्रवृत्ति सामने आती है, जिससे हर तरह की भूमि का भी बाजार मूल्य तय किया जाता है। इस प्रकार किसी भी तरह के भूखंड की कीमत उस जमीन से मुनाफे की उम्मीद और जमीन के उपयोग की प्रकृति और इस उपयोग के जरिये उच्चतम लाभ कमाने की संभावनाओं के आधार पर निर्धारित की जाती है। इन मानकों के आधार पर ही किसी जमीन का भूउपयोग और उसका मूल्य तय किया जाता है। उदाहरण के लिए, उत्पादन इकाइयों की स्थापना के लिए यह आवश्यक है कि ट्रक और रेल यातायात की सुविधा उपलब्ध हो। ऐसे में इस तरह की इकाइयों की स्थापना हाईवे और रेल मार्गों के नजदीक ही करना जरूरी होता है। उत्पादन इकाई की स्थापना के लिए जमीन के बड़े क्षेत्रफल की आवश्यकता होती है और इसके लिए प्रति वर्गफीट के हिसाब से जमीन का मूल्य बहुत अधिक हो जाता है। दूसरी ओर, सीबीडी में बैंकिंग, रिटेल कारोबार अधिक विकसित होते हैं, क्योंकि जमीन बहुत महंगी होने के बावजूद भूखंड क्षेत्रफल की कम आवश्यकता के चलते ये वहां स्थापित हो पाते हैं। हॉइट अपने अध्ययन में पाते हैं कि अमेरिका के हर शहर में कम से कम एक बैंक केंद्रीय चौराहों पर स्थित है। वित्तीय गतिविधियां जमीन की कीमत का उच्चतम लाभ दिलाती हैं, इसीलिए बैंक, स्टॉक और कमोडिटी एक्सचेंज अधिकतर नगरों में बीचोंबीच स्थित होते हैं। पार्किंग, बस डिपो, ऑटोमोबाइल शोरूम समेत वे सभी व्यावसायिक गतिविधियां, जिनके लिए अधिक जमीन की आवश्यकता है, वे सीबीडी के किनारे पर अथवा नजदीकी सड़कों पर स्थापित होती हैं। वे उपभोक्ता जो महंगे दाम चुका सकते हैं, शहर के सर्वश्रेष्ठ क्षेत्रों में भूखंड लेते हैं। हॉइट बताते हैं कि यह पूरी व्यवस्था उच्चतम किराया मूल्य वाले सेक्टर पर आधारित है। सेक्टर प्रायः शहर के केंद्र से प्रारंभ होता है और नगरीय क्षेत्र के किनारे तक विस्तारित होता जाता है।

इस सेक्टर के दोनों किनारों पर बिल्कुल सटा हुआ दूसरा सेक्टर है, जहां किराये की दरें दूसरे नंबर पर आती हैं, इसी तरह तीसरे सेक्टर में किराये का मूल्य तीसरे स्थान पर रहता है। निचले किराये वाले क्षेत्र अपने सेक्टर में ही अवस्थित होते हैं और उच्चतम किराये वाले सेक्टर से इनकी दूरी उतनी रहती है, जितना संभव हो। पूरी व्यवस्था का केंद्र सीबीडी ही होता है। हॉइट मानते हैं कि विकास उन क्षेत्रों की ओर अधिक होता है, जहां जमीन की पर्याप्त उपलब्धता हो और इनकी कीमत कम हो। उच्च किराये वाला मूल क्षेत्र शहरी इलाके में विकास की प्रक्रिया को अपनी ओर आकर्षित करने के साथ बाकी सेक्टर में भी गतिविधियों को प्रभावित करता है। इसके चलते किराये वाले अन्य क्षेत्रों को इस खिंचाव को रोकने के लिए कई तरह के प्रयास करने होते हैं। हॉइट का मॉडल यह स्पष्ट करता है कि उच्च किराया मूल्य वाले क्षेत्र से नजदीकी किसी सेक्टर को प्रतिष्ठित करती है।

हॉइट ने उच्च किराये वाले क्षेत्रों के विकास की वजह बनने वाले कारकों को भी स्पष्ट किया है। पहला कारक यह है कि ऐसे क्षेत्र यातायात की स्थापित व्यवस्थाओं के आसपास विकसित होते हैं। दूसरा, ऐसे क्षेत्र ऐसे ऊंचे स्थानों पर विकसित होते हैं, जो बाढ़, नदियों के किनारों, जलप्रवाह, समुद्र के किनारों से दूर हों और इनका उपयोग औद्योगिक उद्देश्य के लिए नहीं किया जाता है। इसके साथ ही खुले–स्वतंत्र भूभाग के अलावा वहां प्राकृतिक व्यवधान नहीं होने का भी ख्याल रखा जाता है। तीसरा, यह क्षेत्र उन लोगों की ओर बढ़ता है, जिन्होंने खुद को पहले ही सीबीडी से दूर खुद को स्थापित कर लिया है। चौथा कारक कार्यालयी भवन, बैंक, स्टोर आदि होते हैं, जो उच्च किराये वाले क्षेत्र को अपनी ओर खींचते हैं। पांचवां कारक अस्थिर आबादी वाले क्षेत्र में उच्चस्तरीय आवासीय क्षेत्र का विकास है। छठा कारक यह है कि विकास एक ही दिशा में लंबे समय तक लगातार चलता है।

हॉइट का यह मॉडल नगरीय विकास को लेकर कई ऐसी चीजों का वर्णन करता है जो केंद्रीकृत मॉडल में पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पाती हैं। उदाहरण के लिए केंद्रीकृत मॉडल में सीबीडी में उच्च किराया मूल्य के भवनों को अपवाद के तौर पर देखा जाता है। जबकि सेक्टर मॉडल में इस तरह के भवन सीबीडी से सेक्टर के विस्तार का मूल बिंदु बन जाते हैं। सेक्टर मॉडल केंद्र से बाहर की ओर होने वाले विकास का विसतार से वर्णन करता है। हालांकि, केंद्रीकृत मॉडल की तरह ही सेक्टर मॉडल भी उपनगरीय क्षेत्रों में विकास के पैटर्न को स्थापित नहीं कर पाता है। सेक्टर मॉडल में भी नगरीय इलाकों के पुराने भागों का ही वर्णन किया गया है।

## 9.6 बहुल नाभिक/केंद्र मॉडल (The Multiple Nuclei Model)

शहरी विकास का तीसरा मॉडल चॉन्सी डी हैरिस और एडवर्ड अलमैन ने 1945 में प्रस्तुत किया। इस मॉडल में नगरों में भूउपयोग की ऐसी प्रकृति स्थापित होती है, जिसमें नगर अनेक क्षेत्रों से मिलकर बना नजर आता है। हर क्षेत्र एक अलग केंद्र या नाभिक से जुड़ा होता है और विकास को अपनी ओर खींचता है **(चित्र देखें)**।

**Harris and Ullman's Multiple Nuclei Model**

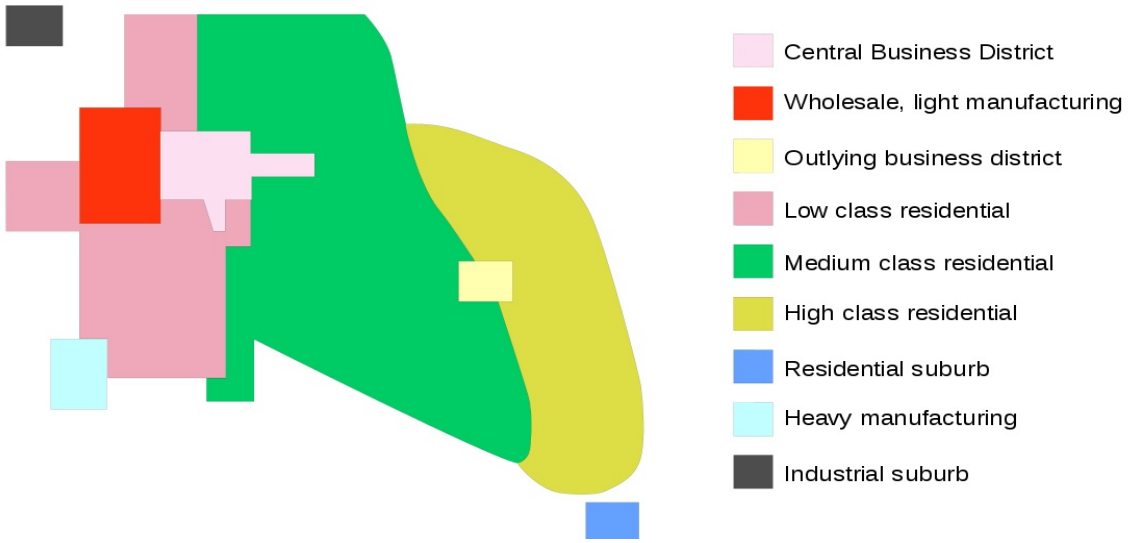


इस मॉडल में किसी नगरीय व्यवस्था को इन नौ क्षेत्रों, जिन्हें अलग–अलग केंद्र या नाभिक माना जा सकता है, में बांटा गया है। 1. सीबीडी (CBD) 2. थोक और हल्की उत्पादन इकाइयां (Wholesale and Light Manufacturers) 3. निम्न वर्ग आवास (Low Class Residential) 4. मध्य वर्ग आवास (Middle Class Residential) 5. उच्च वर्ग के आवास (High Class Residential) 6. भारी उत्पादन इकाइयां (Heavy Manufacturers) 7. उप व्यावसायिक क्षेत्र (Sub Business District-SBD) 8. आवासीय उपनगर (Residential Suburbs) 9. औद्योगिक उपनगर (Industrial Suburbs)। हैरिस और अलमैन बताते हैं कि इनमें से कुछ केंद्र तो किसी शहर के शुरुआती दौर से ही अस्तित्व में रहते हैं। दूसरे केंद्रों में निरंतर विकास के दौरान इन केंद्रों के बीच दूरी घटती जाती है और धीरे–धीरे वे शहरी क्षेत्र में शामिल हो जाते हैं। ऐसे हर नाभिक को हम ऐसे द्वीपीय क्लस्टर भी मान सकते हैं, जहां भूउपयोग एकसमान रहता है। उदाहरण के लिए शहर के किसी हिस्से में अगर कोई बड़ा अस्पताल स्थापित हो तो इसके आसपास ही मेडिकल स्कूल, अन्य क्लीनिक–अस्पताल, रिसर्च लैब, डॉक्टरों के आवास–दफ्तर, मेडिकल स्टोर, मेडिकल सप्लाई की दुकानें भी स्थापित होने लगती हैं। इनके अलावा इन सब इकाइयों में काम करने वाले लोगों की सुविधा के लिए इसी क्लस्टर में रेस्टोरेंट और अन्य सेवाओं का भी विकास होता है। इसी तरह कोई विश्वविद्यालय या महाविद्यालय एक ऐसा केंद्र बन जाता है, जो अपने आसपास छोटे इंस्टीट्यूट, निजी स्कूल, पुस्तकालयों, बुक स्टोर, शोध संस्थानों, एकेडमिक संस्थानों और शिक्षा व्यवसाय से जुड़ने वाले उपक्रमों के विकास को आकर्षित करता है।

हैरिस और अलमैन बताते हैं कि किसी नाभिक की स्थिति (Location) चार कारकों का परिणाम होती है। पहला, निश्चित प्रक्रिया वाली गतिविधियां विशेष सुविधाओं वाले क्षेत्र में पनपती हैं, उदाहरण के लिए रेल नेटवर्क और पानी की पर्याप्त उपलब्धता। दूसरा, एकसमान क्रियाकलापों वाले उपक्रम किसी क्लस्टर में समूह के तौर पर स्थापित हो जाते हैं, इससे इस समूह को कानूनी, भूउपयोग समेत विभिन्न जरूरतों के लिए अधिकारियों से भी सहयोग मिलने की संभावनाएं रहती हैं। इसके अलावा नगरीय भवनों के नजदीक

होने से इस क्लस्टर को स्टॉक, वित्तीय सलाहकार, बैंकिंग आदि कार्यों में भी मदद मिल जाती है। तीसरा, उपक्रमों के बीच परस्पर विरोधी कार्यशैली दोनों के मध्य अवरोध उत्पन्न कर सकता है। उदाहरण के लिए निजी आवासीय क्षेत्र के आसपास उत्पादन इकाइयां स्थापित कर दी जाएं तो इनसे उठने वाला शोर आवासों में रहने वाले लोगों के लिए नुकसानदेह होगा, लिहाजा इकाइयां आवासों से दूर क्लस्टर में लगती हैं। चौथा, एकसमान प्रकृति वाले कार्यों के लिए जमीन का बड़ा दायरा आवश्यक होता है। ऐसे में इस तरह के क्लस्टर कम किराये वाले क्षेत्रों में स्थापित होते हैं। उदाहरण के लिए फैक्ट्रियों की स्थापना शहर से अधिकतर बाहरी क्षेत्रों में की जाती है।

बहुल केंद्र मॉडल शहरी विकास के पैटर्न, शॉपिंग सेंटरों के विस्तार, इंडस्ट्रियल पार्कों के विकास और उपनगरीय क्षेत्रों में क्लस्टर विकास को बेहतर तरीके से स्पष्ट करता है। यह मॉडल शहरी विकास के कई ऐसे पहलुओं को छूता है, जिन्हें हम वर्तमान में प्रत्यक्ष महसूस कर सकते हैं। उदाहरण के लिए नगरों में हो रहा एयरपोर्ट का विस्तार, मोटल–रेस्टोरेंट के नये क्लस्टरों का विकास, छोटी औद्योगिक इकाइयों का विकास। हालांकि, कोई भी मॉडल किसी शहर विशेष की व्यवस्था को पूर्णरूप से व्याख्यायित नहीं कर सकता, लेकिन इन मॉडलों में वर्णित पैटर्न, कारकों के आधार पर शहरी विकास को समझा जा सकता है। तीनों मॉडलों को एकसाथ रखकर भी विकास की प्रक्रिया जानी जा सकती है। उदाहरणः शोधकर्ताओं ने अक्सर पाया है कि किसी शहर में पारिवारिक गुण, आवासीय पैटर्न और शिक्षा का स्तर केंद्रीकृत मॉडल को स्थापित करता है, जबकि प्रतिष्ठित क्षेत्रों की मौजूदगी से सेक्टर पैटर्न की पुष्टि होती है।

## 9.7 तारा सिद्धांत (Star Theory)

स्टार सिद्धांत नगरीय पारिस्थितिकी सिद्धांतों का सबसे पुराना मॉडल है, जिसके आधार पर 1920 से 1930 तक बाकी सभी सिद्धांतों के विकास में मदद मिली। 1903 में आरएम हर्ड ने इस सिद्धांत का प्रतिपादन किया था। उन्होंने पाया कि नगर अपने केंद्र से बाहर की ओर यातायात–परिवहन वाले क्षेत्रों की ओर विकसित होता है। इससे शहर किसी तारे के आकार में विकसित होता है। धीरे–धीरे तारे की दो पंक्तियों के बीच का खाली स्थान भी विकसित होता जाता है। विकास का यह पैटर्न ऐसे शहरों में देखा जा सकता है जो बाहरी क्षेत्रों से आने वाली आबादी के चारों ओर बसने से धीरे–धीरे विकसित होते हैं।

## 9.8 समीक्षा (Criticism)

शहरी ढांचे के अध्ययन में पारिस्थितिकी पहलू के उपयोग की सीमा यह है कि यह अक्सर उन कारकों को उभार नहीं पाता, जो भूउपयोग पैटर्न और आवासीय पैटर्न को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए किसी शहर की पारंपरिक सामाजिक व्यवस्था इसके ढांचागत विकास के काम में शक्तिशाली और प्रभावी कारक हो सकता है। एक या दो पारंपरिक रूप से समान सामाजिक वर्गों से विकसित होने वाले शहर और कई अलग–अलग पारंपरिक मान्यताओं वाले समूहों से जुड़कर बने शहर में अंतर साफ महसूस किया जा सकता है। दूसरा कारक है स्थानीय संस्कृति, इतिहास और रीति–रिवाज जो शहर के किसी एक क्षेत्र की पहचान बनते हैं।

प्रारंभिक विशेषज्ञ शहरी विकास को लेकर उन प्रवृत्तियों की स्पष्ट भविष्यवाणी नहीं कर सके जो द्वितीय विश्वयुद्ध से उभरकर सामने आईं। उस दौर में अमेरिका की पूर्वी और मध्यपश्चिमी शहरों में आबादी

लगातार कम हुई, जबकि पहले अनुपयोगी समझी जाने वाली दक्षिझी और पश्चिमी 'सनबेल्ट' में स्थित शहरों अलाबामा, फ्लोरिडा, जॉर्जिया आदि शहरों में रोजगार, व्यापार और जनसंख्या में इजाफा हुआ। इसके अलावा सभी जगह शहर ऑटोमोबाइल क्रांति से विकेंद्रीकृत होते गए। शहरों के सीबीडी का महत्व समय के साथ कम होता गया। शहर बाहर की ओर विकसित होते गए और नगरीय इलाकों के आपस में जुड़ने से विकास और सघन होता गया, जबकि नगरीय पारिस्थितिकी विशेषज्ञों ने इसकी कल्पना नहीं की थी। समकालीन विशेषज्ञों ने अपने दौर के विकास के अध्ययन का ही तरीका विकसित किया है। आज कंप्यूटर और आधुनिक सांख्यिकी तकनीकों का इस्तेमाल नगरीय विकास और इसके प्रभावी कारकों का अध्ययन करने में किया जाता है।

## 9.9 निष्कर्ष (Conclusion)

हम जान चुके हैं कि कोई भी मॉडल द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अमेरिकी शहरों में सामने आने वाले नगरीय विकास का अंदाजा नहीं लगा सका। विभिन्न घटनाओं से शहरों का विस्तार हुआ, जिनमें सरकारी मदद से सस्ते आवासों का निर्माण, ऑटोमोबाइल सेक्टर में लगातार इजाफा, नगरों के जातीय गुणों में बदलाव, सरकारी मदद से सड़कों का विकास समेत कई कारक शामिल हैं। लेकिन, आज के शहरों का विकास पुराने नगरों से ही हुआ है, लिहाजा किसी नगर के मौजूदा ढांचे को तुलनात्मक रूप से समझने के लिए उसी नगर के पुराने विकास ढांचे को समझना आवश्यक होता है। इसलिए प्रतिपादित मॉडल में स्थापित कारक आज भी अध्ययन के लिए प्रासंगिक हैं।

## 9.10 अभ्यास प्रश्न (Model Questions)

1. समालोचनात्मक दृष्टि से शहरों के आंतरिक ढांचों को लेकर प्रतिपादित सिद्धांतों का विस्तार से वर्णन करें।
2. सेक्टर सिद्धांत और बहुल केंद्र सिद्धांत का अंतर स्पष्ट करें।
3. सीबीडी क्या है, विस्तार से समझाएं?
4. शहरी पारिस्थितिकीय प्रक्रियाओं का वर्णन करें। इन तीनों का प्रतिपादन किसने किया?

## 9.11 अध्ययन सामग्री (Suggested Readings)

1. McGee, Reece. 1977. Sociology: An Introduction. The Dryden Press.

2. Stanley D. Brunn, Maureen Hays-Mitchell, Donald J. Zeigler.2012. Cities of the World: World Regional Urban Development. Rowman & Littlefield.

3. Tischler, Henry. 2010. Introduction to Sociology. Wadsworth Cengage Learning. USA.

i. Earl S. Jhonson, "The function of the Central Business District in the Metropolitan Community," in Paul K. Hapt and Albert J. Reiss, Jr. (eds.), Cities and Society (Glencoe, III.: Free Press, 1957).

ii. Earnest Burgess, “The Growth of the City’” in Robert Park, E. W. Burgess, and R.D. Mckenzie (eds.), The city (Chicago: University of Chicago Press, 1925).

iii. Homer Hoyt, The Structure and growth of Residential Neighborhoods in the United States (Washington, D.C.: Federal Housing Administration, 1939).

iv. Chauncy Harris and Edward L. Ullman, “’The nature of Cities,” Annals of the American Academy of Political and Social Science 242 (November 1945), pp 7-17

# ईकाई– 10

## शहरों की अवस्थिति : केन्द्रीय स्थान सिद्धांत, विशिष्ट कार्य, नगरीय प्राथमिकता एवं श्रेणी–आकार नियम

## Location of Cities: Central Place Theory, Specialized Functions, Urban Primary and Rank-size Rule

इकाई की रुपरेखा

10.0 उद्‌देश्य

10.1 परिचय

10.2 शहरों की अवस्थिति

10.2.1 केन्द्रीय स्थान सिद्धांत

10.2.2 मूल अवधारणा

10.2.3 समालोचना

10.2.4 निष्कर्ष

10.3 विशेष कार्य

10.3.1 मूल अवधारणा

10.3.2 भारत में उपयोगिता

10.3.3 निष्कर्ष

10.4 नगरीय प्राथमिकता

10.4.1 मूल अवधारणा

10.4.2 समालोचना

10.4.3 भारत में उपयोगिता

10.4.4 निष्कर्ष

10.5 श्रेणी–आकार नियम

10.5.1 मूल अवधारणा

10.5.2 समालोचना

10.5.2 भारत में उपयोगिता

10.5.3 निष्कर्ष

10.6 अभ्यास प्रश्न

10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

## 10.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद हम जान सकेंगे कि:

1. नगरों की अवस्थिति का क्या अर्थ है और यह क्यों महत्वपूर्ण है?
2. नगरों की अवस्थिति के संबंध में विभिन्न सिद्धांत क्या हैं?
3. भारत के सन्दर्भ में इन सिद्धांतों की क्या और कितनी उपयोगिता है?

## 10.1 परिचय (Introduction)

मनुष्य द्वारा भूमि पर आधिपत्य एवं उपयोग नगरों के चारों ओर ही रहता है। वैश्वीकरण के दौर में कोई व्यक्ति चाहे जहां रहता हो, वह शहरों से दूर नहीं होता। हालांकि, अवस्थिति (Location) का कारक

मानव अस्तित्व के लिये शहरों की जीवनशक्ति (Vitality) के निर्धारण में अहम भूमिका निभाता है। प्राचीन काल में अधिकतर नगरों का विकास जल संसाधनों, उपजाऊ भूमि और परिवहन सुविधाओं से युक्त स्थानों पर ही होता था। अकादमिक (Academically) तौर पर अर्थशास्त्र एवं भूगोल के आधार पर अवस्थिति सिद्धांत (Location Theory) को 'आर्थिक गतिविधियों की भौगोलिक अवस्थिति' (Geographical location of economic activities) से समझा जा सकता है (Encyclopaedia of Britannica). इसी तरह मानवीय भूगोल (Human Geography) में इस सिद्धांत को स्थानिक विश्लेषण (Spatial Analysis) अथवा स्थानिक विज्ञान (Spatial Science) माना जाता है। विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि धरती पर नगरों का विकास अनियोजित (Unplanned) और अतार्किक (Illogical) रूप से नहीं हुआ, बल्कि इनके पीछे अवस्थिति का एक सामान्य सिद्धांत अंतर्निहित था। अलमैन (Ullman, 1941) बताते हैं कि शहर एक ऐसे सेवा केन्द्र को विकसित करते हैं, जिनके जरिये वितरण का समुचित समायोजन संभव हो पाता है (Distribution Theory). इस तरह के सेवा केन्द्र आकार, अवस्थिति, कार्यशैली और संसाधनों के वितरण की विस्तृत शृंखला और श्रेणियों में अवस्थित होते हैं, जिनकी मदद से नगरों में असमान विकास की समस्या को दूर किया जा सकता है। कार्ल मार्क्स का संसाधनों के असमान वितरण का सिद्धांत विभिन्न अध्येताओं के लिये सामाजिक–स्थानिक विश्लेषण का माध्यम रहा है।

## 10.2 शहरों की अवस्थिति (Location of Cities)

शहर और शहरी घटक विभिन्न पहलुओं के चलते हमेशा महत्वपूर्ण बने रहे हैं। आबादी और सुविधाओं के लिहाज से समान नगर अपने कार्यों की वजह से परस्पर भिन्न हो सकते हैं। बीती सदियों में वितरण, अवस्थिति और शहरी समायोजनों का विस्तार से अध्ययन किया गया है। वॉन (Von, 1826) ने शहरों के संबंध में पहली सैद्धांतिक स्थापना दी। उन्होंने बताया कि आदर्श परिस्थितियों में शहर केन्द्रीय क्षेत्र (Central Area) के तौर पर विकसित होंगे, जबकि बाहरी घेरे (Outer Ring) के क्षेत्र शहर बन जायेंगे। शहरों को मूल्यविहीन (Value free) घटक नहीं माना जा सकता है, बल्कि यह शहरों में रहने वाले लोगों के सांस्कृतिक मूल्यों को लेकर आगे बढ़ता है। यह विचार कोल (Kohl, 1841) के अध्ययन में और विस्तार से सामने आता है। वह शहरों के प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण को समझाने के अलावा परिवहन सुविधाओं के इस पर असर को भी स्पष्ट करते हैं। कुछ वर्ष बाद 1894 में कूली (Cooley) ने भी परिवहन सुविधाओं (विशेषतः रेल) के शहरों के विकास और अवस्थिति पर प्रभाव को स्पष्ट किया। इस तरह यह स्पष्ट होता है कि शहरों की स्थापना के लिये उपयुक्त अवस्थिति के चयन में कई तरह के कारक महत्वपूर्ण होते हैं। विभिन्न शोधकर्ताओं ने इन्हें ध्यान में रखते हुए महत्वपूर्ण सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। हम इन्हीं सिद्धांतों को जानने की कोशिश करेंगे, ताकि शहरी व्यवस्था (Urban System) में नगरों की अवस्थिति के संबंध में बेहतर समझ विकसित कर सकें।

### 10.2.1 केन्द्रीय स्थान सिद्धांत (Central Place Theory)

यह सिद्धांत क्रियात्मक गतिशीलता के आधार पर शहरों के महत्व को स्पष्ट करता है। यह सिद्धांत क्रिस्टेलर (Christaller) ने प्रतिपादित किया, जिसे बाद में ऑगस्ट लॉश (August Losch) ने नये सांचे

में ढाला। दोनों ही सिद्धांत समायोजन की कार्यपद्धति (Function of Settlements) एवं स्थानिक अवस्थिति (Spatial Location) के बीच मजबूत संबंध विकसित करने के साथ शहरी व्यवस्था में वितरण की एकरूपता को स्पष्ट करते हैं। वाल्टर क्रिस्टेलर मूलतः एक भूगोलविद् थे। उन्होंने अपनी पुस्तक (Central Place in Southern Germany, 1933) में केन्द्रीय स्थान सिद्धांत को पहली बार स्पष्ट किया। दक्षिणी जर्मनी के अध्ययन में निगमन सिद्धांत (Deductive Theory) के उपयोग से उन्होंने ऐसे नियमों की तलाश का प्रयास किया, जिनके जरिये शहरों–नगरों की संख्या, वितरण और आकार को समझा जा सके। उनके निष्कर्ष निम्नवत रहेः

1. सभी शहरी क्षेत्र समतल (Flat) भूमि पर, सीमित स्थानों पर विकसित हुए
2. सभी शहरी क्षेत्र समरूप (Homogeneous) थे और इनकी कोई सीमा (Boundary) नहीं थी
3. सभी क्षेत्रों में आबादी का समान रूप से वितरण देखा गया
4. सभी व्यवस्थापन (Settlements) समान दूरी (Equidistant) पर थे, जिनकी स्थिति त्रिकोणीय जालक (Triangular Lattice Pattern) बनाती है, जिनसे संसाधनों का समान वितरण संभव हो पाता है
5. शहरी क्षेत्रों में व्यवसायियों के पूंजीवादी लक्ष्य निर्धारित होते हैं, जिसके लिये उन्हें कड़ी स्पर्धा से भी जूझना होता है
6. उपभोक्तावादी (Consumerism) शैली यहां सर्वोच्च होती है, अधिकतर लोग समान आय वर्ग वाले होते हैं और समान क्रयक्षमता (Purchasing Power) के साथ वस्तुओं और सेवाओं की मांग में भी समानता पायी जाती है
7. उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं संबंधी अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिये नजदीकी केन्द्रीय स्थान तक जाते हैं, उनका प्रयास कम से कम दूरी तय करने का होता है
8. वस्तुओं और सेवाएं उपलब्ध कराने वाले व्यवसायी या सेवाप्रदाता अत्यधिक लाभ कमा पाने में सक्षम नहीं होते, शहर के आंतरिक क्षेत्रों में सप्लायरों का एकाधिकार देखा जाता है

> महत्वपूर्ण तथ्य (**Important Fact**)
>
> **वॉल्टर क्रिस्टेलर जर्मन भूगोलविद् थे, जिन्होंने ग्रेडमैन (Gradman, 1916) के कार्यों के आधार पर उपरोक्त अवधारणाओं को प्रतिपादित किया। ग्रेडमैन के अनुसार, 'शहरों की विशिष्ट भूमिका आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों के केन्द्रबिन्दु बनने की थी, जो स्थानीय अर्थव्यवस्था के साथ आसपास के क्षेत्रों में भी वित्तीय स्थिति को बनाये रखने में सुविधाजनक स्थिति बना सके। इसके लिये स्थानीय उत्पादों का संग्रहण, निर्यात और स्थानिक जरूरतों के हिसाब से वस्तुओं एवं सेवाओं का आयात इस केन्द्रबिन्दु के ही माध्यम से होता था।'**

### 10.2.2 मूल अवधारणा (Basic Assumption)

केन्द्रीय स्थान सिद्धांत के प्रमुख पहलू निम्नवत हैंः

1. **केन्द्रीयता (Centrality)**: यहां केन्द्रीयता का तात्पर्य उस स्थान से है, जो अपने आसपास के क्षेत्रों में वस्तुओं और सेवाओं को प्रदान करने का केन्द्र हो। वस्तुओं की मांग में रोजमर्रा की जरूरतों (जैसे फल, सब्जियां, अनाज आदि) से लेकर कभीकभार की वस्तुओं (बाइक, फ्रिज आदि) तक शामिल होती हैं। हालांकि, केन्द्रीय स्थान की कार्यशैली और अहमियत वस्तुओं की मात्रात्मक एवं गुणवत्तापरक उपलब्धता पर निर्भर होती है।

2. **पूरक क्षेत्र (Complementary Areas)**: ये क्षेत्र केन्द्रीय स्थान की परिधि में अवस्थित होते हैं। इनका महत्व एवं आकार केन्द्रीय स्थान पर निर्भर होता है।
3. **प्रारंभिक आबादी (Threshold Population)**: इसका अर्थ केन्द्रीय स्थान में किसी उत्पाद के लिये उपलब्ध न्यूनतम ग्राहकों की संख्या से है। यह संख्या किसी विशेष वस्तु अथवा सेवा की व्यवस्था एवं उपलब्धता बनाये रखने का अहम कारक है। उदाहरण के लिये फ्रिज, मोटरसाइकिल आदि अपेक्षाकृत कम और कभीकभार बिकने वाले उत्पाद हैं और इसका उत्पादन बनाये रखने के लिये बहुत बड़ी संख्या में ग्राहकों की उपलब्धता आवश्यक है, दूसरी ओर फल, सब्जियां, अनाज और घरेलू जरूरत की चीजें अधिक मात्रा में बिकती हैं और ग्राहकों की कम संख्या के बावजूद इनकी मांग लगातार बनी रहती है।
4. **वस्तुओं और उत्पादों की शृंखला (Range of Goods and Services)**: वस्तुओं की शृंखला ग्राहक तक पहुंच की अधिकतम दूरी तक पर निर्भर करती है, यह निर्भरता दरअसल यह होती है कि ग्राहक की किसी वस्तु तक जाने के लिये यह दूरी तय करने की कितनी इच्छा है।

यह स्पष्ट है कि इस सिद्धांत की बुनियादी अवधारणा शृंखला और प्रारंभिक आबादी पर ही निर्भर है। ये दोनों वस्तुओं और सेवाओं की उपलब्धता को निर्धारित करने वाले अहम कारक हैं।

### 10.2.3 आलोचना (Criticism)

1. केन्द्रीय स्थान सिद्धांत की आलोचना का एक बिन्दु यह है कि यह वास्तविक स्थान को अवधारणाओं में बांधकर बेहद सीमित कर देता है।
2. यह मानना कि सभी क्षेत्र समतल (Flat) हैं और सभी क्षेत्रों में वस्तुओं–सेवाओं का वितरण एकसमान रूप से होता है, वस्तुतः काल्पनिक है। वस्तुओं की शृंखला वाला पहलू भी इसलिये प्रभावी नहीं दिखता, क्योंकि सीमित शृंखला वाले बाजार सिकुड़ जायेंगे, विशेषतः उस दौर में जहां मॉल और ऑनलाइन सेवाएं तेजी से बढ़ रही हैं और ग्राहक माउस के एक क्लिक पर दुनियाभर से मनचाहा उत्पाद हासिल कर सकते हैं।
3. व्यवस्थाओं का षट्भुजीय पैटर्न व्यावहारिक रूप से संभव नहीं है। बाजार क्षेत्र की मूल प्रवृत्ति अन्य किसी भी आकार के बजाय वृत्ताकार रूप में अवस्थित होने की होती है। कामिल बताते हैं कि, 'वस्तुओं और सेवाओं की उपलब्धता, विविधता, गुणवत्ता और मात्रा जितनी अधिक होगी, उतनी ही अधिक दूरी लोग उन्हें हासिल करने के लिये तय करने के इच्छुक होंगे।'
4. पूंजीवादी दौर में साफसुथरे और समान प्रतिस्पर्धी बाजार की उम्मीद करना काल्पनिक लगता है। अधिकतम लाभ कमाने की इच्छा रखने वाले उद्यमी खुद को बाकी सभी उद्यमियों से आगे रखने के लिये ऐसे प्रयास करेंगे, जिनसे बाजार वृत्ताकार बन जायेगा। इससे कम से कम यह तय हो पायेगा कि बाजार कम से कम एक प्रारंभिक आबादी को उत्पाद मुहैया कराने का लक्ष्य पूरा कर सकेगा।
5. केन्द्रीय स्थान अलग–अलग होते हैं, ऐसे में सैद्धांतिक रूप से एक निश्चित एवं स्पष्ट केन्द्र की उपस्थिति असंभव है।
6. ग्राहकों की आवाजाही का पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता है, क्योंकि कई बार यह बजट एवं उत्पाद की वास्तविक आवश्यकता पर निर्भर करता है। यह भी संभव है कि कई बार ग्राहक बाजार तक पहुंचने के बावजूद वस्तु इसलिये नहीं ले सकता है, क्योंकि वह उसके बजट से बाहर है। इस तरह किसी दैनिक जीवनचर्या के लिये आवश्यक उत्पाद के लिये ग्राहकों का लंबी दूरी तय करना

आवश्यक नहीं है। हालांकि, कभीकभार खरीद की जाने वाली वस्तु के लिये जरूर ग्राहक आवश्यकता होने पर लंबी दूरी तय कर सकते हैं।

7. तकनीकी विकास और सरकारी नीतियां भी बाजार की जरूरतों को पूर्ण करने में अहम भूमिका का निर्वाह करती हैं। उदाहरण के लिये ऑनलाइन शॉपिंग, होम डिलीवरी जैसी सुविधाएं और वस्तुओं के दामों पर सरकारी नियंत्रण आदि।
8. वॉल्टर ने हर केन्द्र के लिये एक विशेष आयाम पर ही कार्य करने की अवधारणा दी, जबकि वर्तमान दौर में हर केन्द्र बहुआयामी (Multifunctional) हैं।

### 10.2.4 भारत के सन्दर्भ में उपयोगिता (Applicability in India)

केन्द्रीय स्थान सिद्धांत अपनी स्थायी अवधारणा के कारण प्रवृत्ति में उच्च मानकाधीन (Normative) होते हैं। भारतीय प्रशासनिक ढांचा विभिन्न पदक्रमों में बंटा हुआ है। राजधानी के उच्चतम स्तर से शुरू होकर यह जिला, तहसील, खंड यानी ब्लॉक, निकाय और ग्राम पंचायत तक जाता है। इसके अलावा भारत में शहरी–ग्रामीण व्यवस्थाओं को जनसंख्या घनत्व, ढांचागत बुनियादी सुविधाओं आदि से देखा जाता है, लिहाजा यहां इस सिद्धांत को लागू कर पाना बेहद मुश्किल है। हालांकि, जर्मनी में स्थान परिवर्तन नीतियों के लिये इसे मार्गदर्शक सिद्धांत माना जाता है। इसके अलावा यह सिद्धांत वहां के क्षेत्रीय विकास कार्यक्रमों का अहम हिस्सा है।

### 10.2.5 निष्कर्ष (Conclusion):

ऑगस्ट लॉश ने अपनी पुस्तक Economics of Location में केन्द्रीय स्थान सिद्धांत को नवीनीकृत किया है। उन्होंने बताया कि बाजार का आकार और विस्तार इसके ग्राहकों को प्रभावित करता है। क्रिस्टेलर के समतल विचार के विपरीत ऑगस्ट ने स्पष्ट किया है कि सतह के समस्थानिक होने के अलावा यह आवश्यक है कि वहां वस्तुओं और सेवाओं की निर्बाध आपूर्ति बनी रहे। उद्यमी पूंजीवादी व्यवस्था के तहत काम करते हैं, जो वस्तुओं और सेवाओं के दाम में वृद्धि से उपभोक्ताओं–ग्राहकों को प्रभावित करता है। क्रिस्टेलर मानते हैं कि वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन के लिये शृंखलाबद्ध पदानुक्रम की व्यवस्था है, वहीं ऑगस्ट मानते हैं कि पदानुक्रम (Hierarchy) का हर केन्द्र अलग–अलग सेवाएं और वस्तुएं उत्पादित करता है। क्रिस्टेलर ने अपने पदानुक्रम का वितरण उतरते हुए क्रम (Descending Order) में किया है, जिसके उच्चतम पायदान पर महानगर हैं, जबकि लॉश ने इसे चढ़ते हुए क्रम (Ascending Order) में समझाया है। इस तरह यह स्पष्ट होता है कि क्रिस्टेलर ने जो योजनागत प्रस्ताव दिये हैं, वे उच्च विकसित शहरों में ही उपयोगी हैं, लेकिन ऑगस्ट का तरीका उच्च आबादी घनत्व वाले क्षेत्रों पर भी लागू हो सकता है। वस्तुतः दोनों ही विचार क्षेत्र विशेष के विश्लेषण के बजाय संयुक्त सिद्धांत हैं।

## 10.3 विशेष कार्य सिद्धांत (Specialized Function Theory)

शहरी संस्कृति के विस्तार के परिणामस्वरूप शहरों की संख्या में तो बढ़ोतरी हुई ही, उनके कार्यों और महत्व में भी वृद्धि हुई। शहर आकार, अवस्थिति के हिसाब से तो एक–दूसरे से अलग होते ही हैं, उनका महत्व भी उनकी आवश्यकता, सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यशैली आदि के लिहाज से अलग–अलग हो जाता है। विभिन्न शोधकताओं ने आकार, अवस्थिति, सामाजिक–सांस्कृतिक महत्व के आधार पर नगरों को वर्गीकृत करने के प्रयास किये हैं, लेकिन कार्यों के आधार पर इसका निर्धारण ही वर्गीकरण के मजबूत

सिद्धांत की स्थापना के लिये सबसे उचित माना जाता है। शहरों की कार्याधारित व्याख्या ही शहरी अध्ययन का महत्वपूर्ण पहलू है, क्योंकि यह क्षेत्रीय योजना (Regional Planning) के लिये सुदृढ़ आधार प्रदान करती है (Velapurgore, Rathod and Kagapur, 2008). ऑरेसो, हैरिस और हॉवर्ड नेल्सन जैसे शोधकर्ताओं ने भी कार्यों के आधार पर ही शहरों का वर्गीकरण किया है।

### 10.3.1 मूल अवधारणा (Basic Assumption)

कार्यों के आधार पर शहरों को विभिन्न क्षेत्रों (Zones and Regions) में वर्गीकृत किया गया है। शोधकर्ताओं ने इसके लिये विभिन्न पहलुओं को ध्यान में रखा है। इसे समझने के लिये हम दुनियाभर में शोधकर्ताओं द्वारा किये गये वर्गीकरणों का तुलनात्मक अध्ययन करेंगे।

**ऑरेसो का मॉडल (Aurousseau's Model):** ऑरेसो ने वर्ष 1924 में विशेष कार्य सिद्धांत प्रतिपादित किया। उन्होंने शहरी भूगोल (Urban Geography) को शहरी अध्ययन का सहायक मानने के बजाय मुख्य कारक और स्वतंत्र अध्ययन क्षेत्र माना और तर्क दिया कि यह शहरी योजना के लिये अहम पहलू है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद शहरी भूगोल मुख्य कारक बन गया, क्योंकि शहरों की विकास योजनाओं और भौगोलिक विकास के लिये यह महत्वपूर्ण था। वर्ष 1921 में ऑरेसो ने शहरों को साधारणतम स्वरूपों के आधार पर वर्गीकृत किया। उन्होंने शहरों को छह वर्गों में विभाजित किया था। ये निम्नवत हैं:

1. प्रशासन (Administration)
2. सुरक्षा (Defence)
3. संस्कृति (Culture)
4. उत्पादन (Production)
5. संचार (Communication)
6. मनोरंजन (Recreation)

शहरी केन्द्र विभिन्न कार्यों–उद्देश्यों की पूर्ति में मानवीय आबादी के लिये महत्वपूर्ण कारक की तरह होते हैं। ये कार्य शहरी केन्द्रों की व्यवस्था पर निर्भर करते हैं। प्रशासन की इसमें सबसे महत्वपूर्ण भूमिका रहती है, लिहाजा कार्यों के लिहाज से इस पर ही सबसे अधिक दायित्व भी रहता है। इस तथ्य को इस तरह समझ सकते हैं कि विभिन्न कालों (Era) में राजाओं ने प्रशासनिक शहरों की स्थापना की। भारत में दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी है, ऐसे में अधिकतर प्रमुख सरकारी कार्यालय वहीं हैं। सुरक्षा नागरिकों के लिहाज से बेहद अहम हिस्सा है, विशेषकर सीमावर्ती क्षेत्रों में इसका महत्व और बढ़ जाता है। सांस्कृतिक नगरों का महत्व राष्ट्रीय संपत्ति के तौर पर जाना जाता है।

**महत्वपूर्ण तथ्य (Important Fact)**

**मार्कल ऑरेसो आस्ट्रेलियाई भूगोलविद्, अनुवादक, भूगर्भशास्त्री थे। प्रथम विश्व युद्ध के बाद वह आस्ट्रेलियाई सेना में शामिल हो गये। भूगोल में उनका 50 साल से अधिक का योगदान रहा। जनसंख्या समस्या और व्यवस्थागत पैटर्नों पर आधारित उनके बौद्धिक कार्य, शोध 1918–27 के बीच प्रकाशित हुए। 1923 में उन्हें न्यूयॉर्क स्थित अमेरिकन ज्योग्राफिकल सोसाइटी में भूगोलविद् के रूप में नियुक्ति मिली। उन्होंने अमेरिका में चार वर्ष तक आईजे बोमैन, हार्लेन बैरोज और मार्क जेफरसन जैसे प्रसिद्ध भूगोलवेत्ताओं के साथ काम किया। 1920 में अपने जीवनवृत्त में ऑरेसो ने स्वयं उस अवधि का एक भूगोलविद् के तौर पर विस्तार से वर्णन किया है। वह मानते थे कि उनके योगदान को हमेशा उपेक्षित किया गया। वह कहते हैं, 'मैं उभरता सितारा था, लेकिन मैं क्षितिज से आगे नहीं बढ़ सका।'**

**आलोचना (Criticism)**: ऑरेसो ने शहरों का वर्गीकरण उनके कार्य महत्व के आधार पर किया है, जिसे वर्गीकरण का सबसे विश्वसनीय तरीका माना जाता है। फिर भी निम्न कारणों के चलते यह सिद्धांत आलोचनामुक्त नहीं हैः

1. विशेष कार्य सिद्धांत को अत्यधिक सामान्यीकृत (Over Generalized) माना जाता है।
2. किसी शहर का एक विशेष श्रेणी में वर्गीकरण सामान्यतः विभिन्न अन्य श्रेणियों में उसकी भूमिका को नगण्य कर देता है।
3. किसी श्रेणी का मानक बिंदु (Cut-off Point) शोधकर्ता के विवेकाधीन (Arbitrary) होता है, इसके चलते यह व्यक्तिनिष्ठ (Subjective) बन जाता है।
4. वित्तीय आयामों को इस प्रक्रिया में नजरअंदाज कर दिया जाता है। जबकि यह पहलू इस लिहाज से अहम है कि कोई शहर उसमें रहने वाले लोगों की जरूरतों के अलावा बाहरी सटे हुए क्षेत्रों के लोगों के लिये भी सुविधाएं जुटाने का काम करता है।
5. ऑरेसो ने कार्यमहत्व को लेकर कई श्रेणियां दी हैं, जिनके चलते भ्रम (Confusion) की स्थिति बनती है। इसकी वजह यह है कि इन श्रेणियों में कार्यमहत्व और स्थानिक (Locational) गुणों को संयुक्त किया गया है। उदाहरण के लिये संचार सुविधा के अंतर्गत आने वाले वर्गों के वस्तुओं के स्थानांतरण के कार्य को यहां स्पष्ट नहीं किया गया है।
6. तटीय, सीमावर्ती और पुलों से युक्त शहर कार्यों के संपादन के लिये अवस्थिति (Location) के महत्व को स्पष्ट करते हैं। ऐसे शहरों में संचार–परिवहन की बेहतर सुविधाएं अधिक अहम होती हैं। इसी तरह धार्मिकयात्रा के केन्द्र (Pilgrimage Centres) एवं सांस्कृतिक शहर भौगोलिक रूप से दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों, घाटियों और नदियों के किनारे स्थित होने के बावजूद अहमियत रखते हैं।
7. विश्वविद्यालयी शहर (University Towns) जैसे विशेषण मिथ्यासंज्ञा (Misnomer) प्रतीत होते हैं, क्योंकि ये किसी शहर के सिर्फ एक गुण को ही उभारते हैं, जबकि उस शहर के वातावरण में कई और भी अहम पहलू उपलब्ध होते हैं।

**निष्कर्ष (Conclusion)**: ऑरेसो का वर्गीकरण कई महत्वपूर्ण पहलुओं को उभारने के साथ भावी परिष्कृत सिद्धांतों के लिये अवसर भी प्रदान करता है। यह ऐसी व्यापक व्यवस्था है, जो शहरी केन्द्रों के वर्गीकरण के लिये शहरी गतिविधियों के विभिन्न आयामों को स्पष्ट करती है। हालांकि, कार्याधारित विविधताओं और

संबंधित गतिविधियों को लेकर यह धुंधली तस्वीर ही सामने रख पाती है, जिसके लिये और अधिक काम की जरूरत महसूस होती है।

**हैरिस का वर्गीकरण सिद्धांत (Harris's Model of Classification)**: पूर्ववर्ती वर्गीकरण व्यवस्था से हैरिस ने असंतुष्टि जतायी। उन्होंने शहरों की एकनिष्ठता एवं विशेष कार्यों को अत्यधिक महत्व दिये जाने के विरोध में तर्क दिये। अपने शोधकार्य 'A Functional Classification of The Cities in The United States' में उन्होंने जनसंख्या को वर्गीकरण का मुख्य घटक माना और इसे दो मुख्य कारकों आधिपत्य एवं रोजगार में विभाजित किया। उन्होंने शहरों को नौ वर्गों में बांटा है:

1. उत्पादन (Manufacturing)
2. खुदरा बिक्री (Retailing)
3. विविधता (Diversified)
4. थोक बाजार (Wholesaling)
5. यातायात–परिवहन (Transportation)
6. खनन (Mining)
7. रिजॉर्ट (Resorts)
8. अन्य (Others)

**महत्वपूर्ण तथ्य (Important Fact)**

**हैरिस ने अपने शोधकार्य Salt Lake City: A Regional Capital में शहरों के सेवा संबंधी कार्यों और इनके प्रभाव का अध्ययन किया है। 1941 में उन्होंने एसोसिएशन ऑफ अमेरिकन ज्योग्राफर्स के साथ शोधपत्र A Functional Classification of Cities in the United States प्रस्तुत किया, जिसे शहरी भूगोल के क्षेत्र में बेहद अहम माना जाता है। उन्होंने 1943 में जर्नल ऑफ सोशियोलॉजी के लिये लेख भी लिखे। इन शोधकार्यों और आलेखों ने शहरी अध्ययन के क्षेत्र में हैरिस को विशिष्ट विद्वान के तौर पर स्थापित किया।**

**Source: Chicago chronicle (2004)**

**हैरिस मॉडल की अवधारणा (Assumptions of Harris's Model)**: हैरिस ने जिन अवधारणाओं के आधार पर अपना सिद्धांत प्रस्तुत किया, वे निम्नवत हैं:

1. भूमि समतल नहीं है (बर्गीज मॉडल का सुधारीकरण)। बड़े शहर में इस तरह की समतल जमीन और ऐसी भौगोलिक अवस्थिति को तलाशना खासा मुश्किल होगा, जो शहर की सभी गतिविधियों, विकास और उन्नति की दिशा को तय कर सके।

2. शहर में रहने वाले लोगों के बीच संसाधनों का समान रूप से वितरण होता है, सुविधाओं के उपभोग में पदानुक्रम की कोई व्यवस्था नहीं होती है, न ही संसाधनों के विशिष्ट उपभोग की कोई व्यवस्था रहती है।

3. जनसंख्या घनत्व की प्रकृति समरूप होती है। शहर में आबादी समान रूप से विस्तृत होती है, विशेष क्षेत्र में सघन नहीं। यह इसलिये भी आवश्यक है कि जनसंख्या का असमान वितरण बाजारों पर प्रत्यक्ष रूप से असर डालता है।

4. शहरों में परिवहन लागत समान होती है। ग्राहकों पर यात्रा व्यय का अधिक असर नहीं होता है।

5. क्षेत्रविशेष में विशेष गतिविधि को बढ़ावा देने का मूल लक्ष्य अधिकतम लाभ हासिल करना होता है। औद्योगिक विकास भी इस पर निर्भर करता है। हालांकि, इसके लिये श्रम मूल्य (labour Cost), परिवहन मूल्य (Transportation Cost), बाजारों की निकटता आदि पहलू भी ध्यान में रखने होते हैं। इन सबके जरिये परिवहन मूल्य को कम करने के साथ वस्तुओं और सेवाओं की उपलब्धता को बेहतर बनाया जा सकता है।

**आलोचना (Criticism):** हैरिस के शहरों के वर्गीकरण के मॉडल को प्रतिमान माना जाता है। इसके बावजूद उनके सिद्धांत की बेहद कच्चे आंकड़ों (Raw data) पर आधारित श्रेणियों की वजह से आलोचना की जाती है। मोजर और स्कॉट ने 1961 में जनसंख्या, ढांचागत सुविधाओं, आवासीय व्यवस्था, जनांकिकी (Demographic) परिवर्तन आदि के आधार पर शहरों के वर्गीकरण की 57 श्रेणियां विकसित की हैं।

**हॉवर्ड नेल्सन का मॉडल (Howard Nelson's Model):** नेल्सन ने पूर्ववर्ती मॉडलों में सामने आयी कमियों को दूर करने का प्रयास किया। उन्होंने अपने सिद्धांत के लिये 1950 की जनगणना के आधार पर शहरी क्षेत्रों, महानगरों में 10000 और इससे अधिक जनसंख्या पर मुख्य औद्योगिक समूहों पर फोकस किया। खेती, अवस्थापना विकास जैसे कम महत्व के बिन्दुओं को उन्होंने घटा दिया और अंतिम रूप से नौ गतिविधि समूहों की श्रेणी तय की। उन्होंने विभिन्न वर्गों के आकार के हिसाब से विभिन्न श्रेणियां तय कीं, जिससे शहरों के विशेषीकरण (Specializatuon) की समस्या का निदान हो सका। नेल्सन ने सांख्यिकीय Standard Deviation (SD) के आधार पर शहरों के आकार और रोजगार की स्थिति को स्पष्ट किया, जिससे शहरों की विशिष्टता को समझ पाना संभव हो सका।

नेल्सन से स्पष्ट किया कि किसी शहर को एक से अधिक गतिविधियों को श्रेणियों की विविधता के हिसाब से विशेषीकृत किया जा सकता है। निम्नवत सारिणी से समझा जा सकता है कि वर्ष 1950 में अमेरिकी शहरों में प्लस1, प्लस2, प्लस3 आदि श्रेणियों में शहरी गतिविधियों की क्या स्थिति थी। नेल्सन की इस सारिणी में शहरों की नौ प्रमुख गतिविधियों की प्रतिशतता को स्पष्ट किया गया है। उदाहरण के लिये यदि किसी शहर को Pf 2F के रूप में वर्गीकृत किया गया है तो इसका अर्थ यह है कि यहां व्यावसायिक सेवाओं में रोजगार की उपलब्धता 22.87 प्रतिशत से अधिक लेकिन 28.76 प्रतिशत से कम है, इसी तरह

वित्तीय, बीमा–बैंक एवं रियल एस्टेट के क्षेत्र में रोजगार का प्रतिशत 4.44 से अधिक किन्तु 5.69 से कम है। इस तरह यह श्रेणी मानक विचलन (Standard Deviation) को स्पष्ट करती है और शहरी केन्द्रों के महत्व को सामने रखती है। कोई शहर जो नेल्सन की इस वर्गीकरण सारिणी में किसी एक मानक पर भी शामिल नहीं होता है और औसत गतिविधियां ही वहां होती हैं, उन्हें विविध श्रेणी में रखा जाता है।

*Nelson's Nine Activity Groups (1950)*

| | *Manu-facturing* | *Retail Trade* | *Professional Service* | *Trans-portation and Communi-cation* | *Personal Service* | *Public Adminis-tration* | *Wholesale Trade* | *Finances Insurance and Real Estate* | *Mining* |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | *Mf* | *R* | *Pf* | *T* | *Ps* | *Pb* | *W* | *F* | *Mi* |
| Average | 27.07 | 19.23 | 11.09 | 7.12 | 6.20 | 4.58 | 3.85 | 3.19 | 1.62 |
| Standard Deviation | 16.04 | 3.63 | 5.89 | 4.58 | 2.07 | 3.48 | 2.14 | 1.25 | 5.01 |
| Average Plus 1 SD | 43.11 | 22.86 | 16.98 | 11.70 | 8.27 | 8.06 | 5.99 | 4.44 | 6.63 |
| Average Plus 2 SD | 59.15 | 26.49 | 22.87 | 16.28 | 10.34 | 11.54 | 8.13 | 5.69 | 11.64 |
| Average Plus 3 SD | 75.19 | 30.12 | 28.76 | 20.86 | 12.41 | 15.02 | 10.27 | 6.94 | 16.65 |

**निष्कर्ष (Conclusion)**: हॉवर्ड के मॉडल को विभिन्न विद्वानों ने प्रयोग किया है। भारत में महाराष्ट्र के नगरों के अध्ययन में इस सिद्धांत के इस्तेमाल से स्पष्ट हुआ कि लातूर जिला खनन एवं वानिकी कार्यों, उदगिर जिला कृषि कार्यों, अहमदपुर एवं लातूर जिला घरेलू उद्योगों, उदगिर निर्माण कार्यों, लातूर और निलंग वाणिज्यिक एवं व्यापारिक कार्यों में विशेष हैं और इन सभी नगरों में कार्यों की अन्य श्रेणियां भी उपलब्ध हैं। वहीं औसा तहसील ऐसी रही, जिसे किसी भी श्रेणी में शामिल नहीं किया जा सका (Velapurak ,Rathod and Kalgapure, 2001). इससे यह स्पष्ट होता है कि नेल्सन का यह सिद्धांत अविकसित या विकासशील औद्योगिक क्षेत्रों के लिये उपयोगी नहीं है।

### 10.3.2 भारत में उपयोगिता (Applicability in India)

भारतीय शोधकर्ताओं ने जनसंख्या आधारित वर्गीकरण को कमजोर माना है, क्योंकि यहां हुए विभिन्न शोधों से स्पष्ट हुआ कि वित्तीय गतिविधियां ही लोगों को मुख्यतः समूहों में बांट सकती हैं। इस आधार पर वित्तीय गतिविधियों की तीन श्रेणियां तय की गयी हैं, जिनके आधार पर यह तय हो पाता है कि किस समूह का शहरी गतिविधियों पर आधिपत्य है और कौन सा समूह निचले पायदान पर है। जानकी, अमृत लाई, केएन सिंह, प्रकाश राव, ओपी सिंह, रफीउल्लाह, महामाया मुखर्जी, काजी अहमद, अनंत पद्मनाभन, अशोक मित्रा आदि विद्वानों ने शहरों को अपनी श्रेणियों में वर्गीकृत किया है। लेकिन इनमें से कोई भी वर्गीकरण न तो दूसरे से बेहतर है, न ही किसी मायने में कमतर। लेकिन ये सभी वर्गीकरण क्षेत्रीय–स्थानिक स्तर पर किसी शहर के कार्यों की भूमिका को स्पष्ट करते हैं।

प्रकाश राव ने किसी शहर में शहरी सेवाओं, सुविधाओं, बस परिवहन, ग्राहक वर्ग आदि को आंकिक ग्रेड के रूप में प्रदर्शित किया। रफीउल्लाह ने शहरी कार्यों की रैंकिंग वेबर के मॉडल के आधार पर की। तिवारी ने एक कदम आगे बढ़ाते हुए मध्य प्रदेश के शहरों को IBM 7044 कंप्यूटर प्रणाली के आधार पर वर्गीकृत किया और विभिन्न मानकों के अनुसार इनका विश्लेषण किया। ओपी सिंह ने भारत में केन्द्रीय स्थानों के कार्यमहत्व का विश्लेषण किया है। उन्होंने कार्य पदानुक्रम और कार्य विशेषीकरण के आधार पर इन्हें विभाजिक किया। पोठाना ने आन्ध्र प्रदेश के शहरों का वित्तीय गतिविधियों के आधार पर विश्लेषण किया। महापात्रा, त्रिपाठी और सिन्हा ओडिशा के छोटे शहरों में वित्तीय आधार पर कार्य महत्व का विस्तार से अध्ययन किया। रजा, अग्रवाल और मंदिरा दत्ता भारतीय वित्तीय व्यवस्था में महानगरीय केन्द्रों की कार्यशैली और आधिपत्य का परीक्षण किया। अशोक मित्रा का वर्गीकरण 1961, 1971 एवं 1991 की जनगणना में श्रमिक–कर्मचारी वर्ग की श्रेणियों पर आधारित है। 1991 में शहरी श्रेणियों को उनकी कार्य विशिष्टता के आधार पर वर्गीकृत करने का प्रयास किया गया। इस प्रक्रिया को थोड़ा नया रूप देते हुए इसमें पांच वित्तीय श्रेणियां बांटकर इनमें औद्योगिक गतिविधियों को चिह्नित किया गया। ये इस प्रकार हैं:

1. प्राथमिक गतिविधियां (Primary Activities)
    - कृषि (Cultivation)
    - कृषि श्रमिक (Agriculture Labourers)
    - पशुधन, वानिकी, मत्स्यपालन, पौधरोपण, औद्यानिकी एवं अन्य गतिविधियां (Livestock, forestry, fishing, plantation, orchards and allied activities)
    - खनन एवं उत्खनन (Mininig and quarrying)
    -
2. उद्योग (Industry): उत्पादन, प्रसंस्करण, सेवा एवं रखरखाव
    - घरेलू उद्योग (Household Industry)
    - अन्य उद्योग (Other than household industry)
    - निर्माण श्रमिक (Construction workers)
3. व्यापार एवं वाणिज्य (Trade and Commerce)
4. परिवहन (Transport): यातायात, परिवहन, भंडारण एवं संचार
5. सेवाएं (Services)

हालांकि, भारत के सन्दर्भ में ये सभी शोध प्राथमिक रूप से 1951 और इसके बाद के वर्षों पर ही आधारित रहे। ऐसे में इनकी विफलता के पीछे बड़ी वजह यह रही कि ये सभी शोधकार्य जनगणना के आंकड़ों पर आधारित थे, अन्य विशेष पहलुओं पर नहीं। 1951 की जनगणना में श्रमिक वर्ग के निर्धारण में कई कमियां सामने आई हैं। इसमें गैर कृषि, असंगठित कृषि जैसे वर्ग ठीक से शामिल नहीं किये गये थे। ये कमियां 1961 की जनगणना में इन श्रेणियों को शामिल कर दूर की गयीं: कृषक, कृषि श्रमिक, खनन, पशुधन, वन,

मत्स्यपालन, शिकार, औद्यानिकी, घरेलू उद्योग, उत्पादन उद्योग, निर्माण, व्यापार एवं वाणिज्य, परिवहन, भंडारण एवं संचार, अन्य सेवाएं। 1971 की जनगणना के बाद विकास पैटर्न को ध्यान में रखते हुए वानिकी, खनन, पशुपालन, औद्यानिकी आदि गतिविधियों को अलग–अलग श्रेणियों में बांट दिया गया। पहले ये सभी एक ही श्रेणी में रखे गये थे। हालांकि, वर्ष 1981 की जनगणना के बाद यह श्रेणियां और भी परिष्कृत स्वरूप में वर्गीकृत की गयीं। ये निम्नवत थीं:

1. कृषक (Cultivator)
2. घरेलू उद्योग (Household Industry)
3. कृषि श्रमिक (Agricultur Labourer)
4. अन्य श्रमिक–कामकाजी (Other Workers)
5. सीमांत श्रमिक (Marginal Workers)

### 10.3.3 निष्कर्ष (Conclusion)

भारत में शहरों के वर्गीकरण के लिये कोई विशेष सिद्धांत उपयोगी नहीं है। अलग क्षेत्रों, विकास आयु, विभिन्न कार्य श्रेणियों आदि के चलते भारतीय शहरों में विविधता के कारण कोई एक श्रेणी बनाना मुश्किल है।

## 10.4 नगरीय प्राथमिक सिद्धांत (Urban Primary Theory)

प्रख्यात भूगोलविद् मार्क जेफरसन ने 1939 में यह सिद्धांत प्रतिपादित किया। प्राथमिक शहर का तात्पर्य उस शहर से है, जो किसी देश अथवा क्षेत्र का सबसे बड़ा शहर हो। इस आधार पर शहरों को उनके आकार के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। प्राथमिक शहर वितरण (Primate City Distribution) रैंक के आधार पर किया जाने वाला वितरण है, जिसमें एक सबसे बड़ा शहर होता है और इसके आसपास छोटे नगर–कस्बे व्यवस्थित होते हैं। इसे किंग इफेक्ट (King Effect) कहा जाता है। (Wall and Knaap, 2005). वस्तुतः सभी देशों में ऐसे प्राथमिक शहर की अवधारणा नहीं है, लेकिन जिन देशों में है, वहां अन्य शहर सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, परिवहन आदि सुविधाओं के लिये प्राथमिक शहर से जुड़े होते हैं। किसी शहर के प्राथमिक होने की स्थिति का निर्धारण कुछ खास मानकों और सूत्रों के आधार पर किया जाता है। यह निम्नवत है:

P1= C1 (C1+C2+C3+C4)*100
P1= Primacy index
C1, C2, C3, C4 is the population of the country in order 1,2,3,4
If P1 is > or = 50, then it will be a primate city

**महत्वपूर्ण तथ्य (Important Fact)**

**मार्क जेफरसन (1863-1949) 1919 में पेरिस पीस कांफ्रेंस में गये अमेरिकी प्रतिनिधिमंडल में मुख्य मानचित्रकार के तौर पर शामिल थे। वह मिशीगन स्टेट नॉर्मल कॉलेज (अब ईस्टर्न मिशीगन यूनिवर्सिटी) में 1901 से 1939 तक भूगोल विभागाध्यक्ष भी रहे। ज्योफ्री जे मार्टिन लिखित जेफरसन की जीवनी *Mark Jefferson geographer* को 1968 में ईस्टर्न मिशीगन यूनिवर्सिटी प्रेस (ईएमयू) ने प्रकाशित किया। ईएमयू में एक भवन का नाम मार्क जेफरसन के नाम पर रखा गया है।**

**Source: www.wikipedia.com**

### 10.4.1 मूल अवधारणा (Basic Assumption)

जेफरसन ने लंदन समेत यूरोपीय शहरों का तुलनात्मक विश्लेषण किया। अपने अध्ययन के आधार पर वह जिस निष्कर्ष पर पहुंचे, उसके प्रमुख बिन्दु निम्नवत हैं:

1. जन्म दर के मृत्यु दर से अधिक हेने और रोजगार के बेहतर अवसर उपलब्ध होने पर शहर विकसित होते हैं।

2. क्षेत्र की उत्पादन क्षमता और संचार सुविधाओं के लिहाज से लाभकारी पक्ष लोगों को रोजगार की उपलब्धता की उम्मीद में आकर्षित करता है।

TABLE I—PRIMATE CITIES IN RELATION TO THE SECOND AND THIRD CITIES OF THEIR COUNTRIES

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. Austria | 1934 | 100- 8- 6 | Vienna 1874, Graz 153, Linz 109 |
| 2. Denmark | 1935 | 100-11- 9 | Copenhagen 843, Aarhus 91, Odense 76 |
| 3. Hungary | 1936 | 100-13-12 | Budapest 1052, Szeged 140, Debrecen 125 |
| 4. United Kingdom | 1931 | 100-14-13 | London 8204, Liverpool 1178, Glasgow 1089 |
| 5. Mexico | 1930 | 100-18-13 | Mexico 1029, Guadalajara 184, Monterrey 137 |
| 6. Rumania (1) | 1937 | 100-18-17 | Bucharest 643, Chişinău 114, Cernăuţi 110 |
| 7. Peru | 1930 | 100-20-13 | Lima 370, Callao 75, Arequipa 46 |
| 8. Argentine Rep. | 1937 | 100-22-13 | Buenos Aires 2290, Rosario 510, Córdoba 302 |
| 9. Turkey (1) | 1935 | 100-23-16 | Istanbul 741, İzmir 171, Ankara 123 |
| 10. Rumania (2) | 1912 | 100-23-21 | Bucharest 338, Jassy 76, Galatz 72 |
| 11. Cuba | 1935 | 100-25-24 | Habana 550, Holguín 135, Camagüey 133 |
| 12. Bolivia | 1936 | 100-26-22 | La Paz 200, Cochabamba 52, Oruro 45 |
| 13. Finland | 1936 | 100-26-25 | Helsinki 284, Viipuri 73, Turku 71 |
| 14. Chile | 1930 | 100-30-11 | Santiago 696, Valparaiso 193, Concepción 78 |
| 15. Belgium | 1936 | 100-30-18 | Brussels 905, Antwerp 273, Ghent 164 |
| 16. Czechoslovakia | 1930 | 100-31-15 | Prague 849, Brno 265, Moravská Ostrava 125 |
| 17. Philippines | 1936 | 100-31-12 | Manila 355, Cebu 110, Iloilo 46 |
| 18. Germany (1) | 1933 | 100-32-15 | Berlin 4242, Hamburg-Altona 1372, Cologne 757 |
| 19. France | 1936 | 100-32-20 | Paris 2830, Marseilles 914, Lyons 571 |
| 20. Bulgaria | 1934 | 100-35-24 | Sofia 287, Plovdiv 100, Varna 70 |
| 21. Brazil (1) | 1892 | 100-38-36 | Rio de Janeiro 523, Bahia 200, Pernambuco 190 |
| 22. Turkey (2) | 1914 | 100-38-25 | Constantinople 1000, Smyrna 375, Damascus 250 |
| 23. Norway | 1930 | 100-39-21 | Oslo 253, Bergen 98, Trondheim 54 |
| 24. Greece | 1928 | 100-40-10 | Athens-Piraeus 592, Thessaloniki 237, Patras 61 |
| 25. Portugal | 1930 | 100-40- 4 | Lisbon 594, Oporto 232, Coimbra 27 |
| 26. Austria-Hungary | 1910 | 100-41-25 | Vienna 2150, Budapest 880, Prague 541 |
| 27. Germany (2) | 1895 | 100-43-22 | Berlin 1810, Hamburg-Altona 773, Munich 407 |
| 28. United States | 1930 | 100-43-27 | New York 7781, Chicago 3374, Philadelphia 2083 |
| 29. Colombia | 1937 | 100-43-36 | Bogotá 420, Barranquilla 180, Medellín 150 |
| 30. China | 1936 | 100-44-37 | Shanghai 3490, Peiping 1556, Tientsin 1292 |

(Source: Geographical Review, 1939)

3. ये कारक शहर के विकास में मदद करते हैं, समय और परिस्थितियों के हिसाब से इनमें अंतर हो सकता है।

4. इन सब कारणों से कोई शहर प्राथमिक शहर बनता है। एक बार किसी शहर के प्राथमिक शहर के तौर पर विकसित होने के बाद यह विशेष उत्पादों का भंडारगृह सा बन जाता है और आकार, गुणों, विशेषताओं में अन्य शहरों से बिल्कुल अलग होता है।

5. मार्क ने अपने अध्ययन में पाया कि चूंकि उस दौर में अधिकतर देश ब्रिटिश सत्ता के अधीन थे, लिहाजा इन सभी शहरों के लिये लंदन प्राथमिक शहर के तौर पर उभरा।

### 10.4.2 आलोचना (Criticism)

प्राथमिक शहर सिद्धांत के सकारात्मक और नकारात्मक पहलुओं को निम्न बिंदुओं से स्पष्ट किया जा सकता है:

1. प्राथमिक शहर सिद्धांत शहर में केन्द्रीकृत संचार एवं परिवहन सुविधा की उपलब्धता पर जोर देता है।

2. यह विदेशी निवेश और परिवहन व्यवस्था को आकर्षित करता है और बढ़ावा देता है।

3. वैश्विक पैमाने पर यह किसी देश के लिये बेहतर है।

4. इसकी वजह से शहरी समूह में उत्तरगामी विकास होता है।

5. यद्यपि आर्थिक तौर पर निवेश और लाभ, उत्पादन में बढ़ोतरी होती है, लेकिन इसकी वजह से शक्तियों और संसाधनों के असमान वितरण के कारण विभिन्न क्षेत्रों के बीच असमानता भी बढ़ती है।

6. आर्थिक, संसाधन और अवसर के लिहाज से क्षेत्रों के बीच की यह असमानता लोगों को प्राथमिक शहर की ओर रोजगार की आस में आकर्षित करती है।

7. उच्च प्रतिस्पर्धात्मक क्षेत्र की वजह से प्रतिभा पलायन की दिक्कत सामने आती है।

8. देश के अन्य हिस्सों में परिवहन–यातायात सुविधा की बेहद सीमित व्यवस्था रहती है जिसके चलते इन क्षेत्रों में कार्यों के सफल निष्पादन में दिक्कतें आती हैं।

### 10.4.3 भारत में उपयोगिता (Applicability in India)

भारत में कोई प्राथमिक शहर नहीं है। संघीय, पंथनिरपेक्ष एवं सामाजिक गणराज्य होने के कारण यहां ऐसे एक ही केन्द्र वाले समूह की संभावना नहीं है, जो अन्य क्षेत्रों से अलग ही विकसित हों। यद्यपि दिल्ली भारत की राजधानी है, लेकिन यह देश के चार महानगरों में कोलकाता एवं मुंबई के बाद यानी तीसरे स्थान पर आती है। इससे स्पष्ट है कि भारत में प्राथमिक शहर के सिद्धांत की अधिक उपयोगिता नहीं है।

### 10.4.4 निष्कर्ष (Conclusion)

यद्यपि प्राथमिक शहर परिवहन सुविधाओं, व्यापारिक–व्यावसायिक गतिविधियों, आकार एवं सांस्कृतिक स्थितियों के लिहाज से महत्वपूर्ण होता है, लेकिन इसके हावी होने से आसपास के अन्य क्षेत्रों का विकास

बाधित होता है। भारत में विशेष आर्थिक क्षेत्र (SEZ), स्मार्ट सिटी आदि भी इसी तरह के प्रयास हैं। डेविड हार्वे कहते हैं, इस तरह के जोन और कुछ नहीं, लेकिन चारों ओर गरीबी के बीच समृद्धि के केन्द्र हैं।

## 10.5 श्रेणी–आकर सिद्धांत (Rank-size Theory)

जॉर्ज जिफ ने वर्ष 1949 में श्रेणी–आकार नियम दिया। कुमारी (2014) के अनुसार यह किसी क्षेत्र में समग्र व्यवस्थाओं के विश्लेषण का माध्यम है। इसके अलावा यह विश्लेषण प्रक्रिया का ऐसा साधन है जो शहरी क्षेत्रों में श्रेणी (Rank) और जनसंख्या के संबंधों की बेहतर तरीके से व्याख्या करने में मदद करता है। शहरी केन्द्रों को उनकी जनसंख्या के आधार पर पदानुक्रम श्रेणी दी जाती है। जिफ का सूत्र (Formula) निम्नवत है:

Pr=P1/P2 n यहां Pr का अर्थ संबंधित शहर की जनसंख्या से है, P1 = सबसे बड़े शहर की जनसंख्या है और r = शहरों की सूची में संबंधित शहर की श्रेणी (Rank)

यह सैद्धांतिक वितरण बहुत बड़ी संख्या में छोटे कस्बों–समुदायों, अधिक संख्या में मध्यम आकार के नगरों और बेहद सीमित संख्या में महानगरों का निर्धारण करता है।

### 10.5.1 मूल अवधारणा (Basic Assumption)

1. किसी देश के सभी शहरों को उनके आकार के अनुसार घटते हुए क्रम में श्रेणी (Rank) में निर्धारित किया जायेगा।

2. शहरों का निर्धारण सबसे बड़े शहर के आधार पर किया जायेगा। उदाहरण के लिये:

- सबसे बड़े शहर की रैंक एक होगी
- सबसे बड़े शहर की जनसंख्या से आधी आबादी वाले शहर का दूसरा स्थान होगा
- सबसे बड़े शहर की

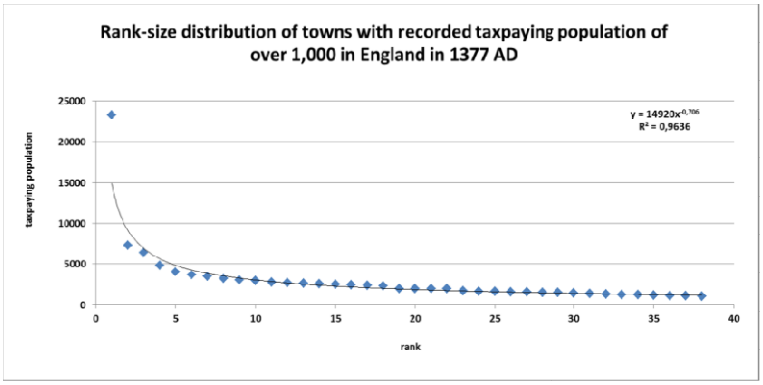

एक तिहाई जनसंख्या वाला शहर सूची में तीसरी श्रेणी के स्थान पर रहेगा। अन्य शहर भी इसी आधार पर सूची में श्रेणी पायेंगे।

3. किसी शहर की जनसंख्या को शहर की श्रेणी संख्या से गुणा किया जाये तो वह सबसे बड़े शहर के बराबर हो जायेगा। यह निगमन (Deduction) के सिद्धांत पर आधारित नहीं है, बल्कि विविधताओं और एकता के मूल सिद्धांत पर आधारित है।

### 10.5.2 आलोचना (Criticism)

यह सिद्धांत हालांकि कई शहरों पर लागू होता है, लेकिन वैश्विक स्तर पर यह पूरी तरह उपयोगी नहीं है। इसके प्रमुख कारण निम्न हैं:

1. यह नियम उन शहरों के लिये अधिक उपयोगी है, जो पहले से विकसित हैं और जिनका अस्तित्व लंबे समय से बना हुआ है।

2. शहर का आकार में बड़ा होना बेहद आवश्यक है।

3. शहर में आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक तौर पर स्थायित्व होना आवश्यक है।

4. स्टीवर्ट (1958) ने 72 देशों के अध्ययन के लिये इस नियम का इस्तेमाल किया और बताया कि जिफ के इस सिद्धांत में कई विसंगतियां हैं, क्योंकि यह सिर्फ प्रायोगिक परीक्षण करता है, बुनियादी और ठोस सैद्धांतिक प्रस्थापना नहीं कर पाता।

### 10.5.3 भारत में उपयोगिता (Applicability in India)

बीएल सिंह (1985), सरनजीत कुमार साहा (1987), किरन कुमारी (2014) ने बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश के अध्ययन के लिय इस सिद्धांत का प्रयोग किया। इन सभी ने पाया कि भारत के शहर मुख्यतः प्राथमिक ही हैं। पूर्वी भारत में शहरों की रैंक जिफ के फार्मूले के अनुसार निर्धारित रैंक से बिल्कुल अलग है।

### 10.5.4 निष्कर्ष (Conclusion)

2011 की जनगणना के अनुसार भारत 120 करोड़ की आबादी के साथ दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा देश है। मूलतः पारंपरिक रूप से ग्रामीण देश होने के कारण भारत की 68 फीसदी आबादी गांवों में रहती है। अब अगर विकसित देशों के साथ भारत की तुलना की जाती है तो यहां छोटे शहरों की संख्या महानगरों की अपेक्षा काफी अधिक मिलती है। उदाहरण के लिये भारत के कुल 605054 नगरों में से 338713 ऐसे हैं, जहां आबादी एक हजार से कम है। यह संख्या कुल नगरों की संख्या का 50 प्रतिशत है, लेकिन ये 15

करोड़ से अधिक आबादी का प्रतिनिधित्व करते हैं। सिर्फ 536 शहरी नगर ऐसे हैं, जहां जनसंख्या एक लाख या इससे अधिक है और यहां 22 करोड़ से अधिक आबादी रहती है। (Luckstead, Devadoss and Danforth, 2017). इस तरह भारत विकासशील देश होने के कारण अभी श्रेणी–आकार नियम के मानकों के लिये उपयुक्त नहीं है।

## 10.6 अभ्यास प्रश्न (Model Questions)

1. शहरों की अवस्थिति (Location) से आप क्या समझते हैं, विस्तार से बताएं।
2. शहरों की अवस्थिति के संदर्भ में प्रमुख सिद्धांतों की व्याख्या करें।
3. विभिन्न सिद्धांतों की व्याख्या के साथ भारत में इनकी उपयोगिता को भी स्पष्ट करें।

## 10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ (References)

Alexandersson Gunnar (2005), "The Industrial Structure of American Cities", Routleg publication, New York

Cooley, C.H. (1894), "the theory of transportation", The American Economic Association, volume -9, pg 1-148.

J.G.Kohl (1850), Kumari Kiran (2014), IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS, Volume 19, Issue 9, Ver. VI (Sep. 2014), PP 50-59, e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.

Jefferson ,Mark (1939),The Law of the Primate City, Geographical Review, Vol. 29, No. 2 , pp. 226-232 ,American Geographical Society

R. Wall and B. v.d. Knaap* , Netscape: Europe and the Evolving World City Network, GSWC research bulletain 186, Edited and posted on the web on 5th November 2005

Velapukar, B.G,Rathod H.B and Kalgapure ,A.A (2001),"A study of functional classification in latur district (M.S.), Shodh, Samiksha aur Mulyankan (International Research Journal)—ISSN-0974-2832 Vol. II, Issue-5 (Nov.08-Jan.09)